सूरतुल अनआम

तम्हीदी कलिमात

जैसा कि पहले भी ज़िक्र हो चुका है, हुज्म के ऐतबार से क़ुरान मजीद का दो तिहाई हिस्सा मक्की है, जबकि लगभग एक तिहाई हिस्सा मदनी सूरतों पर मुश्तमिल है। अलबत्ता क़ुरान हकीम में मक्की और मदनी सूरतों के जो सात ग्रुप हैं, उनमें से पहले ग्रुप में मक्की सूरत सिर्फ़ एक है यानि सूरतुल फ़ातिहा। यह सूरत अगरचे हुज्म के ऐतबार से बहुत ही छोटी (कुल सात आयात पर मुश्तमिल) है, मगर मायनवी ऐतबार से बहुत अज़्मत और फ़ज़ीलत की हामिल है। एक लिहाज़ से देखा जाये तो यह सूरत मक्की और मदनी तक़सीम से बहुत आला व अरफ़ा और बुलन्दतर है। बहरहाल मक्की और मदनी सूरतों के पहले ग्रुप में तो मक्की क़ुरान गोया बहुत ही थोडा है (सूरतुल फ़ातिहा की सूरत में), अलबत्ता दूसरे ग्रुप में दो बड़ी मक्की सूरतों यानि सूरतुल अनआम और सूरतुल आराफ़ का जोड़ा शामिल है। अब हम इस जोड़े की पहली सूरत यानि सूरतुल अनआम का मुताअला करने जा रहे हैं।

एक रिवायत के मुताबिक़ सूरतुल अनआम पूरी की पूरी ब-यक वक़्त, एक ही तंज़ील में नाज़िल हुई और हज़रत जिब्राइल अलै. सत्तर हज़ार फ़रिश्तों के जुलू में इस सूरत को लेकर उतरे। इस सूरत से मक्की और मदनी सूरतों का दूसरा ग्रुप शुरू हो रहा है जो चार सूरतों पर मुश्तमिल है। यह ग्रुप इस लिहाज़ से बहुत मुतवाज़िन है कि इसमें दो मक्की सूरतें (अल् अनआम और अल् आराफ़) और दो ही मदनी सूरतें (अल् अन्फ़ाल और अत्तौबा) हैं। मज़ामीन की मुनास्बत से यह चारों सूरतें भी दो-दो के जोड़ों में हैं, यानि एक जोड़ा मक्की सूरतों का जबकि दूसरा जोड़ा मदनी सूरतों का।

इससे पहले हम मदनी क़ुरान पढ़ रहे थे (सिवाय सूरतुल फ़ातिहा के), लेकिन अब मक्की क़ुरान का एक हिस्सा हमारे ज़ेरे मुताअला आ रहा है। सूरतुल बक़रह, सूरह आले इमरान, सूरतुन्निसा और सूरतुल मायदा (मदनियात) में मुनाफ़िक़ीन और यहूद व नसारा से बराहे रास्त ख़िताब था, लेकिन अब मक्की सूरतों (सूरतुल अनआम और सूरतुल आराफ़ में) मुशरिकीने अरब से गुफ्तगू है। सूरतुल आराफ़ में अहले किताब का ज़िक्र तो है, लेकिन यहाँ उनसे बराहे रास्त कोई ख़िताब या गुफ्तगू नहीं है।

मक्की और मदनी सूरतें अपने माहौल और पसमंज़र के ऐतबार से मज़ामीन व मौज़ूआत के दो अलग-अलग गुलदस्ते पेश करती हैं। इस लिहाज़ से मैंने मक्की और मदनी क़ुरान को दो अलग-अलग जन्नतों के नाम से मौसूम कर रखा है। क़ुरान हकीम में इरशाद है: {وَلِمَنْ خَافَ مَقَامَ رَبِّهٖ جَنَّتٰنِ} (अर्रहमान:46) "और जो कोई अपने रब के हुज़ूर खड़ा होने से डर गया उसके लिये दो जन्नतें होंगी।" क़ुरान मजीद की एक मक्की जन्नत है और दूसरी मदनी जन्नत। गोया क़ब्ल अज़ हम मदनी जन्नत की सेर कर रहे थे, अब हम मक्की जन्नत में दाख़िल हो रहे हैं। लिहाज़ा सूरतुल अनआम पढ़ते हुए आप बिल्कुल नया माहौल महसूस करेंगे। यह दोनों सूरतें (सूरतुल अनआम और सूरतुल आराफ़) चूँकि रसूल अल्लाह ﷺ के क़ियामे मक्का के तक़रीबन आखरी दौर में नाज़िल हुई थीं इसलिये इनमें मुशरिकीने अरब (बनी इस्माइल) पर बिल्कुल उसी अंदाज़ से इत्मामे हुज्जत किया गया है जैसे मदनी सूरतों में अहले किताब पर किया गया था। फिर इन सूरतों के मौज़ूआत के अन्दर बड़ी प्यारी तक़सीम मिलती है। मक्की सूरतों का अहमतरीन मज़मून 'ईमान' है यानि ईमान बिल्लाह, ईमान बिर्रिसालत और ईमान बिल आख़िरत, वगैरह। ईमान की तरफ़ बुलाने के लिये शाह वलीउल्लाह देहलवी रहि. की इस्तलाहात के मुताबिक़ क़ुरान हकीम में दो तरह से इस्तदलाल किया जाता है: التذكير بآلاءِ الله और التذكير بِأيَّامِ الله

التذكير بآلاءِ الله से मुराद अल्लाह तआला के अहसानात, उसकी नेअमतों, उसकी अज़्मत व क़ुदरत, उसकी आयाते आफ़ाक़िया व आयाते अन्फ़ुसिया वगैरह के हवाले से याद दिहानी और तज़कीर है। यानि अल्लाह तआला की ज़ात पर ईमान हमारे अन्दर पहले से बिल क़ुव्वा (potentialy) तो

मौजूद है, मगर यह फ़आल (active) नहीं है, सोया हुआ (dormant) है। इसे फ़आल (active) करने और जगाने के लिये अल्लाह की क़ुदरत, उसकी नेअमतों और अनफ़ुस (self) व आफ़ाक़ में उसकी निशानियों से इस्तदलाल करके याद दिहानी करायी जाती है, जिसको शाह वलीउल्लाह रहि. ने التذكير بآلاء الله का नाम दिया है।

दावत इलल ईमान के क़ुरानी इस्तदलाल का दूसरा पहलु या तरीक़ा शाह वलीउल्लाह रहि. के मुताबिक़ التذكير بِأيّام الله है, यानि अल्लाह के दिनों के हवाले से इस्तदलाल। अल्लाह के दिनों के ऐतबार से सबसे अहम और इबरतनाक वह दिन हैं जिनमें अल्लाह तआला ने बड़ी-बड़ी क़ौमों को तहस-नहस कर दिया। इस सिलसिले में अल्लाह की सुन्नत यह रही है कि अल्लाह तआला ने जब भी किसी क़ौम की तरफ़ कोई रसूल भेजा और उसने अपनी इम्कानी हद तक मेहनत व मशक्क़त की, क़ौम के अफ़राद को हक़ की दावत पहुँचा दी, हक़ को मुबरहन (confirm) कर दिया, उन पर हक़ का हक़ होना और बातिल का बातिल होना साबित हो गया और उस क़ौम के अफ़राद को अल्लाह का पैगाम पहुँचा कर उन पर इत्मामे हुज्जत कर दिया, मगर वह क़ौम फिर भी कुफ़्र पर अड़ी रही और उसने रसूल की दावत को रद्द कर दिया तो फिर उस क़ौम के साथ रिआयत नहीं बरती गयी और बेलाग फ़ैसला सुना दिया गया, यानि वह क़ौम ख़त्म कर दी गयी। जैसे क़ौमे नूह अलै. के साथ हुआ था, हज़रत नूह अलै. और आप अलै. के मादूदे चंद अहले ईमान साथी एक कश्ती पर महफ़ूज़ रहे, बाक़ी पूरे नौए इंसानी (जो उस वक़्त तक उतनी ही थी) नेस्तो नाबूद कर दी गयी। क़ौमे आद पूरी ख़त्म करके नस्यम मन्सिया कर (भुला) दी गयी, सिर्फ़ हज़रत हूद अलै. और उन पर ईमान लाने वाले चंद लोगों को बचाया गया। हज़रत सालेह अलै. और मुट्ठी भर अहले ईमान के अलावा क़ौमे समूद को भी बर्बाद कर दिया गया। इसी तरह क़ौमे शुएब अलै. को भी सफ़ा-ए-हस्ती से मिटा दिया गया। आमूरा और सदुम की बस्तियों को भी मल्या-मेट कर दिया गया, सिर्फ हज़रत लूत अलै. अपनी बेटियों के साथ वहाँ से निकल सके, बाक़ी पूरी क़ौम ख़त्म हो गयी। इसी तरह आले फ़िरऔन को भी ग़र्क़ कर दिया गया।

यहाँ पर रसूल और नबी की दावत के फ़र्क़ को समझना भी ज़रूरी है। रसूल की दावत का इन्कार करने की सूरत में मुताल्लिक़ा क़ौम तबाह व बर्बाद कर दी जाती है। उनके इस इन्कार से गोया साबित हो गया कि उनमें कोई खैर नहीं है, उनकी हैसियत महज़ उस झाड़-झंकाड़ की है जिसे जमा करके आग लगा दी जाती है। अल्लाह की तरफ़ से रसूल के आ जाने के बाद भी अगर किसी क़ौम की आँखें नहीं खुलती तो वह गोया ज़मीन का बोझ है, जिसका सफ़ाया ज़रूरी है। जबकि नबी का मामला यह नहीं होता। नबी की हैसियत ऐसी होती है जैसे औलिया अल्लाह हैं। जिसने उनकी बात मान ली उसको फ़ायदा हो गया, जिसने नहीं मानी उसको ज़ाती तौर पर नुक़सान हो जायेगा, लेकिन नबी के इन्कार से पूरी क़ौम की तबाही और हलाकत नहीं हुआ करती। आम औलिया अल्लाह और अम्बिया में फ़र्क़ यह है कि आम औलिया अल्लाह पर वही नहीं आती, जबकि अम्बिया पर वही आती थी।

इसके अलावा अज़्ली व अब्दी हक़ाइक़ भी अय्यामे अल्लाह में शामिल हैं, यानि अज़्ल (आदिकाल) में क्या वाक़िआत पेश आये, अब्द (अनन्तकाल) में क्या होगा, बाअसे बाद अल् मौत की तफ़सीलात, आलमे बरज़ख़ और आलमे आख़िरत के अहवाल, असहाबे जन्नत, असहाबे जहन्नम और असहाबे आराफ़ की कैफ़ियात वगैरह। इस लिहाज़ से सूरतुल अनआम और सूरतुल आराफ़ में मौज़ूआत की जो एक ख़ूबसूरत और मुतवाज़िन तक़सीम मिलती है वह इस तरह है कि सूरतुल अनआम में जगह-जगह التذكير بآلاء الله की तफ़सीलात हैं, जबकि सूरतुल आराफ़ का बड़ा हिस्सा التذكير بِأيّام الله पर मुश्तमिल है।

मक्की और मदनी सूरतों के मज़ामीन में जो बुनियादी फ़र्क़ है उसे एक दफ़ा फिर समझ लीजिये। मक्की सूरतों में ज़्यादातर गुफ्तुगू और बहस व नज़ा मुशरिकीने अरब के साथ है, लिहाज़ा इन सूरतों का असल मज़मून तौहीद है, यानि तौहीद का अस्बात, शिर्क की नफ़ी और ईमानियात का तज़किरा है। इन सूरतों में अहले ईमान से ख़िताब बहुत कम है, और है भी तो बराहे रास्त नहीं बल्कि बिल्वास्ता है। यानि रसूल अल्लाह ﷺ से वाहिद के सीगे में ख़िताब किया जाता है और आप ﷺ के ज़रिये से

मुस्लमान मुख़ातिब होते हैं। इन सूरतों में निफ़ाक़ का ज़िक्र शायद ही कहीं मिले, क्योंकि मक्की दौर में निफ़ाक़ का मर्ज़ मौजूद ही नहीं था। अहले मक्का के अन्दर किरदार की पुख्तगी थी, वह वादे के पक्के थे, जिस चीज़ को मानते थे पूरे ख़ुलूस व इख्लास के साथ मानते थे और ना मानने की सूरत में उनकी मुखालफ़त भी बहुत शदीद होती थी। उनमें चालबाज़ियाँ और रेशादवानियाँ नहीं थीं। इसके अलावा मक्की सूरतों में इंसानी अख्लाक़ियात पर बड़ा ज़ोर दिया गया है, मसलन सच बोलने की ताकीद, झूठ की हौसला शिकनी, बुख्ल की मज़म्मत, सख़ावत की तारीफ़, मसाकीन को खाना खिलाने पर ज़ोर और उन लोगों पर तनक़ीद जो दौलतमन्द होने के बावजूद कठोर दिल हैं। इन सूरतों का एक ख़ास और अहम मज़मून साबक़ा क़ौमों और रसूलों के हालात व वाक़िआत पर मुश्तमिल है जो बड़ी तफ़सील और तकरार के साथ आये हैं। इन सूरतों में इस सिलसिले में जो फ़लसफ़ा बार-बार बयान हुआ है उसका ज़िक्र "التذكير بِاَيَّامِ الله" के ज़िमन में पहले गुज़र चुका है। इस फ़लसफ़े का ख़ुलासा यह है कि रसूल का इन्कार करने वाली क़ौम को अज़ाबे इस्तेसाल (निराशा) से दो-चार होना पड़ता है। जैसे इरशाद हुआ: { فَقُطِعَ دَابِرُ الْقَوْمِ الَّذِيْنَ ظَلَمُوْا } (अल् अनआम:45) "पस जड़ काट कर रख दी गयी ज़ालिम क़ौम की।"

दूसरी तरफ़ मदनी सूरतों में ज़्यादातर ख़िताब या तो मुसलमानों से बहैसियत उम्मते मुस्लिमा है या फिर अहले किताब (यहूद व नसारा) से बहैसियत साबक़ा उम्मते मुस्लिमा, दावत के अंदाज़ में भी और मलामत के अंदाज़ में भी, तरगीब से भी और तरहीब से भी। इन सूरतों में निफ़ाक़ और मुनाफ़िक़ीन का ज़िक्र कसरत से है। औस और ख़ज़रज के जो लोग मदीना में आबाद थे वह अगरचे असल में अरब थे, लेकिन यहूदियों के ज़ेरे असर रहने की वजह से उनका मिज़ाज और किरदार बदल चुका था। जो अख्लाक़ी खराबियाँ किसी बिगड़ी हुई मुस्लमान उम्मत में होती हैं वह यहूदे मदीना में बतमाम व कमाल मौजूद थीं और उनके ज़ेरे असर औस व ख़ज़रज के लोगों में भी अख्लाक़ व किरदार की वैसी ही कमज़ोरियाँ किसी ना किसी दर्जे में पायी जाती थीं। यही वजह है कि मदीना में मुनाफ़िक़ीन का एक गिरोह पैदा हो गया था। चुनाँचे इन सूरतों का यह एक मुस्तक़िल मज़मून है। मदनी सूरतों का अहम तरीन मज़मून अहकामे शरीअत यानि जायज़ व नाजायज़, फ़राइज़, वाजिबात, अवामिर व नवाही (क्या करें और क्या नहीं) वगैरह की तफ़ासील हैं।

मक्की सूरतों के मज़ामीन की एक और तक़सीम भी समझ लें। मक्की और मदनी सूरतों के जिन सात ग्रुपों का ज़िक्र पहले हो चुका है उनके दूसरे और तीसरे ग्रुप में जो मक्की सूरतें (सूरतुल अनआम, सूरतुल आराफ़ और सूरह युनुस से लेकर सूरतुल मोमिनून तक मुसलसल चौदह सूरतें) शामिल हैं उनमें ईमानियात में से ज़्यादा ज़ोर रिसालत पर है, दरमियानी दो ग्रुप्स की सूरतों में ज़्यादा ज़ोर तौहीद पर है, जबकि आखरी दो ग्रुपों में शामिल मक्की सूरतों में ज़्यादा ज़ोर आख़िरत (बाअस बाद अल् मौत, जज़ा व सज़ा, जन्नत और जहन्नम) पर है।

اَعُوْذُ بِاللّٰهِ مِنَ الشَّيْطٰنِ الرَّجِيْمِ

بِسْمِ اللّٰهِ الرَّحْمٰنِ الرَّحِيْمِ

आयात 1 से 11 तक

اَلْحَمْدُ لِلّٰهِ الَّذِیْ خَلَقَ السَّمٰوٰتِ وَالْاَرْضَ وَجَعَلَ الظُّلُمٰتِ وَالنُّوْرَ ؕ ثُمَّ الَّذِیْنَ
كَفَرُوْا بِرَبِّهِمْ يَعْدِلُوْنَ ① هُوَ الَّذِیْ خَلَقَكُمْ مِّنْ طِيْنٍ ثُمَّ قَضٰۤى اَجَلًا ؕ وَاَجَلٌ
مُّسَمًّى عِنْدَهٗ ثُمَّ اَنْتُمْ تَمْتَرُوْنَ ② وَهُوَ اللّٰهُ فِی السَّمٰوٰتِ وَفِی الْاَرْضِ ؕ يَعْلَمُ
سِرَّكُمْ وَجَهْرَكُمْ وَيَعْلَمُ مَا تَكْسِبُوْنَ ③ وَمَا تَاْتِيْهِمْ مِّنْ اٰيَةٍ مِّنْ اٰيٰتِ رَبِّهِمْ
اِلَّا كَانُوْا عَنْهَا مُعْرِضِيْنَ ④ فَقَدْ كَذَّبُوْا بِالْحَقِّ لَمَّا جَآءَهُمْ ؕ فَسَوْفَ يَاْتِيْهِمْ
اَنْۢبٰٓؤُا مَا كَانُوْا بِهٖ يَسْتَهْزِءُوْنَ ⑤ اَلَمْ يَرَوْا كَمْ اَهْلَكْنَا مِنْ قَبْلِهِمْ مِّنْ قَرْنٍ
مَّكَّنّٰهُمْ فِی الْاَرْضِ مَا لَمْ نُمَكِّنْ لَّكُمْ وَاَرْسَلْنَا السَّمَآءَ عَلَيْهِمْ مِّدْرَارًا ۪ وَّجَعَلْنَا

الْاَنْهٰرَ تَجْرِیْ مِنْ تَحْتِهِمْ فَاَهْلَكْنٰهُمْ بِذُنُوْبِهِمْ وَاَنْشَاْنَا مِنْۢ بَعْدِهِمْ قَرْنًا
اٰخَرِیْنَ ۝٦ وَلَوْ نَزَّلْنَا عَلَیْكَ كِتٰبًا فِیْ قِرْطَاسٍ فَلَمَسُوْهُ بِاَیْدِیْهِمْ لَقَالَ الَّذِیْنَ
كَفَرُوْۤا اِنْ هٰذَاۤ اِلَّا سِحْرٌ مُّبِیْنٌ ۝٧ وَقَالُوْا لَوْلَاۤ اُنْزِلَ عَلَیْهِ مَلَكٌ ؕ وَلَوْ اَنْزَلْنَا مَلَكًا
لَّقُضِیَ الْاَمْرُ ثُمَّ لَا یُنْظَرُوْنَ ۝٨ وَلَوْ جَعَلْنٰهُ مَلَكًا لَّجَعَلْنٰهُ رَجُلًا وَّلَلَبَسْنَا عَلَیْهِمْ
مَّا یَلْبِسُوْنَ ۝٩ وَلَقَدِ اسْتُهْزِئَ بِرُسُلٍ مِّنْ قَبْلِكَ فَحَاقَ بِالَّذِیْنَ سَخِرُوْا مِنْهُمْ مَّا
كَانُوْا بِهٖ یَسْتَهْزِءُوْنَ ۝١٠ قُلْ سِیْرُوْا فِی الْاَرْضِ ثُمَّ انْظُرُوْا كَیْفَ كَانَ عَاقِبَةُ
الْمُكَذِّبِیْنَ ۝"

आयत 1

اَلْحَمْدُ لِلّٰهِ الَّذِیْ خَلَقَ السَّمٰوٰتِ وَالْاَرْضَ وَجَعَلَ الظُّلُمٰتِ وَالنُّوْرَ ؕ

"कुल तारीफ़ और तमाम शुक्र उस अल्लाह के लिये है जिसने आसमानों और ज़मीन की तख्लीक़ फ़रमायी और बनाया अंधेरों और उजाले को।"

यहाँ एक ख़ास नक्ता नोट कर लीजिये कि क़ुरान मजीद में तक़रीबन सात-सात पारों के वक़्फ़े से कोई सूरत "अलहम्दु" के लफ्ज़ से शुरू होती है। मसलन क़ुरान का आगाज़ {اَلْحَمْدُ لِلّٰهِ رَبِّ الْعٰلَمِیْنَ} से हुआ है, फिर सातवें पारे में सूरतल अनआम { اَلْحَمْدُ لِلّٰهِ الَّذِیْ خَلَقَ السَّمٰوٰتِ وَالْاَرْضَ وَجَعَلَ الظُّلُمٰتِ وَالنُّوْرَ ط } से शुरू हो रही है, इसके बाद पन्द्रहवें पारे में सूरतुल कहफ़ का आगाज़ {اَلْحَمْدُ لِلّٰهِ الَّذِیْۤ اَنْزَلَ عَلٰی عَبْدِهِ الْكِتٰبَ وَلَمْ یَجْعَلْ لَّهٗ عِوَجًا} से हो रहा है, फिर बाइसवें पारे में इकट्ठी दो सूरतें (सूरह सबा और सूरह फ़ातिर) {اَلْحَمْدُ لِلّٰهِ} से शुरू होती हैं। गोया क़ुरान का आखरी हिस्सा भी इसके अन्दर शामिल कर दिया गया है। इस तरह तक़रीबन एक जैसे वक़्फ़ों से सूरतों का आगाज़ अल्लाह तआला की हम्द और तारीफ़ से होता है।

दूसरी बात यहाँ नोट करने की यह है कि इस आयत में خَلَقَ और جَعَلَ दो एक जैसे अफ़आल माद्दी और ग़ैर माद्दी तख्लीक़ का फ़र्क़ वाज़ेह करने के लिये इस्तेमाल हुए हैं। आसमान और ज़मीन चूँकि माद्दी हक़ीक़तें हैं लिहाज़ा उनके लिये लफ्ज़ خَلَقَ आया है, लेकिन अँधेरा और उजाला इस तरह की माद्दी चीज़ें नहीं हैं (बल्कि अँधेरा तो कोई चीज़ या हक़ीक़त है ही नहीं, किसी जगह या किसी वक़्त में नूर के ना होने का नाम अँधेरा है)। इसलिये इनके लिये अलग फ़अल جَعَلَ इस्तेमाल हुआ है कि उसने ठहरा दिये, बना दिये, नुमाया कर दिये और मालूम हो गया कि यह उजाला है और यह अँधेरा है।

ثُمَّ الَّذِیْنَ كَفَرُوْا بِرَبِّهِمْ یَعْدِلُوْنَ ۝١

"फिर भी वह लोग जो अपने रब का कुफ़्र करते हैं उसके बराबर किये देते हैं (झूठे मअबूदों को)।"

यानि "یَعْدِلُوْنَ بِهٖ شُرَكَآءَهُمْ" कि इन नाम निहाद मअबूदों को अल्लाह के बराबर कर देते हैं, जिनको इन्होंने अल्लाह तआला की ज़ात, सिफ़ात या हक़ूक़ में शरीक समझा हुआ है, हालाँकि यह लोग अच्छी तरह जानते हैं कि आसमानों और ज़मीन का खालिक़ सिर्फ़ अल्लाह तआला है, ज़ुल्मात और नूर का बनाने वाला भी तन्हा अल्लाह तआला ही है, लेकिन फिर भी इन लोगों के हाल पर तअज्जुब है कि वह अल्लाह तआला के हमसर ठहराते हैं।

शिर्क के बारे में यह बात वाज़ेह रहनी चाहिये कि शिर्क सिर्फ़ यही नहीं है कि कोई मूर्ति ही सामने रख कर उसको सज्दा किया जाये, बल्कि और बहुत सी बातें और बहुत से नज़रियात भी शिर्क के ज़ुमरे (श्रेणी) में आते हैं। यह एक ऐसी बीमारी है जो हर दौर में भेस बदल-बदल कर आती है, चुनाँचे इसे पहचानने के लिये बहुत वुसअत नज़री की ज़रूरत है। मसलन आज के दौर का एक बहुत बड़ा शिर्क नज़रिया-ए-वतनियत है, जिसे अल्लामा इक़बाल ने सबसे बड़ा बुत क़रार दिया है, *"इन ताज़ा ख़ुदाओं में बड़ा सबसे वतन है!"* यह शिर्क की वह क़िस्म है जिससे हमारे पुराने दौर

के उल्मा भी वाक़िफ़ नहीं थे। इसलिये कि इस अंदाज़ में वतनियत का नज़रिया पहले दुनिया में था ही नहीं।

शिर्क के बारे में एक बहत सख्त आयत हम दो दफ़ा सूरतुन्निसा (आयत 48 और 116) में पढ़ चुके हैं: { اِنَّ اللّٰهَ لَا يَغْفِرُ اَنْ يُّشْرَكَ بِهٖ وَيَغْفِرُ مَا دُوْنَ ذٰلِكَ لِمَنْ يَّشَآءُ ۚ} "अल्लाह तआला इसे हरगिज़ माफ़ नहीं फ़रमायेगा कि उसके साथ शिर्क किया जाये, अलबत्ता इससे कमतर गुनाह जिसके लिये चाहेगा माफ़ फ़रमा देगा।" अल्लाह तआला शिर्क से कमतर गुनाहों में से जो चाहेगा, जिसके लिये चाहेगा, बगैर तौबा के भी बख्श देगा, अलबत्ता शिर्क से भी अगर इन्सान ताइब हो जाये तो यह भी माफ़ हो सकता है। सूरतुन्निसा की इस आयत की तशरीह के ज़िमन में तफ़सील से बात नहीं हई थी, इसलिये कि शिर्क दरअसल मदनी सूरतों का मज़मून नहीं है। शिर्क और तौहीद के यह मज़ामीन हवामीम (वह सूरतें जिनका आगाज़ 'हा मीम' से होता है) में तफ़सील के साथ बयान होंगे। वहाँ तौहीद अमली और तौहीद नज़री के बारे में भी बात होगी। सूरतल फ़ुरक़ान से सूरतल अहक़ाफ़ तक मक्की सूरतों का एक तवील सिलसिला है, जिसमें सूरह यासीन, सूरह फ़ातिर, सूरह सबा, सूरह सआद और हवामीम भी शामिल हैं। सूरह यासीन इस सिलसिले के अन्दर मरकज़ी हैसियत रखती है। इस सिलसिले में शामिल तमाम सूरतों का मरकज़ी मज़मून ही तौहीद है। बहरहाल यहाँ तफ़सील का मौक़ा नहीं है। जो हज़रात शिर्क के बारे में मज़ीद मालूमात हासिल करना चाहते हैं वह "हक़ीक़त-ओ-अक़साम-ए-शिर्क" के मौज़ू पर मेरी तक़ारीर समाअत फ़रमायें। (यह छ: घंटों की तक़ारीर हैं, जो इसी उन्वान के तहत अब किताबी शक्ल में भी दस्तयाब हैं) बड़े-बड़े जैद उल्मा ने इन तक़ारीर को पसंद किया है।

आयत 2

هُوَ الَّذِيْ خَلَقَكُمْ مِّنْ طِيْنٍ ثُمَّ قَضٰٓى اَجَلًا ۭ

"वही है जिसने तुम्हें बनाया है गारे से, फिर एक वक़्त मुक़र्रर कर दिया है।"

यानि हर शख्स जिसको अल्लाह ने दुनिया में भेजा है उसका इस दुनिया में रहने का एक वक़्त मुअय्यन है। इस अज्ल से मुराद उसकी मौत का वक़्त है।

وَاَجَلٌ مُّسَمًّى عِنْدَهٗ ثُمَّ اَنْتُمْ تَمْتَرُوْنَ ۝

"और एक और मुअय्यन वक़्त उसके पास मौजूद है, फिर भी तुम शक करते हो!"

यानि एक तो है इन्फ़रादी (individual) मौत का वक़्त, जैसे हज़ूर ﷺ ने फ़रमाया: ((مَنْ مَّاتَ فَقَدْ قَامَتْ قِيَامَتُهٗ))[1] "जिसको मौत आ गयी उसकी क़यामत तो क़ायम हो गयी।" जबकि एक इस दुनिया की इज्तमाई मौत का मुक़र्रर वक़्त है जिसका इल्म अल्लाह तआला ने ख़ास तौर पर अपने पास रखा है, किसी और को नहीं दिया।

आयत 3

وَهُوَ اللّٰهُ فِي السَّمٰوٰتِ وَفِي الْاَرْضِ ۭ

"और वही अल्लाह है आसमानों में भी और ज़मीन में भी।"

ऐसा नहीं है कि आसमानों का ख़ुदा कोई और हो ज़मीन का कोई और। हाँ फ़रिश्तों के मुख्तलिफ़ तबक़ात हैं। ज़मीन के फ़रिश्ते, फ़ज़ा के फ़रिश्ते और आसमानों के फ़रिश्ते मुअय्यन हैं। फिर हर आसमान के अलग फ़रिश्ते हैं। फिर मलाइका मुक़र्रबीन हैं। लेकिन ज़ाते बारी तआला तो एक ही है।

يَعْلَمُ سِرَّكُمْ وَجَهْرَكُمْ وَيَعْلَمُ مَا تَكْسِبُوْنَ ۝

"वह जानता है तुम्हारा छुपा भी और तुम्हारा ज़ाहिर भी, और वह जानता है जो कुछ (नेकी या बदी) तुम कमाते हो।"

आयत 4

وَمَا تَأْتِيهِمْ مِّنْ اٰيَةٍ مِّنْ اٰيٰتِ رَبِّهِمْ اِلَّا كَانُوْا عَنْهَا مُعْرِضِيْنَ ④

"और नहीं आती उनके पास कोई निशानी उनके रब की निशानियों में से, मगर यह उससे ऐराज़ करने वाले बने हुए हैं।"

हम नयी से नयी सूरतें भेज रहे हैं, नयी से नयी आयात नाज़िल कर रहे हैं, लेकिन इसके बावजूद यह लोग ऐराज़ पर तुले हुए हैं।

आयत 5

فَقَدْ كَذَّبُوْا بِالْحَقِّ لَمَّا جَآءَهُمْ ۭ

"तो अब इन्होंने झुठला दिया है हक़ को जबकि इनके पास आ चुका है।"

यहाँ "فَقَدْ كَذَّبُوْا" का अंदाज़ मुलाहिज़ा कीजिये और यह भी ज़हन में रखें कि यह मक्की दौर के आखरी ज़माने की सूरतें हैं। गोया हुज़ूर ﷺ को दावत देते हुए तक़रीबन बारह बरस हो चुके हैं। चुनाँचे अब तक भी जो लोग ईमान नहीं लाये वह अपनी ज़िद और हठधर्मी पर पूरे तौर से जम चुके हैं।

فَسَوْفَ يَاْتِيْهِمْ اَنْۢبٰۗؤُا مَا كَانُوْا بِهٖ يَسْتَهْزِءُوْنَ ⑤

"तो अब जल्द ही इनके पास आ जायेंगी उस चीज़ की ख़बरें जिसका यह मज़ाक उड़ाया करते थे।"

मुशरिकीने मक्का मज़ाक उड़ाते थे कि अज़ाब की धमकियाँ सुनते-सुनते हमें बारह साल हो गये हैं, यह सुन-सुन कर हमारे कान पक गये हैं कि अज़ाब आने वाला है, लेकिन अब तक कोई अज़ाब नहीं आया। लिहाज़ा यह खाली धौंस है, सिर्फ़ धमकी है। इस तरह वह लोग अल्लाह की आयात का इस्तेहज़ा (मज़ाक) करते थे। यहाँ दो टूक अंदाज़ में वाज़ेह किया जा रहा है कि जिन चीज़ों का यह लोग मज़ाक उड़ाया करते थे उनकी हक़ीक़त अनक़रीब इन पर खुलनी शुरू हो जायेगी। यूँ समझ लीजिये कि इस ग्रुप की पहली दो मक्की सूरतें (अल् अनआम और अल् आराफ़) मुशरिकीने अरब पर इत्मामे हुज्जत की सूरतें हैं और इनके बाद दो मदनी सूरतों (अल् अन्फ़ाल और अत्तौबा) में मुशरिकीने मक्का पर अज़ाबे मौऊद (वादा किये हुए अज़ाब) का बयान है। इसलिये कि उन लोगों पर अज़ाब की पहली क़िस्त ग़ज़वा-ए-बद्र में आयी थी। चुनाँचे सूरतुल अन्फ़ाल में ग़ज़वा-ए-बद्र के हालात व वाक़िआत पर तबसिरा है और इस अज़ाब की आखरी सूरत की तफ़सील सूरतुत्तौबा में बयान हुई है। इसी मुनास्बत से दो मक्की और दो मदनी सूरतों पर मुश्तमिल यह एक ग्रुप बन गया है।

आयत 6

اَلَمْ يَرَوْا كَمْ اَهْلَكْنَا مِنْ قَبْلِهِمْ مِّنْ قَرْنٍ مَّكَّنّٰهُمْ فِي الْاَرْضِ مَا لَمْ نُمَكِّنْ لَّكُمْ

"क्या इन्होंने देखा नहीं कि हमने इनसे पहले कितनी क़ौमों को हलाक कर दिया जिन्हें हमने ज़मीन में ऐसा तमक्कुन अता फ़रमाया था जैसा तुम्हें अता नहीं किया है"

ऐ क़ौमे क़ुरैश! ज़रा क़ौमे आद की शान व शौकत का तसव्वुर करो! वह लोग इसी जज़ीरा नुमाए अरब में आबाद थे। उस क़ौम की अज़्मत के क़िस्से अभी तक तुम्हें याद हैं। क़ौमे समूद भी बड़ी ताक़तवर क़ौम थी, अपने इलाक़े में उनका बड़ा रौब और दबदबा था। वह लोग पहाड़ों को तराश कर ऐसे आलीशान महल बनाते थे कि तुम लोग आज उस अहलियत (क्षमता) के बारे में सोच भी नहीं सकते हो। हमने उन क़ौमों को ज़मीन में वह क़ुव्वत व वुसअत दे रखी थी जो तुमको नहीं दी। तो जब हमने ऐसी अज़ीमुश्शान अक़वाम को तबाह व बर्बाद करके रख दिया तो तुम्हारी क्या हैसियत है?

وَاَرۡسَلۡنَا السَّمَآءَ عَلَيۡهِمۡ مِّدۡرَارًا ۙ وَّجَعَلۡنَا الۡاَنۡهٰرَ تَجۡرِىۡ مِنۡ تَحۡتِهِمۡ

"और हमने उन पर आसमान (से मेंह) बरसाया मूसलाधार और हमने नहरें बहा दीं उनके नीचे"

हमने उन पर ख़ूब बारिशें बरसायीं और उन्हें ख़ुशहाली अता की। बारिश का पानी बरकत वाला (مَآءً مُبَارَكًا) होता है जिससे ज़मीन की रुईदगी ख़ूब बढ़ती है, फ़सलों और अनाज की बहुतात होती है।

فَاَهۡلَكۡنٰهُمۡ بِذُنُوۡبِهِمۡ وَاَنۡشَاۡنَا مِنۡۢ بَعۡدِهِمۡ قَرۡنًا اٰخَرِيۡنَ ۝

"फिर उनको भी हमने उनके गुनाहों की पादाश में हलाक कर दिया और हमने उनके बाद एक और क़ौम को उठा खड़ा किया।"

मतलब यह है कि इस क़ानून के मुताबिक़ तुम किस खेत की मूली हो? क्या तुम समझते हो कि तुम्हारे मामले में अल्लाह तआला का क़ानून बदल जायेगा?

अगली आयत में इस सुरह मबारका का मरकज़ी मज़मून मज़कूर है। जिस दौर में यह सूरतें नाज़िल हुई थीं उस दौर में हुज़ूर ﷺ पर क़ुरैशे मक्का का बेइन्तहा दबाव था कि अगर आप ﷺ रसूल हैं और हमसे अपनी रिसालत मनवाना चाहते हैं तो कोई हिस्सी मौज्ज़ा हमें दिखाइये, जिसे हम अपनी आँखों से देखें। मुर्दा को ज़िन्दा कीजिये, आसमान पर चढ़ कर दिखाइये, मक्का में कोई बाग़ बना दीजिये, कोई नया चश्मा निकाल दीजिये, सोने-चाँदी का कोई महल बना दीजिये, आसमान से किताब लेकर आप ﷺ को उतरते हुए हम अपनी आँखों से देखें, वगैरह। उनकी तरफ़ से इस तरह के तक़ाज़े रोज़-ब-रोज़ ज़ोर पकड़ते जा रहे थे और अवामुन्नास में यह सोच बढ़ती जा रही थी कि हमारे सरदारों के यह मुतालबात ठीक ही तो हैं। हज़रत मूसा अलै. और हज़रत ईसा अलै. ने अपनी-अपनी क़ौम को कैसे-कैसे मौज्ज़े दिखाये थे! अगर आप ﷺ भी नबुवत के दावेदार हैं तो वैसे मौज्ज़ात क्यों नहीं दिखाते? जबकि दूसरी तरफ़ अल्लाह तआला का फ़ैसला यह था कि अब कोई ऐसा हिस्सी मौज्ज़ा नहीं दिखाया जायेगा। सबसे बड़ा मौज्ज़ा क़ुरान नाज़िल कर दिया गया है। जो शख्स हक़ का तालिब है उसके लिये इसमें हिदायत मौजूद है। इन हालात में हुज़ूर ﷺ की जाने मुबारक किस क़दर ज़ीक़ (तंगी) में आ चुकी थी। गोया चक्की के दो पाट थे जिनके दरमियान हुज़ूर ﷺ की ज़ाते गिरामी आ गयी थी। यह इस सूरत का मरकज़ी मज़मून है। आगे चल कर जब यह मौज़ू अपने नुक्ता-ए-उरूज (climax) को पहुँचता है तो इसे पढ़ते हुए वाक़िअतन रोंगटे खड़े हो जाने वाली कैफ़ियत पैदा हो जाती है।

आयत 7

وَلَوۡ نَزَّلۡنَا عَلَيۡكَ كِتٰبًا فِىۡ قِرۡطَاسٍ فَلَمَسُوۡهُ بِاَيۡدِيۡهِمۡ

"और अगर हमने उतार (भी) दी उन पर कोई किताब जो काग़ज़ों में लिखी हुई हो, फिर वह उसे छू भी लें अपने हाथों से"

لَقَالَ الَّذِيۡنَ كَفَرُوۡۤا اِنۡ هٰذَاۤ اِلَّا سِحۡرٌ مُّبِيۡنٌ ۝

"तब भी यह काफ़िर यही कहेंगे कि यह तो एक खुला जादू है।"

वह ऐसे मौज्ज़ात को देख कर भी यही कहेंगे कि हमारी आँखों पर जादू का असर हो गया है, हमारी नज़रबंदी कर दी गयी है। जिसने नहीं मानना उसने सरीह मौज्ज़ात देख कर भी नहीं मानना। अलबत्ता अगर हम ऐसा मौज्ज़ा दिखा देंगे तो इनकी मोहलत ख़त्म हो जायेगी और फिर उसके बाद फ़ौरन अज़ाब आ जायेगा। अभी हमारी रहमत का तक़ाज़ा यह है कि इन्हें मज़ीद मोहलत दी जाये। अभी इस दूध को मज़ीद बिलोया जाना मक़सूद है कि शायद इसमें से कुछ मज़ीद मक्खन निकल आये। इसलिये हिस्सी मौज्ज़ा नहीं दिखाया जा रहा।

आयत 8

وَقَالُوْا لَوْلَآ اُنْزِلَ عَلَيْهِ مَلَكٌ ۭ وَلَوْ اَنْزَلْنَا مَلَكًا لَّقُضِيَ الْاَمْرُ ثُمَّ لَا يُنْظَرُوْنَ ۝

और वह कहते हैं क्यों नहीं उतरा इन पर (ऐलानिया) कोई फ़रिश्ता? और अगर हमने फ़रिश्ता उतार दिया होता तो फिर फ़ैसला ही चुका दिया जाता, फिर इन्हें कोई मोहलत ना मिलती।"

यानि इस दुनिया की ज़िन्दगी में यह जो सारी आज़माइश है वह तो गैब के परदे ही की वजह से है। अगर गैब का पर्दा उठ जाये तो फिर इम्तिहान ख़त्म हो जाता है। उसके बाद तो फिर नतीजे का ऐलान करना ही बाक़ी रह जाता है।

आयत 9

وَلَوْ جَعَلْنٰهُ مَلَكًا لَّجَعَلْنٰهُ رَجُلًا وَّلَلَبَسْنَا عَلَيْهِمْ مَّا يَلْبِسُوْنَ ۝

"और अगर हम इसको फ़रिश्ता बनाते तब भी आदमी ही की शक्ल में बनाते और उन्हें हम उसी शुबह में डाल देते जिस शुबह में यह अब मुब्तला हैं।"

अगर बजाये मुहम्मद रसूल अल्लाह ﷺ के किसी फ़रिश्ते को नबी बना कर भेजा जाता तो उसे भी हमने इंसानी शक्ल में ही भेजना था, क्योंकि भेजना जो इंसानों के लिये था। इस तरह जो अल्तबास (भ्रम) इन्हें इस वक़्त हो रहा है वह अल्तबास उस वक़्त भी हो जाता। हाँ अगर फ़रिश्तों में भेजना होता तो ज़रूर कोई फ़रिश्ता ही भेजते। हदीसे जिब्राईल अलै. के हवाले से हमें मालूम है कि हज़रत जिब्राईल अलै. नबी अकरम ﷺ के पास इंसानी शक्ल में आये थे, पास बैठे हुए लोगों को भी पता ना चला कि यह जिब्राईल अलै. हैं, वह उन्हें इन्सान ही समझे।

आयत 10

وَلَقَدِ اسْتُهْزِئَ بِرُسُلٍ مِّنْ قَبْلِكَ

"और (ऐ नबी ﷺ!) आपसे पहले भी रसूलों का (इसी तरीक़े से) मज़ाक़ उड़ाया गया"

नबी अकरम ﷺ को तसल्ली दी जा रही है कि आप दिल गिरफ़्ता ना हों, यह ऐसा पहली मरतबा नहीं हो रहा। आप ﷺ से पहले भी अम्बिया अलै. के साथ ऐसा ही सुलूक होता रहा है। जैसे सूरतुल अहक़ाफ़ (आयत 9) में आप ﷺ की ज़बान से कहलवाया गया: {قُلْ مَا كُنْتُ بِدْعًا مِّنَ الرُّسُلِ} यानि आप ﷺ इन्हें कह दीजिये कि मैं कोई अनोखा रसूल नहीं हूँ, मुझसे पहले भी बहुत से रसूल आ चुके हैं। आयत ज़ेरे नज़र में अल्लाह तआला ख़ुद फ़रमा रहे हैं कि इससे पहले भी अम्बिया व रुसुल अलै. के साथ उनकी क़ौमें इसी तरह गैर संजीदगी का मुज़ाहिरा करती रही हैं। हज़रत नूह अलै. साढ़े नौ सौ बरस तक ऐसा सब कुछ झेलते रहे।

فَحَاقَ بِالَّذِيْنَ سَخِرُوْا مِنْهُمْ مَّا كَانُوْا بِهٖ يَسْتَهْزِءُوْنَ ۝

"फिर घेर लिया उन लोगों में से उनको जो मज़ाक़ उड़ाते थे उसी चीज़ ने जिसका वह मज़ाक़ उड़ाते थे।"

अगरचे आप ﷺ की ख्वाहिश है कि इन्हें कोई मौज्ज़ा दिखा दिया जाये ताकि इनकी ज़बानें तो बंद हो जायें, लेकिन अभी ऐसा करना हमारी हिकमत का तक़ाज़ा नहीं है, अभी इनकी मोहलत का वक़्त ख़त्म नहीं हुआ। यानि यह सारा मामला वक़्त के तअय्युन का है, time factor ही अहम है, जिसका फ़ैसला मशीयते इलाही के मुताबिक़ होना है।

आयत 11

قُلْ سِيْرُوْا فِي الْاَرْضِ ثُمَّ انْظُرُوْا كَيْفَ كَانَ عَاقِبَةُ الْمُكَذِّبِيْنَ ﴿١١﴾

"(ऐ नबी ﷺ!) इनसे कहिये कि घूमो-फिरो ज़मीन में फिर देखो कैसा अंजाम हुआ झुठलाने वालों का!"

तुम्हारे इस जज़ीरा नुमाए अरब में ही क़ौमे आद और क़ौमे समूद आबाद थीं। और जब तुम शाम की तरफ़ सफ़र करते हो तो वहाँ रास्ते में क़ौमे मदयन के मसकन (आवास) भी हैं और क़ौमे लूत के शहरों के आसार भी। यह सब तुम अपनी आँखों से देखते हो, फिर तुम उनके अंजाम से इबरत क्यों नहीं पकड़ते?

आयात 12 से 20 तक

قُلْ لِّمَنْ مَّا فِي السَّمٰوٰتِ وَالْاَرْضِ ؕ قُلْ لِّلّٰهِ ؕ كَتَبَ عَلٰى نَفْسِهِ الرَّحْمَةَ ؕ لَيَجْمَعَنَّكُمْ اِلٰى يَوْمِ الْقِيٰمَةِ لَا رَيْبَ فِيْهِ ؕ اَلَّذِيْنَ خَسِرُوْۤا اَنْفُسَهُمْ فَهُمْ لَا يُؤْمِنُوْنَ ﴿١٢﴾ وَلَهٗ مَا سَكَنَ فِي الَّيْلِ وَالنَّهَارِ ؕ وَهُوَ السَّمِيْعُ الْعَلِيْمُ ﴿١٣﴾ قُلْ اَغَيْرَ اللّٰهِ اَتَّخِذُ وَلِيًّا فَاطِرِ السَّمٰوٰتِ وَالْاَرْضِ وَهُوَ يُطْعِمُ وَلَا يُطْعَمُ ؕ قُلْ اِنِّيْۤ اُمِرْتُ اَنْ اَكُوْنَ اَوَّلَ مَنْ اَسْلَمَ وَلَا تَكُوْنَنَّ مِنَ الْمُشْرِكِيْنَ ﴿١٤﴾ قُلْ اِنِّيْۤ اَخَافُ اِنْ عَصَيْتُ رَبِّيْ عَذَابَ يَوْمٍ عَظِيْمٍ ﴿١٥﴾ مَنْ يُّصْرَفْ عَنْهُ يَوْمَىِٕذٍ فَقَدْ رَحِمَهٗ ؕ وَذٰلِكَ الْفَوْزُ الْمُبِيْنُ ﴿١٦﴾ وَاِنْ يَّمْسَسْكَ اللّٰهُ بِضُرٍّ فَلَا كَاشِفَ لَهٗۤ اِلَّا هُوَ ؕ وَاِنْ يَّمْسَسْكَ بِخَيْرٍ فَهُوَ عَلٰى كُلِّ شَيْءٍ قَدِيْرٌ ﴿١٧﴾ وَهُوَ الْقَاهِرُ فَوْقَ عِبَادِهٖ ؕ وَهُوَ الْحَكِيْمُ الْخَبِيْرُ ﴿١٨﴾ قُلْ اَيُّ شَيْءٍ اَكْبَرُ شَهَادَةً ؕ قُلِ اللّٰهُ ۙ شَهِيْدٌۢ بَيْنِيْ وَبَيْنَكُمْ ۫ وَاُوْحِيَ اِلَيَّ هٰذَا الْقُرْاٰنُ لِاُنْذِرَكُمْ بِهٖ وَمَنْۢ بَلَغَ ؕ اَئِنَّكُمْ لَتَشْهَدُوْنَ اَنَّ مَعَ اللّٰهِ اٰلِهَةً اُخْرٰى ؕ قُلْ لَّاۤ اَشْهَدُ ۚ قُلْ اِنَّمَا هُوَ اِلٰهٌ وَّاحِدٌ وَّاِنَّنِيْ بَرِيْٓءٌ مِّمَّا تُشْرِكُوْنَ ﴿١٩﴾ اَلَّذِيْنَ اٰتَيْنٰهُمُ الْكِتٰبَ يَعْرِفُوْنَهٗ كَمَا يَعْرِفُوْنَ اَبْنَآءَهُمُ ؕ اَلَّذِيْنَ خَسِرُوْۤا اَنْفُسَهُمْ فَهُمْ لَا يُؤْمِنُوْنَ ﴿٢٠﴾

आयत 12

قُلْ لِّمَنْ مَّا فِي السَّمٰوٰتِ وَالْاَرْضِ ؕ قُلْ لِّلّٰهِ ؕ

"इनसे पूछिये किसका है जो कुछ है आसमानों और ज़मीन में? कह दीजिये अल्लाह ही का है!"

दरअसल यह कहना इस ऐतबार से है कि मुशरिकीने मक्का भी यह मानते थे कि इस कायनात का मालिक और ख़ालिक़ अल्लाह है। वह यह नहीं कहते थे कि लात, मनात, उज्ज़ा और हुबल ने दुनिया को पैदा किया है। वह ऐसे अहमक़ नहीं थे। अपने उन मअबूदों के बारे में उनका ईमान था {هٰٓؤُلَآءِ شُفَعَآؤُنَا عِنْدَاللّٰه} कि यह अल्लाह की जनाब में हमारी शफ़ाअत करेंगे। सूरह अनकबूत में अल्फ़ाज़ आये हैं: {وَلَئِنْ سَاَلْتَهُمْ مَّنْ خَلَقَ السَّمٰوٰتِ وَالْاَرْضَ وَسَخَّرَ الشَّمْسَ وَالْقَمَرَ لَيَقُوْلُنَّ اللّٰهُ} (आयत:61) "(ऐ नबी ﷺ) अगर आप इनसे पूछेंगे कि आसमान और ज़मीन किसने बनाये हैं और सूरज और चाँद को किसने मुसख्खर किया है? तो यह लाज़िमन कहेंगे कि अल्लाह ने!" चुनाँचे वह लोग कायनात की तख्लीक़ को अल्लाह ही की तरफ़ मंसूब करते थे और उसका मालिक भी अल्लाह ही को समझते थे। अलबत्ता उनका शिर्किया अक़ीदा यह था कि हमारे यह मअबूद अल्लाह के बड़े चहेते और लाड़ले हैं, अल्लाह के यहाँ इनके बड़े ऊँचे मरातिब हैं, यह हमें अल्लाह की पकड़ से छुड़वा लेंगे।

كَتَبَ عَلٰى نَفْسِهِ الرَّحْمَةَ ؕ

"उसने अपने ऊपर रहमत को लाज़िम कर लिया है।"

यह लज़ूम (अनिवार्यता) उसने ख़ुद अपने ऊपर किया है, हम उस पर कोई शय लाज़िम क़रार नहीं दे सकते।

لَيَجْمَعَنَّكُمْ اِلٰى يَوْمِ الْقِيٰمَةِ لَا رَيْبَ فِيْهِ ؕ

"वह तुम्हें लाज़िमन जमा करके ले जायेगा क़यामत के दिन की तरफ़ जिसमें कोई शक नहीं है।"

اَلَّذِيْنَ خَسِرُوْۤا اَنْفُسَهُمْ فَهُمْ لَا يُؤْمِنُوْنَ ﴿۱۲﴾

"जो लोग अपने आपको ख़सारे में डालने का फ़ैसला कर चुके हैं वही हैं जो ईमान नहीं लायेंगे।"

यहाँ एक गौरतलब नुक्ता यह है कि क़यामत का दिन तो बड़ा सख्त होगा, जिसमें अहतसाब होगा, सज़ा मिलेगी। फिर यहाँ रहमत के लज़ूम का ज़िक्र किस हवाले से आया है? इसका मफ़हूम यह है कि रहमत का ज़हूर क़यामत के दिन ख़ास अहले ईमान के लिये होगा। इस लिहाज़ से यहाँ खुशखबरी है अम्बिया व रुसुल के लिये, सिद्दीक़ीन, शुहदा और सालेहीन के लिये, और अहले ईमान के लिये, कि जो सख्तियाँ तुम झेल रहे हो, जो मुसीबतें तुम लोग बर्दाश्त कर रहे हो, इस वक़्त दुनिया में जो तंगी तुम्हें हो रही है, इसके बदले में तुम्हारे लिये अल्लाह तआला की रहमत का वह वक़्त आकर रहेगा जब तुम्हारी इन ख़िदमात का भरपूर सिला मिलेगा, तुम्हारी इन सारी सरफ़रोशियों के लिये अल्लाह तआला की तरफ़ से सरे महशर क़द्र अफज़ाई का ऐलान होगा। कभी तुम्हें यह ख्याल ना आने पाये कि हम तो अपना सब कुछ यहाँ अल्लाह के लिये लुटा बैठे हैं, पता नहीं वह दिन आयेगा भी या नहीं, पता नहीं कोई मुलाक़ात होगी भी या नहीं, पता नहीं यह सब कुछ वाक़ई हक़ है भी या नहीं! इन वसवसों को अपने दिलो दिमाग से दूर रखो, और खुशखबरी सुनो: {كَتَبَ عَلٰى نَفْسِهِ الرَّحْمَةَ ۬ لَيَجْمَعَنَّكُمْ اِلٰى يَوْمِ الْقِيٰمَةِ لَا رَيْبَ فِيْهِ ۭ}।

आयत 13

وَلَهٗ مَا سَكَنَ فِي الَّيْلِ وَالنَّهَارِ ۭ وَهُوَ السَّمِيْعُ الْعَلِيْمُ ﴿۱۳﴾

"और उसी का है जो कुछ साकिन हो जाता है रात में और (मुतहर्रिक हो जाता है) दिन के वक़्त। और वह सब कुछ सुनने वाला, जानने वाला है।"

यहाँ سَكَنَ के मुक़ाबिल लफ्ज़ تَحَرَّكَ महज़ूफ़ है। ऐसे मक़ाबिल के अल्फ़ाज़ को आम तौर पर क़ुरान मजीद में हज़फ़ कर दिया जाता है ताकि आदमी खुद समझे। जैसे यहाँ रात के साथ सुकून का लफ्ज़ आया है और इसके साथ ही दिन का ज़िक्र कर दिया गया है, जबकि दिन का वक़्त सुकून के लिये नहीं है। लिहाज़ा बात इस तरह वाज़ेह हो जाती है: {وَلَهٗ مَا سَكَنَ فِي الَّيْلِ وَمَا تَحَرَّكَ فِى النَّهَارِ} "और उसी का है जो कुछ रात के वक़्त सुकून पकड़ता है और दिन के वक़्त मुतहर्रिक हो जाता है।"

आयत 14

قُلْ اَغَيْرَ اللّٰهِ اَتَّخِذُ وَلِيًّا فَاطِرِ السَّمٰوٰتِ وَالْاَرْضِ

"इनसे कहिये क्या मैं अल्लाह के सिवा किसी और को अपना वली बना लूँ, जो आसमानों और ज़मीन का पैदा करने वाला है?"

तुम भी मानते हो कि ज़मीन व आसमान और पूरी कायनात का पैदा करने वाला वही अल्लाह है, तो ऐसे ख़ालिक़, मालिक, मौला और कारसाज़ को छोड़ कर क्या मैं किसी और को अपना वली और हिमायती बना लूँ? यह तो बड़ी हिमाकत की बात है, बड़े घाटे का सौदा है।

وَهُوَ يُطْعِمُ وَلَا يُطْعَمُ ؕ

"और वह खाना खिलाता है, उसे खिलाया नहीं जाता।"

तुम बुतों के सामने नज़रें और हलवे मांडे पेश करते हो। अल्लाह को तो ऐसी चीज़ों की कोई ज़रूरत नहीं। वह तो पूरी मख्लूक़ का रब है, सबको खिलाता है, सबका राज़िक़ है।

قُلْ اِنِّيْٓ اُمِرْتُ اَنْ اَكُوْنَ اَوَّلَ مَنْ اَسْلَمَ

"(ऐ नबी ﷺ! डंके की चोट) कह दीजिये मुझे तो हुक्म हुआ है कि सबसे पहला फ़रमाबरदार मैं ख़ुद बनूँ"

وَلَا تَكُوْنَنَّ مِنَ الْمُشْرِكِيْنَ ۝١٤

"और तुम हरगिज़ ना होना मुशरिकीन में से।"

आयत 15

قُلْ اِنِّيْٓ اَخَافُ اِنْ عَصَيْتُ رَبِّيْ عَذَابَ يَوْمٍ عَظِيْمٍ ۝١٥

"कह दीजिये कि अगर मैं अपने परवरदिगार की नाफ़रमानी करूँ तो मुझे खौफ़ है एक बड़े (हौलनाक) दिन के अज़ाब का।"

मैं भी अल्लाह की इबादत से मुस्तग़ना नहीं हूँ, मैं भी अल्लाह का बंदा हूँ। जैसे मैं आप लोगों से कह रहा हूँ कि अल्लाह कि बन्दगी करो, वैसे ही मुझे भी हुक्म है, मुझे भी अल्लाह की बन्दगी करनी है। जैसे मैं तुमसे कह रहा हूँ कि अल्लाह की फ़रमाबरदारी करो, वैसे ही मुझे भी उसकी फ़रमाबरदारी करनी है। और जैसे मैं तुम्हें बता रहा हूँ कि अगर अल्लाह की नाफ़रमानी करोगे तो पकड़े जाओगे, ऐसे ही मैं भी अगर बिलफ़र्ज़ नाफ़रमानी करूँगा तो मुझे भी अल्लाह के अज़ाब का अन्देशा है। यह बहुत अहम आयात हैं, इन पर बहुत गौरो फ़िक्र करने की ज़रूरत है।

आयत 16

مَنْ يُّصْرَفْ عَنْهُ يَوْمَىِٕذٍ فَقَدْ رَحِمَهٗ ۭ وَذٰلِكَ الْفَوْزُ الْمُبِيْنُ ۝١٦

"जो शख्स उस दिन उस (अज़ाब) से दूर रखा गया तो उस पर अल्लाह की बड़ी रहमत होगी, और यही होगी वाज़ेह कामयाबी।"

दुनिया की बड़ी से बड़ी कामयाबियाँ उस दिन की कामयाबी के सामने हेच (कुछ नहीं) हैं। उस कामयाबी के सामने दुनयवी दौलत, वजाहत, इज़्ज़त, शोहरत, इक़तदार वगैरह सारी चीज़ें आरज़ी और फ़ानी हैं। असल الْفَوْزُ الْمُبِيْن तो आख़िरत की कामयाबी है।

आयत 17

وَاِنْ يَّمْسَسْكَ اللّٰهُ بِضُرٍّ فَلَا كَاشِفَ لَهٗٓ اِلَّا هُوَ ۚ

"और अगर तुम्हें अल्लाह की तरफ़ से पहुँचा दी जाये कोई तकलीफ़ तो कोई नहीं है उसका दूर करने वाला सिवाय उसके।"

अब यह तौहीद का बयान है। तकलीफ़ में पुकारो तो उसी को पुकारो, किसी और को ना पुकारो। { وَلَا تَدْعُ مَعَ اللّٰهِ اِلٰـهًا اٰخَرَ ۘ } (अल् क़सस:88)। वही मुश्किल कुशा है, वही हाजत रवा है और वही तुम्हारी तकलीफ़ों को रफ़ा करने वाला है।

وَاِنْ يَّمْسَسْكَ بِخَيْرٍ فَهُوَ عَلٰي كُلِّ شَيْءٍ قَدِيْرٌ ۝١٧

"और अगर उसकी तरफ़ से कोई खैर तुम्हें पहुँचा दी जाये तो यक़ीनन वह हर चीज़ पर क़ादिर है।"

कोई उसका हाथ रोकने वाला नहीं है। उसे अपने किसी बन्दे के साथ भलाई करने के लिये किसी और से मंज़ूरी लेने की हाजत नहीं होती। वह तो عَلٰي كُلِّ شَيْءٍ قَدِيْرٌ है।

आयत 18

وَهُوَ الْقَاهِرُ فَوْقَ عِبَادِهٖ وَهُوَ الْحَكِيْمُ الْخَبِيْرُ ﴿١٨﴾

"और वह अपने बन्दों पर पूरी तरह से ग़ालिब है, और वह है कमाले हिकमत वाला और हर शय की ख़बर रखने वाला।"

वह ज़ोरआवर है, उसका इक़तदार पूरी कायनात पर मुहीत है, उसकी मख्लूक़ात में से कोई भी उसके क़ाबू से बाहर नहीं है।

आयत 19

قُلْ اَیُّ شَیْءٍ اَكْبَرُ شَهَادَةً قُلِ اللّٰهُ ۙ شَهِیْدٌۢ بَیْنِیْ وَبَیْنَكُمْ ۫

"(ऐ नबी ﷺ! इनसे) कहिये कौनसी चीज़ है जो गवाही में सबसे बड़ी है? (फिर ख़ुद ही) कहिये कि अल्लाह (की गवाही सबसे बड़ी है)! वह मेरे और तुम्हारे माबैन गवाह है।"

وَاُوْحِیَ اِلَیَّ هٰذَا الْقُرْاٰنُ لِاُنْذِرَكُمْ بِهٖ وَمَنْۢ بَلَغَ ؕ

"और मेरी जानिब यह क़ुरान वही किया गया है ताकि मैं तुम्हें भी ख़बरदार कर दूँ इसके ज़रिये से और उसको भी जिस तक यह पहुँच जाये।"

यह गोया सूरत के उमूद (pillar) का अक्स (पिक्चर) है। मैं पहले बता चुका हूँ कि इस सूरत का उमूद यह मज़मून है कि मुशरिकीन के मुतालबे पर हम किसी क़िस्म का हिस्सी मौज्ज़ा नहीं दिखाएँगे, क्योंकि असल मौज्ज़ा यह क़ुरान है। ऐ नबी ﷺ हमने आप पर यह क़ुरान उतार दिया, आप तब्शीर, इन्ज़ार और तज़कीर के फ़राइज़ इसी क़ुरान के ज़रिये से सरअंजाम दें। जिसके अन्दर सलाहियत है, जो तालिबे हक़ है, जो हिदायत चाहता है, वह हिदायत पा लेगा। बाक़ी जिसके दिल में कजी है, टेढ़ है, तअस्सुब, ज़िद और हठधर्मी है, हसद और तकब्बुर है, आप ﷺ उसको दस लाख मौज्ज़े दिखा दीजिये वह नहीं मानेगा। क्या उल्माये यहूद हज़रत मसीह अलै. के मौज्ज़े देख कर आप अलै. पर ईमान ले आये थे? कैसे-कैसे मौज्ज़े थे जो उन्हें दिखाये गये! आप अलै. गारे से परिन्दे की शक्ल बना कर फूँक मरते और वह उड़ता हुआ परिन्दा बन जाता। यह अहयाए मौता और खल्क़े हयात तो वह चीज़ें हैं जो बिलख़ुसूस अल्लाह तआला के अपने (exclusive) अफ़आल हैं। अल्लाह तआला ने हज़रत ईसा अलै. के हाथ पर यह निशानियाँ भी ज़ाहिर कर दीं, लेकिन उन्हें देख कर कितने लोगों ने माना? लिहाज़ा हम ऐसा कोई मौज्ज़ा नहीं दिखाएँगे। अलबत्ता आप ﷺ मेहनत और कोशिश करते जाइये, दावत व तब्लीग़ करते जाइये।

यहाँ पर लफ्ज़ بِهٖ ख़ास तौर पर नोट कीजिये। फ़रमाया कि यह क़ुरान मेरी तरफ़ वही किया गया है ताकि मैं ख़बरदार कर दूँ तुम्हें इसके ज़रिये से (بِهٖ) यानि मेरा इन्ज़ार क़ुरान के ज़रिये से है। मज़ीद फ़रमाया: {وَمَنْۢ بَلَغَ} "और जिस तक यह पहुँच जाये।" इसका मतलब यह है कि मैं तो तुम्हें पहुँचा रहा हूँ, अब जो उम्मत बनेगी वह आगे पहुँचायेगी। जिस तक यह क़ुरान पहुँच गया उस तक रसूल अल्लाह ﷺ का इन्ज़ार पहुँच गया, और यह सिलसिला ता क़यामत चलेगा, क्योंकि हुज़ूर ﷺ अपने ही ज़माने के लिये रसूल बन कर नहीं आये थे, आप ﷺ तो ता क़यामत तक रसूल हैं। यह आप ﷺ ही की रिसालत का दौर चल रहा है। जो इन्सान भी क़यामत तक दुनिया में आयेगा वह आप ﷺ की उम्मते दावत में शामिल है, उस तक क़ुरान का पैगाम पहुँचाना अब उम्मते मुहम्मद ﷺ के ज़िम्मे है।

अब आ रहा है एक मुतजस्साना सवाल (searching question)। जैसा कि मैंने इब्तदा में अर्ज़ किया था, जब आपको मालूम हो कि आपका मुखालिफ़ जो कुछ कह रहा है वह अपने दिल के यक़ीन से नहीं कह रहा है, बल्कि ज़िद और हठधर्मी की बुनियाद पर कह रहा है, तो फिर उसकी आँखों

में आँखें डाल कर मुतजस्साना (searching) अंदाज़ में उससे सवाल किया जाता है। यही अंदाज़ यहाँ इख़्तियार किया गया है: फ़रमाया:

اَئِنَّكُمْ لَتَشْهَدُوْنَ اَنَّ مَعَ اللّٰهِ اٰلِهَةً اُخْرٰىؕ

"क्या वाक़ई तुम लोग गवाही देते हो कि अल्लाह के साथ कुछ और भी इलाह हैं?"

قُلْ لَّاۤ اَشْهَدُۚ

"कह दीजिये (अगर तुम यह गवाही देते भी हो तो) मैं इसकी गवाही नहीं दे सकता।"

तुम ऐसा कहो तो कहो, लेकिन मेरे लिये यह मुमकिन नहीं है कि ऐसी ख़िलाफ़े अक़्ल और ख़िलाफ़े फ़ितरत बात कह सकूँ।

قُلْ اِنَّمَا هُوَ اِلٰهٌ وَّاحِدٌ وَّاِنَّنِیْ بَرِیْٓءٌ مِّمَّا تُشْرِكُوْنَ۝۱۹

"कह दीजिये वह तो बस एक ही इलाह है और मैं बरी हूँ उन तमाम चीज़ों से जिन्हें तुम शरीक ठहरा रहे हो।"

वाज़ेह रहे कि इस सूरत का ज़माना-ए-नुज़ूल मक्की दौर का आखिर ज़माना है। उस वक़्त तक मदीना में भी ख़बरें पहुँच चुकी थीं कि मक्का के अन्दर एक नयी दावत बड़े ज़ोर-शोर और शद्दो-मद्द के साथ उठ रही है। चुनाँचे मदीने के यहूदियों की तरफ़ से सिखाये हुए सवालात भी मक्का के लोग हुज़ूर ﷺ से इम्तिहानन करते थे। मसलन आप ज़रा बताइये कि ज़ुलक़र नैन कौन था? अगर आप नबी हैं तो बताइये कि असहाबे कहफ़ का क़िस्सा क्या था? और यह भी बताइये कि रूह की हक़ीक़त क्या है? यह सब सवालात और इनके जवाबात सूरह बनी इसराइल और सूरतुल कहफ़ में आयेंगे। मदीने के यहूदियों तक उनके सवालात के जवाबात से मुताल्लिक़ तमाम ख़बरें भी पहुँच चुकी थीं और उनके समझदार और अहले इल्म लोग समझ चुके थे कि यह वही नबी हैं जिनके हम मुन्तज़िर थे। मगर यह लोग यह सब कुछ समझने और जान लेने के बावजूद महरूम रह गये।

आयत 20

اَلَّذِیْنَ اٰتَیْنٰهُمُ الْكِتٰبَ یَعْرِفُوْنَهٗ كَمَا یَعْرِفُوْنَ اَبْنَآءَهُمْؕ

"वह लोग जिन्हें हमने किताब अता फ़रमायी थी पहचानते हैं इसको जैसा कि पहचानते हैं अपने बेटों को।"

یَعْرِفُوْنَهٗ की ज़मीर मफ़ऊली दोनों तरफ़ जा सकती है, क़ुरान की तरफ़ भी और हुज़ूर ﷺ की तरफ़ भी। अलबत्ता इससे क़ब्ल यह वज़ाहत की जा चुकी है कि क़ुरान और रसूल ﷺ मिल कर ही "बय्यिना" बनते हैं, यह दोनों एक वहादत और एक ही हक़ीक़त हैं। हुज़ूर ﷺ ख़ुद क़ुराने मुजस्सम हैं। क़ुरान एक इंसानी शख़्सियत और सीरत व किरदार का जामा पहन ले तो वह मुहम्मद ﷺ हैं। जैसा कि उम्मुल मोमिनीन हज़रत आयशा रज़ि. ने फ़रमाया था: (كَانَ خُلُقُهُ الْقُرْآنَ)[2] यानि हुज़ूर ﷺ की सीरत क़ुरान ही तो है।

اَلَّذِیْنَ خَسِرُوْۤا اَنْفُسَهُمْ فَهُمْ لَا یُؤْمِنُوْنَ۝۲۰

"(अलबत्ता) जो लोग अपने आपको तबाह करने पर तुल गये हैं तो वही हैं जो ईमान नहीं लायेंगे।"

आयात 21 से 30 तक

وَمَنْ اَظْلَمُ مِمَّنِ افْتَرٰی عَلَی اللّٰهِ كَذِبًا اَوْ كَذَّبَ بِاٰیٰتِهٖؕ اِنَّهٗ لَا یُفْلِحُ الظّٰلِمُوْنَ۝۲۱
وَیَوْمَ نَحْشُرُهُمْ جَمِیْعًا ثُمَّ نَقُوْلُ لِلَّذِیْنَ اَشْرَكُوْۤا اَیْنَ شُرَكَآؤُكُمُ الَّذِیْنَ كُنْتُمْ
تَزْعُمُوْنَ۝۲۲ ثُمَّ لَمْ تَكُنْ فِتْنَتُهُمْ اِلَّاۤ اَنْ قَالُوْا وَاللّٰهِ رَبِّنَا مَا كُنَّا مُشْرِكِیْنَ۝۲۳

اُنْظُرْ كَيْفَ كَذَبُوْا عَلٰٓى اَنْفُسِهِمْ وَضَلَّ عَنْهُمْ مَّا كَانُوْا يَفْتَرُوْنَ ﴿٢٤﴾ وَمِنْهُمْ مَّنْ
يَّسْتَمِعُ اِلَيْكَ ۚ وَجَعَلْنَا عَلٰى قُلُوْبِهِمْ اَكِنَّةً اَنْ يَّفْقَهُوْهُ وَفِيْٓ اٰذَانِهِمْ وَقْرًا ۭ وَاِنْ
يَّرَوْا كُلَّ اٰيَةٍ لَّا يُؤْمِنُوْا بِهَا ۭ حَتّٰٓى اِذَا جَاۗءُوْكَ يُجَادِلُوْنَكَ يَقُوْلُ الَّذِيْنَ كَفَرُوْٓا اِنْ
هٰذَآ اِلَّآ اَسَاطِيْرُ الْاَوَّلِيْنَ ﴿٢٥﴾ وَهُمْ يَنْهَوْنَ عَنْهُ وَيَنْـَٔوْنَ عَنْهُ ۚ وَاِنْ يُّهْلِكُوْنَ اِلَّآ
اَنْفُسَهُمْ وَمَا يَشْعُرُوْنَ ﴿٢٦﴾ وَلَوْ تَرٰٓى اِذْ وُقِفُوْا عَلَي النَّارِ فَقَالُوْا يٰلَيْتَنَا نُرَدُّ وَلَا
نُكَذِّبَ بِاٰيٰتِ رَبِّنَا وَنَكُوْنَ مِنَ الْمُؤْمِنِيْنَ ﴿٢٧﴾ بَلْ بَدَا لَهُمْ مَّا كَانُوْا يُخْفُوْنَ مِنْ
قَبْلُ ۭ وَلَوْ رُدُّوْا لَعَادُوْا لِمَا نُهُوْا عَنْهُ وَاِنَّهُمْ لَكٰذِبُوْنَ ﴿٢٨﴾ وَقَالُوْٓا اِنْ هِيَ اِلَّا
حَيَاتُنَا الدُّنْيَا وَمَا نَحْنُ بِمَبْعُوْثِيْنَ ﴿٢٩﴾ وَلَوْ تَرٰٓى اِذْ وُقِفُوْا عَلٰي رَبِّهِمْ ۭ قَالَ
اَلَيْسَ هٰذَا بِالْحَقِّ ۭ قَالُوْا بَلٰى وَرَبِّنَا ۭ قَالَ فَذُوْقُوا الْعَذَابَ بِمَا كُنْتُمْ تَكْفُرُوْنَ ﴿٣٠﴾

आयत 21

وَمَنْ اَظْلَمُ مِمَّنِ افْتَرٰى عَلَي اللّٰهِ كَذِبًا اَوْ
كَذَّبَ بِاٰيٰتِهٖ ۭ اِنَّهٗ لَا يُفْلِحُ الظّٰلِمُوْنَ ﴿٢١﴾

"और उससे बढ़ कर ज़ालिम कौन होगा जिसने अल्लाह पर कोई झूठी तोहमत लगाई या उसकी आयात को झुठलाया। यक़ीनन ऐसे ज़ालिम (कभी) फ़लाह नहीं पा सकते।"

यानि यह दो अज़ीम तरीन जराइम हैं जो शनाअत में बराबर के हैं, अल्लाह की आयात को झुठलाना या कोई शय ख़ुद गढ़ कर अल्लाह की तरफ़ मंसूब कर देना।

आयत 22

وَيَوْمَ نَحْشُرُهُمْ جَمِيْعًا ثُمَّ نَقُوْلُ لِلَّذِيْنَ
اَشْرَكُوْٓا اَيْنَ شُرَكَاۗؤُكُمُ الَّذِيْنَ كُنْتُمْ
تَزْعُمُوْنَ ﴿٢٢﴾

"और जिस दिन हम जमा करेंगे उन सबको फिर कहेंगे उनसे जिन्होंने शिर्क किया था कहाँ हैं तुम्हारे वह शु'रकाअ जिनका तुम्हें घमण्ड हो गया था?"

तुम्हारा गुमान था कि वह तुम्हें हमारी पकड़ से बचा लेंगे।

आयत 23

ثُمَّ لَمْ تَكُنْ فِتْنَتُهُمْ اِلَّآ اَنْ قَالُوْا وَاللّٰهِ
رَبِّنَا مَا كُنَّا مُشْرِكِيْنَ ﴿٢٣﴾

"फिर नहीं होगी उनकी कोई और चाल सिवाय इसके कि वह कहेंगे कि अल्लाह की क़सम जो हमारा रब है हम मुशरिक नहीं थे।"

आयत 24

اُنْظُرْ كَيْفَ كَذَبُوْا عَلٰٓى اَنْفُسِهِمْ وَضَلَّ
عَنْهُمْ مَّا كَانُوْا يَفْتَرُوْنَ ﴿٢٤﴾

"देखो कैसे वह झूठ बोलेंगे अपने ऊपर और जो इफ़तरा (झूठी निंदा) उन्होंने किया हुआ था वह सब उनसे गुम हो जायेगा।"

उनके यह दावे कि फलाँ देवी बचायेगी और फलाँ देवता सिफ़ारिश करेगा, सब नस्यम मन्सिया हो जाएँगे। अज़ाब को देख कर उस वक़्त उनके हाथों के तोते उड़ जाएँगे।

आयत 25

وَمِنْهُمْ مَّنْ يَّسْتَمِعُ اِلَيْكَ

"और (ऐ नबी ﷺ) इनमें से कुछ लोग ऐसे भी हैं जो आपकी बात को बड़ी तवज्जोह से सुनते हैं।"

मक्का में क़ुरैश के सरदारों के लिये जब अवाम को ईमान लाने से रोकना मुश्किल हो गया तो उन्होंने भी उल्माये यहूद की तरह एक तरकीब निकाली। वह बड़े अहतमाम के साथ आकर हुज़ूर ﷺ की मजलिस में बैठते और बड़े इनहाक (ध्यान) से कान लगा कर आप ﷺ की बातें सुनते। वह यह ज़ाहिर करते थे कि हम सब कुछ बड़ी तवज्जोह से सुन रहे हैं, ताकि आम लोग देख कर यह समझें कि वाक़ई हमारे ज़ी फ़हम सरदार यह बातें सुनने, समझने और मानने में संजीदा हैं, मगर फिर बाद में अवाम में आकर उन बातों को रद्द कर देते। आम लोगों को धोखा देने के लिये यह उनकी एक चाल थी, ताकि अवाम यह समझें कि हमारे यह सरदार समझदार और ज़हीन हैं, यह लोग शौक़ से मुहम्मद (ﷺ) की महफ़िल में जाते हैं और पूरे इनहाक से उनकी बातें सुनते हैं, फिर अगर यह लोग इस दावत को सुनने और समझने के बाद रद्द कर रहे हैं तो आख़िर इसकी कोई इल्मी और अक़्ली वजूहात तो होंगी। लिहाज़ा आयत ज़ेरे नज़र में उनकी इस साज़िश का तज़किरा करते हुए फ़रमाया गया कि ऐ नबी (ﷺ) इनमें से कुछ लोग आपके पास आते हैं और आपकी बातें बज़ाहिर बड़ी तवज्जोह से कान लगा कर सुनते हैं।

وَجَعَلْنَا عَلٰى قُلُوْبِهِمْ اَكِنَّةً اَنْ يَّفْقَهُوْهُ وَفِيْٓ اٰذَانِهِمْ وَقْرًا ۭ وَاِنْ يَّرَوْا كُلَّ اٰيَةٍ لَّا يُؤْمِنُوْا بِهَا ۭ

"हालाँकि हमने उनके दिलों पर परदे डाल दिये हैं कि वह उनको समझ नहीं सकते और उनके कानों के अन्दर हमने सक़ल (वज़न) पैदा कर दिया है। और अगर यह सारी निशानियाँ (जो यह माँग रहे हैं) भी देख लें तब भी उन पर ईमान नहीं लाएँगे।"

अल्लाह ने उनके दिलों और दिमागों पर यह परदे क्यों डाल दिये? यह सब कुछ अल्लाह की उस सुन्नत के मुताबिक़ है कि जब नबी के मुख़ातिबीन उसकी दावत के मुक़ाबले में हसद, तकब्बुर और तअस्सुब दिखाते हुए अपनी ज़िद पर अड़े रहते हैं तो उनकी सोचने और समझने की सलाहियतें सल्ब कर (छीन) ली जाती हैं। जैसे सूरतुल बक़रह (आयत:7) में फ़रमाया गया: {خَتَمَ اللّٰهُ عَلٰي قُلُوْبِهِمْ وَعَلٰي سَمْعِهِمْ ۭ وَعَلٰٓي اَبْصَارِهِمْ غِشَاوَةٌ}। लिहाज़ा उनका बज़ाहिर तवज्जोह से नबी ﷺ की बातों को सुनना उनके लिये मुफ़ीद नहीं होगा।

حَتّٰٓى اِذَا جَاۗءُوْكَ يُجَادِلُوْنَكَ يَقُوْلُ الَّذِيْنَ كَفَرُوْٓا اِنْ هٰذَآ اِلَّآ اَسَاطِيْرُ الْاَوَّلِيْنَ ۝۲۵

"यहाँ तक कि (ऐ नबी ﷺ) जब वह आपके पास आते हैं तो आपसे झगड़ा (और मुनाज़रा) करते हैं (और) काफ़िर कहते हैं कि यह (क़ुरान जो आप सुना रहे हैं) कुछ भी नहीं सिर्फ़ पहले लोगों की कहानियाँ हैं।"

यह जो कुछ आप (ﷺ) हमें सुना रहे हैं यह पुरानी बातें और पुराने क़िस्से हैं, जो मालूम होता है कि अपने यहूदियों और नसरानियों से सुन रखे हैं।

आयत 26

وَهُمْ يَنْهَوْنَ عَنْهُ وَيَنْــَٔوْنَ عَنْهُ ۚ

"और वह इससे रोकते भी हैं और ख़ुद भी रुक जाते हैं।"

यहाँ आपस में मिलते-जुलते दो अफ़आल इस्तेमाल हुए हैं, एक का माद्दा ن ہ ی है और दूसरे का ن ء ی है। يَنْهٰى نَهْي (रोकना) तो मारूफ़ फ़अल है और

"نہی" का लफ्ज़ उर्दू में भी आम इस्तेमाल होता है। लिहाज़ा { يَنْهَوْنَ عَنْهُ } के मायने हैं "वह रोकते हैं उससे।" किसको रोकते हैं? अपनी अवाम को। उनकी लीडरी और सरदारी अवाम के बल पर ही तो है। अवाम बरगश्ता (भटक) हो जायेंगे तो उनकी लीडरी कहाँ रहेगी। अवाम को अपने क़ाबू में करना और और उनकी अक़्ल और समझ पर अपना तसल्लुत क़ायम रखना ऐसे नाम निहाद लीडरों के लिये इन्तहाई ज़रूरी होता है। लिहाज़ा एक तरफ़ तो वह अपनी अवाम को राहे हिदायत इख़्तियार करने से रोकते हैं और दूसरी तरफ़ वह ख़ुद उससे गुरेज़ और पहलु तही करते हैं। نَأْيًا يَنْأَى نَأَى का मफ़हूम है दूर होना, कन्नी कतराना जैसे सूरतुल इसरा में फ़रमाया: { وَاِذَآ اَنْعَمْنَا عَلَي الْاِنْسَانِ اَعْرَضَ وَنَاٰ بِجَانِبِهٖ } (आयत:83) "और इन्सान का हाल यह है कि जब हम उस पर ईनाम करते हैं तो मुँह फेर लेता और पहलु तही करता है।" चुनाँचे {يَنْـــَٔوْنَ عَنْهُ} के मायने हैं "वह उससे गुरेज़ करते हैं, कन्नी कतराते हैं।"

وَاِنْ يُّهْلِكُوْنَ اِلَّآ اَنْفُسَهُمْ وَمَا يَشْعُرُوْنَ ﴿٢٦﴾

"और वह नहीं हलाक कर रहे किसी को सिवाय अपने आपके लेकिन उन्हें इसका अहसास नहीं है।"

आयत 27

وَلَوْ تَرٰٓى اِذْ وُقِفُوْا عَلَى النَّارِ فَقَالُوْا يٰلَيْتَنَا نُرَدُّ وَلَا نُكَذِّبَ بِاٰيٰتِ رَبِّنَا

"और काश तुम देख पाते जब यह खड़े किये जाएँगे आग के किनारे पर तो यह कहेंगे हाय काश! किसी तरह हमें लौटा दिया जाये (तो हम तस्दीक़ करेंगे) और हम अपने रब की आयात को नहीं झुठलाएंगे"

यहाँ पर نُرَدُّ के बाद فَنُصَدِّقُ महज़ूफ़ माना जायेगा, कि अगर हमें लौटा दिया जाये तो हम तस्दीक़ करेंगे और अपने रब की आयात को झुठलाएंगे नहीं। काश किसी ना किसी तरह एक दफ़ा फिर हमें दुनिया में वापस भेज दिया जाये।

وَنَكُوْنَ مِنَ الْمُؤْمِنِيْنَ ﴿٢٧﴾

"और हम (पक्के और सच्चे) मोमिन बन जाएँगे।"

आयत 28

بَلْ بَدَا لَهُمْ مَّا كَانُوْا يُخْفُوْنَ مِنْ قَبْلُ ۭ

"बल्कि यह तो इन पर वही हक़ीक़त ज़ाहिर हुई है जो इससे पहले (अपने दिल में) छुपाये हुए थे।"

ऐसा नहीं था कि उन्हें हक़ीक़त का इल्म नहीं था। हक़ पहले ही उन पर वाज़ेह था, बात उन पर पूरी तरह खुल चुकी थी, लेकिन उस वक़्त उन पर हसद, बुग़्ज़ और तकब्बुर के परदे पड़े हुए थे।

وَلَوْ رُدُّوْا لَعَادُوْا لِمَا نُهُوْا عَنْهُ وَاِنَّهُمْ لَكٰذِبُوْنَ ﴿٢٨﴾

"और अगर (बिलफ़र्ज़) उन्हें लौटा भी दिया जाये तो फिर वही करेंगे जिससे उन्हें रोका जा रहा था और यक़ीनन वह झूठे हैं।"

दुनिया में जाकर फिर वहाँ के तक़ाज़े सामने आ जाएँगे, दुनिया के माल व दौलत और औलाद की मोहब्बत और दूसरी नफ्सियाती ख्वाहिशात फिर उन्हें उसी रास्ते पर डाल देंगी।

आयत 29

قَالُوْا بَلٰى وَرَبِّنَا ؕ قَالَ فَذُوْقُوا الْعَذَابَ
بِمَا كُنْتُمْ تَكْفُرُوْنَ ۝٣٠

"वह कहेंगे क्यों नहीं, हमारे रब की क़सम (कि यह हक़ है)! तो वह कहेगा कि अब मज़ा चखो अज़ाब का अपने कुफ़्र की पादाश में।"

आयत 31 से 41 तक

قَدْ خَسِرَ الَّذِيْنَ كَذَّبُوْا بِلِقَآءِ اللّٰهِ ؕ حَتّٰۤى اِذَا جَآءَتْهُمُ السَّاعَةُ بَغْتَةً قَالُوْا يٰحَسْرَتَنَا
عَلٰى مَا فَرَّطْنَا فِيْهَا ۙ وَهُمْ يَحْمِلُوْنَ اَوْزَارَهُمْ عَلٰى ظُهُوْرِهِمْ ؕ اَلَا سَآءَ مَا
يَزِرُوْنَ ۝٣١ وَمَا الْحَيٰوةُ الدُّنْيَاۤ اِلَّا لَعِبٌ وَّلَهْوٌ ؕ وَلَلدَّارُ الْاٰخِرَةُ خَيْرٌ لِّلَّذِيْنَ
يَتَّقُوْنَ ؕ اَفَلَا تَعْقِلُوْنَ ۝٣٢ قَدْ نَعْلَمُ اِنَّهٗ لَيَحْزُنُكَ الَّذِىْ يَقُوْلُوْنَ فَاِنَّهُمْ لَا
يُكَذِّبُوْنَكَ وَلٰكِنَّ الظّٰلِمِيْنَ بِاٰيٰتِ اللّٰهِ يَجْحَدُوْنَ ۝٣٣ وَلَقَدْ كُذِّبَتْ رُسُلٌ مِّنْ
قَبْلِكَ فَصَبَرُوْا عَلٰى مَا كُذِّبُوْا وَاُوْذُوْا حَتّٰۤى اَتٰىهُمْ نَصْرُنَا ۚ وَلَا مُبَدِّلَ لِكَلِمٰتِ
اللّٰهِ ۚ وَلَقَدْ جَآءَكَ مِنْ نَّبَاِى الْمُرْسَلِيْنَ ۝٣٤ وَاِنْ كَانَ كَبُرَ عَلَيْكَ اِعْرَاضُهُمْ فَاِنِ
اسْتَطَعْتَ اَنْ تَبْتَغِىَ نَفَقًا فِى الْاَرْضِ اَوْ سُلَّمًا فِى السَّمَآءِ فَتَاْتِيَهُمْ بِاٰيَةٍ ؕ وَلَوْ
شَآءَ اللّٰهُ لَجَمَعَهُمْ عَلَى الْهُدٰى فَلَا تَكُوْنَنَّ مِنَ الْجٰهِلِيْنَ ۝٣٥ اِنَّمَا يَسْتَجِيْبُ الَّذِيْنَ
يَسْمَعُوْنَ ؕ وَالْمَوْتٰى يَبْعَثُهُمُ اللّٰهُ ثُمَّ اِلَيْهِ يُرْجَعُوْنَ ۝٣٦ وَقَالُوْا لَوْلَا نُزِّلَ عَلَيْهِ اٰيَةٌ
مِّنْ رَّبِّهٖ ؕ قُلْ اِنَّ اللّٰهَ قَادِرٌ عَلٰۤى اَنْ يُّنَزِّلَ اٰيَةً وَّلٰكِنَّ اَكْثَرَهُمْ لَا يَعْلَمُوْنَ ۝٣٧ وَمَا
مِنْ دَآبَّةٍ فِى الْاَرْضِ وَلَا طٰٓئِرٍ يَّطِيْرُ بِجَنَاحَيْهِ اِلَّاۤ اُمَمٌ اَمْثَالُكُمْ ؕ مَا فَرَّطْنَا فِى
الْكِتٰبِ مِنْ شَىْءٍ ثُمَّ اِلٰى رَبِّهِمْ يُحْشَرُوْنَ ۝٣٨ وَالَّذِيْنَ كَذَّبُوْا بِاٰيٰتِنَا صُمٌّ وَّبُكْمٌ فِى
الظُّلُمٰتِ ؕ مَنْ يَّشَاِ اللّٰهُ يُضْلِلْهُ ؕ وَمَنْ يَّشَاْ يَجْعَلْهُ عَلٰى صِرَاطٍ مُّسْتَقِيْمٍ ۝٣٩ قُلْ

وَقَالُوْۤا اِنْ هِىَ اِلَّا حَيَاتُنَا الدُّنْيَا وَمَا
نَحْنُ بِمَبْعُوْثِيْنَ ۝٢٩

"और वह कहते हैं कि नहीं है मगर बस हमारी दुनिया ही की ज़िन्दगी और हम (मरने के बाद) फिर ज़िन्दा नहीं किये जाएँगे।"

जैसे आज-कल कुफ़्र व इल्हाद के मुख्तलिफ़ shades हैं, उस ज़माने में भी ऐसा ही था। आज ऐसे लोग भी दुनिया में मौजूद हैं जो अल्लाह को तो मानते हैं, आख़िरत को नहीं मानते। ऐसे लोग भी हैं जो अल्लाह और आख़िरत को मानते हैं, लेकिन रिसालत को नहीं मानते हैं। कुछ ऐसे लोग भी हैं जो बिल्कुल मुल्हिद और माद्दा परस्त हैं और उनका अक़ीदा है कि हम ख़ुद ही पैदा होते हैं और ख़ुद ही अपनी तबीई मौत मर जाते हैं, और हमारी ज़िन्दगी सिर्फ़ यही है, मरने के बाद उठने वाला कोई मामला नहीं। इसी तरह उस दौर में भी कुफ़्र व शिर्क के मुख्तलिफ़ shades मौजूद थे। क़ुरैश के अक्सर लोग और अरब के बेशतर मुशरिकीन अल्लाह को मानते थे, आख़िरत को मानते थे, बाअसे बाद अल् मौत को भी मानते थे, लेकिन इसके साथ वह देवी-देवताओं की सिफ़ारिश और शफ़ाअत के क़ायल थे कि हमें फलाँ छुड़ा लेगा, फलाँ बचा लेगा, फलाँ हमारा हिमायती और मददगार होगा। लेकिन एक तबक़ा उनमें भी ऐसा था जो कहता था कि ज़िन्दगी बस यही दुनिया की है, इसके बाद कोई और ज़िन्दगी नहीं है। यहाँ इस आयत में उन लोगों का तज़किरा है।

आयत 30

وَلَوْ تَرٰۤى اِذْ وُقِفُوْا عَلٰى رَبِّهِمْ ؕ قَالَ
اَلَيْسَ هٰذَا بِالْحَقِّ ؕ

"और काश कि तुम देख सकते जबकि यह खड़े किये जाएँगे अपने रब के सामने। (उस वक़्त) वह पूछेगा क्या यह हक़ नहीं है?"

اَرَءَيْتَكُمْ اِنْ اَتٰىكُمْ عَذَابُ اللّٰهِ اَوْ اَتَتْكُمُ السَّاعَةُ اَغَيْرَ اللّٰهِ تَدْعُوْنَ ۚ اِنْ كُنْتُمْ صٰدِقِيْنَ ﴿۴۰﴾ بَلْ اِيَّاهُ تَدْعُوْنَ فَيَكْشِفُ مَا تَدْعُوْنَ اِلَيْهِ اِنْ شَآءَ وَتَنْسَوْنَ مَا تُشْرِكُوْنَ ﴿۴۱﴾

आयत 31

قَدْ خَسِرَ الَّذِيْنَ كَذَّبُوْا بِلِقَآءِ اللّٰهِ ؕ

"बड़े घाटे में पड़ गये वह लोग जो अल्लाह से मुलाक़ात के इन्कारी हैं।"

वह इस बात को झुठला रहे हैं कि मरने के बाद कोई पेशी, हाज़री या अल्लाह से मुलाक़ात वगैरह होगी।

حَتّٰۤى اِذَا جَآءَتْهُمُ السَّاعَةُ بَغْتَةً

"यहाँ तक कि जब आ जायेगा उन पर वह वक़्त अचानक"

एक शख्स के लिये इन्फ़रादी तौर पर तो السَّاعَةُ (घड़ी) से मुराद उसकी मौत का वक़्त है, लेकिन आम तौर पर इससे क़यामत ही मुराद ली गयी है। चुनाँचे इसका मतलब है कि जब क़यामत अचानक आ जायेगी।

قَالُوْا يٰحَسْرَتَنَا عَلٰى مَا فَرَّطْنَا فِيْهَا ۙ وَهُمْ يَحْمِلُوْنَ اَوْزَارَهُمْ عَلٰى ظُهُوْرِهِمْ ؕ اَلَا سَآءَ مَا يَزِرُوْنَ ﴿۳۱﴾

"तो वह कहेंगे हाय अफ़सोस हमारी उस कोताही पर जो इस (क़यामत) के बारे में हमसे हुई, और वह उठाये हुए होंगे अपने बोझ अपनी पीठों पर। आगाह हो जाओ, बहुत बुरा बोझ होगा जो वह उठाये हुए होंगे।"

जब क़यामत हक़ बन कर सामने आ जायेगी तो उनकी हसरत की कोई इन्तहा ना रहेगी। वह अपनी पीठों पर कुफ़्र, शिर्क और गुनाहों के बोझ उठाये हुए मैदाने हश्र में पेश होंगे।

आयत 32

وَمَا الْحَيٰوةُ الدُّنْيَاۤ اِلَّا لَعِبٌ وَّلَهْوٌ ؕ

"और नहीं है दुनिया की ज़िन्दगी मगर खेल और कुछ जी बहला लेना।"

इसका मतलब यह नहीं लेना चाहिये कि दुनिया की ज़िन्दगी की कोई हक़ीक़त नहीं है, बल्कि तक़ाबुल में ऐसा कहा जाता है कि आख़िरत के मुक़ाबले में इसकी यही हक़ीक़त है। एक शय अब्दी है, हमेशा-हमेश की है और एक शय आरज़ी और फ़ानी है। इन दोनों का आपस में क्या मुक़ाबला? जैसे दुआये इस्तखारा में अल्फ़ाज़ आये हैं: فَاِنَّكَ تَعْلَمُ وَلَا اَعْلَمُ (ऐ अल्लाह! तू ही सब कुछ जानता है, मैं कुछ नहीं जानता)। इसका यह मतलब तो नहीं है कि इन्सान के पास कोई भी इल्म नहीं है, लेकिन अल्लाह के इल्म के मुक़ाबले में किसी दूसरे का इल्म कुछ ना होने के बराबर है। इसी तरह यहाँ आख़िरत के मुक़ाबले में दुनिया की ज़िन्दगी को लअब और लहव क़रार दिया गया है। वरना दुनिया तो एक ऐतबार से आख़िरत की खेती है। एक हदीस भी बयान की जाती है कि ((اَلدُّنْيَا مَزْرَعَةُ الْاٰخِرَةِ))[3] "दुनिया आख़िरत की खेती है।" यहाँ बोओगे तो वहाँ काटोगे। अगर यहाँ बोओगे नहीं तो वहाँ काटोगे क्या? यह ताल्लुक़ है आपस में दुनिया और आख़िरत का। इस ऐतबार से दुनिया एक हक़ीक़त है और एक इम्तिहानी वक़्फ़ा है। लेकिन जब आप ताक़बुल करेंगे दुनिया और आख़िरत का तो दुनिया और इसका माल व मताअ आख़िरत की अबदियत और उसकी शान व शौकत के मुक़ाबले में गोया ना होने के बराबर है। दुनिया तो महज़ तीन घंटे के एक ड्रामे की मानिन्द है जिसमें किसी को बादशाह बना दिया जाता है और किसी को फ़क़ीर। जब ड्रामा ख़त्म होता है तो ना बादशाह सलामत बादशाह हैं और ना फ़क़ीर फ़क़ीर है। ड्रामा हॉल से बाहर जाकर कपड़े तब्दील किये और सब एक जैसे बन गये। यह है दुनिया की असल हक़ीक़त। चुनाँचे इस आयत में दुनिया को खेल-तमाशा क़रार दिया गया है।

وَلَلدَّارُ الْاٰخِرَةُ خَيْرٌ لِّلَّذِيْنَ يَتَّقُوْنَ ؕ اَفَلَا تَعْقِلُوْنَ ﴿۳۲﴾

"और यक़ीनन आख़िरत का घर बेहतर है उन लोगों के लिये जो तक़वा इख़्तियार करें, तो क्या तुम अक़्ल से काम नहीं लेते?"

अब वह मक़ाम आ गया है जिसे मैंने इस सूरत के उमूद का ज़रवा-ए-सनाम (climax) क़रार दिया था। यहाँ तर्जुमा करते हुए ज़ुबान लड़खड़ाती है, लेकिन हमें तर्जुमानी की कोशिश तो बहरहाल करनी है।

आयत 33

قَدْ نَعْلَمُ اِنَّهٗ لَيَحْزُنُكَ الَّذِيْ يَقُوْلُوْنَ

"(ऐ नबी ﷺ) हमें ख़ूब मालूम है जो कुछ यह कह रहे हैं इससे आप ग़मगीन होते हैं"

हम जानते हैं कि जो मुतालबात यह लोग कर रहे हैं, आपसे जो मौज्ज़ात का तक़ाज़ा कर रहे हैं इससे आप रंजीदा होते हैं। आपकी ज़ात गोया चक्की के दो पाटों के दरमियान आ गयी है। एक तरफ़ अल्लाह की मशीयत है और दूसरी तरफ़ इन लोगों के तक़ाज़े। अब इसका पहला जवाब तो यह है:

فَاِنَّهُمْ لَا يُكَذِّبُوْنَكَ وَلٰكِنَّ الظّٰلِمِيْنَ بِاٰيٰتِ اللّٰهِ يَجْحَدُوْنَ ﴿۳۳﴾

"तो (ऐ नबी ﷺ! आप सब्र कीजिये) यक़ीनन वह आपको नहीं झुठला रहे, बल्कि यह ज़ालिम तो अल्लाह की निशानियों का इन्कार कर रहे हैं।"

यह लोग क़ुरान का इन्कार कर रहे हैं, हमारा इन्कार कर रहे हैं, आप ﷺ का इन्कार इन्होंने कब किया है? यहाँ समझाने के इस अंदाज़ पर गौर कीजिये! क्या उन्होंने आप ﷺ को झूठा कहा? नहीं कहा! आप ﷺ पर कोई तोहमत उन्होंने लगायी? नहीं लगायी! लिहाज़ा यह लोग जो तकज़ीब कर रहे हैं, यह आप ﷺ की तकज़ीब तो नहीं हो रही, तकज़ीब तो हमारी हो रही है, गुस्सा तो हमें आना चाहिये, नाराज़ तो हमें होना चाहिये। यह हमारा कलाम है और यह लोग हमारे कलाम को झुठला रहे हैं। आप ﷺ का काम तो हमारे कलाम को इन तक पहुँचा देना है। यह समझाने का एक बड़ा प्यारा अंदाज़ है, जैसे कोई शफ़ीक़ उस्ताद अपने शागिर्द को समझा रहा हो। लेकिन अब यह बात दर्जा-ब-दर्जा आगे बढ़ेगी। लिहाज़ा इन आयात को पढ़ते हुए यह उसूल ज़हन में ज़रूर रखिये कि اَلرَّبُّ رَبٌّ وَاِنْ تَنَزَّلَ وَ اَلْعَبْدُ عَبْدٌ وَاِنْ تَرَقّٰى । अब इस ज़िमन में दूसरा जवाब मुलाहिज़ा हो:

आयत 34

وَلَقَدْ كُذِّبَتْ رُسُلٌ مِّنْ قَبْلِكَ فَصَبَرُوْا عَلٰى مَا كُذِّبُوْا وَاُوْذُوْا حَتّٰٓى اَتٰىهُمْ نَصْرُنَا ۚ وَلَا مُبَدِّلَ لِكَلِمٰتِ اللّٰهِ ۚ

"और आप ﷺ से पहले भी रसूलों को झुठलाया गया तो उन्होंने सब्र किया उस पर जो उन्हें झुठलाया गया और जो उन्हें ईज़ाएँ पहुँचायी गयीं, यहाँ तक कि उन्हें हमारी मदद पहुँच गयी। और (ऐ नबी ﷺ) अल्लाह के इन कलिमात को बदलने वाला कोई नहीं।"

हमारा एक क़ानून, एक तरीक़ा और एक ज़ाब्ता है, इसलिये आप (ﷺ) को यह सब कुछ बर्दाश्त करना पड़ेगा। आपको जिस मंसब पर फ़ाइज़ किया गया है उसके बारे में हमने पहले ही बता दिया था कि यह बहुत भारी बोझ है: {اِنَّا سَنُلْقِيْ عَلَيْكَ قَوْلًا ثَقِيْلًا} (अल् मुज़म्मिल:5) "बेशक हम आप पर अनक़रीब एक भारी बोझ डालने वाले हैं।"

وَلَقَدْ جَآءَكَ مِنْ نَّبَاِ الْمُرْسَلِيْنَ ﴿۳۴﴾

"और आप ﷺ के पास रसूलों की ख़बरें आ चुकी हैं।"

आप (ﷺ) के इल्म में है कि हमारे बन्दे नूह (अलै.) ने साढ़े नौ सौ बरस तक सब्र किया। अब इसके बाद तल्ख़ तरीन बात आ रही है।

आयत 35

وَاِنۡ كَانَ كَبُرَ عَلَيۡكَ اِعۡرَاضُهُمۡ فَاِنِ اسۡتَطَعۡتَ اَنۡ تَبۡتَغِىَ نَفَقًا فِى الۡاَرۡضِ اَوۡ سُلَّمًا فِى السَّمَآءِ فَتَاۡتِيَهُمۡ بِاٰيَةٍ‌ؕ

"और अगर इनका ऐराज़ आप ﷺ पर बहुत शाक़ गुज़र रहा है तो अगर आप में ताक़त है कि ज़मीन में कोई सुरंग लगा लें या आसमान में कोई सीढ़ी लगा लें तो ले आयें कोई निशानी।"

हमारा तो फ़ैसला अटल है कि हम कोई ऐसा मौज्ज़ा नहीं दिखाएँगे, आप ले आयें जहाँ से ला सकते हैं। गौर करें किस अंदाज़ में हुज़ूर ﷺ से गुफ्तुगू हो रही है।

وَلَوۡ شَآءَ اللّٰهُ لَجَمَعَهُمۡ عَلَى الۡهُدٰى

"और अगर अल्लाह चाहता तो इन सबको हिदायत पर जमा कर देता"

अगर अल्लाह चाहता तो आने वाहिद में सबको साहिबे ईमान बना देता, नेक बना देता।

فَلَا تَكُوۡنَنَّ مِنَ الۡجٰهِلِيۡنَ ۝۳۵

"तो आप ﷺ जज़्बात से मग़लूब होने वालों में से ना बनें!"

इस मामले में आप जज़्बाती ना हों। यही लफ्ज़ सूरह हूद में हज़रत नूह अलै. से ख़िताब में आया है। जब हज़रत नूह अलै. ने अर्ज़ की कि ऐ अल्लाह मेरा बेटा मेरी निगाहों के सामने ग़र्क़ हो गया जबकि तेरा वादा था कि मेरे अहल को तू बचा लेगा: { اِنَّ ابۡنِىۡ مِنۡ اَهۡلِىۡ وَاِنَّ وَعۡدَكَ الۡحَقُّ } (हूद:45) "मेरा बेटा मेरे घरवालों में से है और तेरा वादा सच्चा है।" तो इसका जवाब भी बहुत सख्त था: {اِنِّىۡۤ اَعِظُكَ اَنۡ تَكُوۡنَ مِنَ الۡجٰهِلِيۡنَ } (हूद:46) "मैं तुम्हें नसीहत करता हूँ कि तुम जाहिलों में से ना हो जाओ।" ज़रा गौर करें, यह अल्लाह का वह बंदा है जिसने साढ़े नौ सौ बरस तक अल्लाह की चाकरी की, अल्लाह के दीन की दावत फैलायी, उसमें मेहनत की, मशक्क़त की और हर तरह की मुश्किलात उठाईं। लेकिन अल्लाह की शान बहुत बुलन्द है, बहुत बुलन्द है, बहुत बुलन्द है! इसी लिये फ़रमाया कि ऐ नबी (ﷺ) अगर सबको हिदायत पर लाना मक़सूद हो तो हमारे लिये क्या मुश्किल है कि हम आने वाहिद में सबको अबू बक्र सिद्दीक़ रज़ि. की मानिन्द बना दें, और अगर हम सबको बिगड़ना चाहें तो आने वाहिद में सबके सब इब्लीस बन जायें। मगर असल मक़सूद तो इम्तिहान है, आज़माइश है। जो हक़ पर चलना चाहता है, हक़ का तालिब है उसको हक़ मिल जायेगा।

आयत 36

اِنَّمَا يَسۡتَجِيۡبُ الَّذِيۡنَ يَسۡمَعُوۡنَ‌ؘ وَالۡمَوۡتٰى يَبۡعَثُهُمُ اللّٰهُ ثُمَّ اِلَيۡهِ يُرۡجَعُوۡنَ ۝۳۶

"बात तो वही क़बूल करेंगे जो (हक़ीक़तन) सुनते हैं। रहे यह मुर्दे तो अल्लाह इनको उठायेगा, फिर वह उसी की तरफ़ लौटा दिये जायेंगे।"

आयत 37

وَقَالُوۡا لَوۡلَا نُزِّلَ عَلَيۡهِ اٰيَةٌ مِّنۡ رَّبِّهٖ‌ؕ

"और वह कहते हैं क्यों नहीं उतार दी गयी उन पर कोई निशानी उनके रब की तरफ़ से?"

उनके पास दलील बस यही एक रह गयी थी कि अगर यह अल्लाह के रसूल हैं तो इन पर इनके परवरदिगार की तरफ़ से कोई निशानी क्यों नहीं उतार दी जाती? इसी एक हज्जत पर उन्होंने डेरा लगा लिया था। बाक़ी सारी दलीलों में वह मात खा रहे थे। दरअसल उन्हें भी अंदाज़ा हो चुका था कि इन हालात में कोई हिस्सा मौज्ज़ा दिखाना अल्लाह तआला की मशीयत में नहीं है। इस सूरते हाल में हुज़ूर ﷺ की तबीयत की तंगी (ज़ीक़) का

अंदाज़ा इससे लगायें कि क़ुरान में बार-बार इसका ज़िक्र आता है। सूरतुल हिज्र में इसी कैफ़ियत का ज़िक्र इन अल्फ़ाज़ में आया है: { وَلَقَدْ نَعْلَمُ اَنَّكَ يَضِيْقُ صَدْرُكَ بِمَا يَقُوْلُوْنَ} (आयत:97) "हम खूब जानते हैं कि आपका सीना भिंचता है उन बातों से जो यह कह रहे हैं...."

قُلْ اِنَّ اللّٰهَ قَادِرٌ عَلٰٓى اَنْ يُّنَزِّلَ اٰيَةً وَّلٰكِنَّ اَكْثَرَهُمْ لَا يَعْلَمُوْنَ ﴿٣٧﴾

"कह दो, अल्लाह क़ादिर है कि वह कोई (बड़ी से बड़ी) निशानी उतार दे लेकिन इनमें से अक्सर लोग जानते नहीं हैं।"

यह लोग नहीं जानते कि इस तरह का मौज्ज़ा दिखाने का नतीजा क्या निकलेगा। इस तरह इनकी मोहलत ख़त्म हो जायेगी। यह हमारी रहमत है कि अभी हम यह मौज्ज़ा नहीं दिखा रहे। यह बदबख्त लोग जिस मौक़फ़ पर मोर्चा लगा कर बैठ गये हैं उसकी हस्सासियत का इन्हें इल्म ही नहीं। इन्हें मालूम नहीं है कि मौज्ज़ा ना दिखाना इनके लिये हमारी रहमत का ज़हूर है और हम अभी इन्हें मज़ीद मोहलत देना चाहते हैं। हम चाहते हैं कि यह दूध अभी और बिलोया जाये, शायद इसमें से कुछ और मक्खन निकल आये।

आयत 38

وَمَا مِنْ دَآبَّةٍ فِي الْاَرْضِ وَلَا طٰٓئِرٍ يَّطِيْرُ بِجَنَاحَيْهِ اِلَّآ اُمَمٌ اَمْثَالُكُمْ ؕ

"और नहीं है ज़मीन पर चलने वाला कोई भी जानवर और ना कोई परिंदा जो अपने दोनों बाज़ुओं से उड़ता है, मगर वह भी तुम्हारी ही तरह की उम्मतें हैं।"

उन तमाम जानवरों, परिंदों और कीड़ों-मकोड़ों के रहने-सहने के भी अपने-अपने तौर-तरीक़े और निज़ाम हैं, उनके अपने लीडर्स होते हैं। यह चीज़ें आज की साइंसी तहक़ीक़ से साबित शुदा हैं। चीटियों की एक मलका होती है, जिसके मा-तहत वह रहती और काम वगैरह करती हैं। इसी तरह शहद की मक्खियों की भी मलका होती है।

مَا فَرَّطْنَا فِي الْكِتٰبِ مِنْ شَيْءٍ ثُمَّ اِلٰى رَبِّهِمْ يُحْشَرُوْنَ ﴿٣٨﴾

"हमने तो अपनी किताब में किसी शय की कोई कमी नहीं रखी है, फिर यह अपने रब की तरफ़ लौटाये जाएँगे।"

क़ुरान में हमने हर तरह के दलाइल दे दिये हैं, हर तरह के शवाहिद पेश कर दिये हैं, हर तरह से इस्तशहाद कर दिया है। इन सबको आखिरकार अपने रब के हुज़ूर पेश होना है। वहाँ पर हर एक को अपने किये का पूरा बदला मिल जायेगा।

आयत 39

وَالَّذِيْنَ كَذَّبُوْا بِاٰيٰتِنَا صُمٌّ وَّبُكْمٌ فِي الظُّلُمٰتِ ؕ

"और जिन लोगों ने हमारी आयात को झुठलाया वह बहरे और गूंगे हैं (और) अंधेरों में (भटक रहे) हैं।"

مَنْ يَّشَاِ اللّٰهُ يُضْلِلْهُ ؕ وَمَنْ يَّشَاْ يَجْعَلْهُ عَلٰى صِرَاطٍ مُّسْتَقِيْمٍ ﴿٣٩﴾

"जिसको अल्लाह चाहता है गुमराह कर देता है और जिसको चाहता है सीधे रास्ते पर ले आता है।"

"अल्लाह गुमराह कर देता है" का मफ़हूम यह है कि उसकी गुमराही पर मोहरे तस्दीक़ सब्त कर देता है, उसकी गुमराही का फ़ैसला कर देता है।

आयत 40

قُلْ اَرَءَيْتَكُمْ اِنْ اَتٰىكُمْ عَذَابُ اللّٰهِ اَوْ اَتَتْكُمُ السَّاعَةُ اَغَيْرَ اللّٰهِ تَدْعُوْنَ ۚ اِنْ كُنْتُمْ صٰدِقِيْنَ ۝٤٠

"इनसे कहिये, ज़रा गौर करो, अगर तुम पर (किसी वक़्त) अल्लाह का अज़ाब आ जाये या तुम पर क़यामत आ जाये तो (उस वक़्त) क्या तुम सिवाय अल्लाह के किसी और को पुकारोगे? अगर तुम सच्चे हो (तो ज़रा जवाब दो)!"

यह भी मुतजस्साना (searching) अंदाज़ में उनसे सवाल किया जा रहा है। यह उनका मामूल भी था और मुशाहिदा भी, कि जब भी कभी कोई मुसीबत आती, समुन्दर में सफ़र के दौरान कभी तूफ़ान आ जाता, मौत सामने नज़र आने लगती तो फिर लात, मनात, उज्ज़ा, हुबल वगैरह में से कोई भी दूसरा ख़ुदा उन्हें याद ना रहता। ऐसे मुश्किल वक़्त में वह सिर्फ़ अल्लाह ही को पुकारते थे। चुनाँचे ख़ुद उनसे सवाल किया जा रहा है कि हर शख्स ज़रा अपने दिल से पूछे, कि आख़िर मुसीबत के वक़्त हमें एक अल्लाह ही क्यों याद आता है? गोया एक अल्लाह को मानना और उस पर ईमान रखना इन्सान की फ़ितरत का तक़ाज़ा है। किसी शख्स में शराफ़त की कुछ भी रमक़ मौजूद हो तो इस तरह के सवालात के जवाब में उसका दिल ज़रूर गवाही देता है कि हाँ बात तो ठीक है, ऐसे मौक़ों पर हमारी अंदरूनी कैफ़ियत बिल्कुल ऐसी ही होती है और बेइख़्तियार "अल्लाह" ही का नाम ज़बान पर आता है।

आयत 41

بَلْ اِيَّاهُ تَدْعُوْنَ فَيَكْشِفُ مَا تَدْعُوْنَ اِلَيْهِ اِنْ شَآءَ وَتَنْسَوْنَ مَا تُشْرِكُوْنَ ۝٤١

"बल्कि (मुसीबत की घड़ी में) तुम उसी को पुकारते हो, फिर अगर वह चाहता है तो जिस तकलीफ़ के लिये तुम उसे पुकारते हो वह दूर कर देता है और (ऐसे मौक़ों पर) तुम भूल जाते हो उनको जिनको तुम शरीक ठहराते हो।"

आयात 42 से 50 तक

وَلَقَدْ اَرْسَلْنَآ اِلٰٓى اُمَمٍ مِّنْ قَبْلِكَ فَاَخَذْنٰهُمْ بِالْبَاْسَآءِ وَالضَّرَّآءِ لَعَلَّهُمْ يَتَضَرَّعُوْنَ ۝٤٢ فَلَوْلَآ اِذْ جَآءَهُمْ بَاْسُنَا تَضَرَّعُوْا وَلٰكِنْ قَسَتْ قُلُوْبُهُمْ وَزَيَّنَ لَهُمُ الشَّيْطٰنُ مَا كَانُوْا يَعْمَلُوْنَ ۝٤٣ فَلَمَّا نَسُوْا مَا ذُكِّرُوْا بِهٖ فَتَحْنَا عَلَيْهِمْ اَبْوَابَ كُلِّ شَيْءٍ ۭ حَتّٰٓى اِذَا فَرِحُوْا بِمَآ اُوْتُوْٓا اَخَذْنٰهُمْ بَغْتَةً فَاِذَا هُمْ مُّبْلِسُوْنَ ۝٤٤ فَقُطِعَ دَابِرُ الْقَوْمِ الَّذِيْنَ ظَلَمُوْا ۭ وَالْحَمْدُ لِلّٰهِ رَبِّ الْعٰلَمِيْنَ ۝٤٥ قُلْ اَرَءَيْتُمْ اِنْ اَخَذَ اللّٰهُ سَمْعَكُمْ وَاَبْصَارَكُمْ وَخَتَمَ عَلٰي قُلُوْبِكُمْ مَّنْ اِلٰهٌ غَيْرُ اللّٰهِ يَاْتِيْكُمْ بِهٖ ۭ اُنْظُرْ كَيْفَ نُصَرِّفُ الْاٰيٰتِ ثُمَّ هُمْ يَصْدِفُوْنَ ۝٤٦ قُلْ اَرَءَيْتَكُمْ اِنْ اَتٰىكُمْ عَذَابُ اللّٰهِ بَغْتَةً اَوْ جَهْرَةً هَلْ يُهْلَكُ اِلَّا الْقَوْمُ الظّٰلِمُوْنَ ۝٤٧ وَمَا نُرْسِلُ الْمُرْسَلِيْنَ اِلَّا مُبَشِّرِيْنَ وَمُنْذِرِيْنَ ۚ فَمَنْ اٰمَنَ وَاَصْلَحَ فَلَا خَوْفٌ عَلَيْهِمْ وَلَا هُمْ يَحْزَنُوْنَ ۝٤٨ وَالَّذِيْنَ كَذَّبُوْا بِاٰيٰتِنَا يَمَسُّهُمُ الْعَذَابُ بِمَا كَانُوْا يَفْسُقُوْنَ ۝٤٩ قُلْ لَّآ اَقُوْلُ لَكُمْ عِنْدِيْ خَزَآئِنُ اللّٰهِ وَلَآ اَعْلَمُ الْغَيْبَ وَلَآ اَقُوْلُ لَكُمْ اِنِّىْ مَلَكٌ ۚ اِنْ اَتَّبِعُ اِلَّا مَا يُوْحٰٓى اِلَيَّ ۭ قُلْ هَلْ يَسْتَوِي الْاَعْمٰى وَالْبَصِيْرُ ۭ اَفَلَا تَتَفَكَّرُوْنَ ۝٥٠ ۧ

आयात 42

وَلَقَدۡ اَرۡسَلۡنَاۤ اِلٰۤی اُمَمٍ مِّنۡ قَبۡلِكَ فَاَخَذۡنٰهُمۡ بِالۡبَاۡسَآءِ وَالضَّرَّآءِ لَعَلَّهُمۡ یَتَضَرَّعُوۡنَ ﴿۴۲﴾

"और हमने भेजा है बहुत सी उम्मतों की तरफ़ आप ﷺ से क़ब्ल (रसूलों को), फिर हमने पकड़ा उन्हें सख्तियों और तकलीफ़ों से, शायद कि वह आजिज़ी करें।"

यहाँ रसूलों के बारे में एक अहम क़ानून बयान हो रहा है (वाज़ेह रहे कि यहाँ अम्बिया नहीं बल्कि रसूल मुराद हैं।) जब भी किसी क़ौम की तरफ़ कोई रसूल भेजा जाता था तो उस क़ौम को ख़्वाबे ग़फ़लत से जगाने के लिये अल्लाह तआला की तरफ़ से छोटे-छोटे अज़ाब आते थे, लेकिन अगर वह क़ौम इसके बावजूद भी ना सम्भलती और अपने रसूल पर ईमान ना लाती, तो अल्लाह तआला की तरफ़ से उनकी रस्सी ढीली कर दी जाती थी, ताकि जो चंद दिन की मोहलत है उसमें वह ख़ूब दिल खोल कर मनमानियाँ कर लें। फिर अचानक अल्लाह का बड़ा अज़ाब उनको आ पकड़ता था जिससे वह क़ौम नेस्तो नाबूद कर दी जाती थी। यह मज़मून असल में सूरतुल आराफ़ का उमूद है और वहाँ बड़ी तफ़सील से बयान हुआ है।

आयत 43

فَلَوۡلَاۤ اِذۡ جَآءَهُمۡ بَاۡسُنَا تَضَرَّعُوۡا وَلٰكِنۡ قَسَتۡ قُلُوۡبُهُمۡ وَزَیَّنَ لَهُمُ الشَّیۡطٰنُ مَا كَانُوۡا یَعۡمَلُوۡنَ ﴿۴۳﴾

"तो क्यों ना ऐसा हुआ कि जब हमारी तरफ़ से कोई सख्ती उन पर आयी तो वह गिडगिड़ाते, लेकिन उनके दिल तो सख्त हो चुके थे और शैतान ने मुज़य्यन किये रखा उनके लिये उन आमाल को जो वह कर रहे थे।"

यानि अल्लाह की तरफ़ से बार-बार की तम्बीहात के बावजूद सोचने, समझने और अपने रवैय्ये पर नज़रे सानी करने के लिये आमादा नहीं हुए।

आयत 44

فَلَمَّا نَسُوۡا مَا ذُكِّرُوۡا بِهٖ فَتَحۡنَا عَلَیۡهِمۡ اَبۡوَابَ كُلِّ شَیۡءٍ ؕ

"फिर जब उन्होंने भुला दिया उस नसीहत को जो उनको की गयी थी तो हमने उन पर दरवाज़े खोल दिये हर चीज़ के।"

कि अब खाओ-पियो, ऐश करो, अब दुनिया में हर क़िस्म की नेअमतें तुम्हें मिलेंगी, ताकि इस दुनिया में जो तुम्हारा नसीब है उससे ख़ूब फ़ायदा उठा लो।

حَتّٰۤی اِذَا فَرِحُوۡا بِمَاۤ اُوۡتُوۡۤا اَخَذۡنٰهُمۡ بَغۡتَةً فَاِذَا هُمۡ مُّبۡلِسُوۡنَ ﴿۴۴﴾

"यहाँ तक कि जब वह इतराने लगे उन चीज़ों पर जो उन्हें मिल गयी थीं तो अचानक हमने उन्हें पकड़ लिया, फिर वह बिल्कुल मायूस होकर रह गये।"

आयत 45

فَقُطِعَ دَابِرُ الۡقَوۡمِ الَّذِیۡنَ ظَلَمُوۡا ؕ وَالۡحَمۡدُ لِلّٰهِ رَبِّ الۡعٰلَمِیۡنَ ﴿۴۵﴾

"फिर जड़ काट दी गयी उस क़ौम की जिसने ज़ुल्म (और कुफ़्र व शिर्क) की रविश इख़्तियार की थी, और कुल शुक्र और तारीफ़ अल्लाह ही के लिये है जो तमाम जहानों का परवरदिगार है।"

आयत 46

قُلْ اَرَءَيْتُمْ اِنْ اَخَذَ اللّٰهُ سَمْعَكُمْ وَاَبْصَارَكُمْ وَخَتَمَ عَلٰى قُلُوْبِكُمْ مَّنْ اِلٰهٌ غَيْرُ اللّٰهِ يَاْتِيْكُمْ بِهٖ

"(ऐ नबी ﷺ इनसे) पूछिये! क्या तुमने कभी गौर किया कि अगर अल्लाह तुम्हारी आँखें और तुम्हारे कान छीन ले और तुम्हारे दिलों पर मोहर कर दे तो अल्लाह के सिवा कौनसा मअबूद है जो दोबारा तुम्हें यह (सारी सलाहियतें) दिलायेगा?"

اُنْظُرْ كَيْفَ نُصَرِّفُ الْاٰيٰتِ ثُمَّ هُمْ يَصْدِفُوْنَ ﴿٤٦﴾

"देखिये हम किस तरह इनके लिये अपनी आयात मुख्तलिफ़ पहलुओं से पेश करते हैं, फिर भी वह किनारा कशी करते हैं।"

"इक फूल का मज़मूँ हो तो सौ रंग से बाँधूं" के मिस्दाक़ हम यह सारे मज़ामीन फिरा-फिरा कर, मुख्तलिफ़ अंदाज़ से मुख्तलिफ़ असालेब (ढंग) से इनके सामने ला रहे हैं, मगर इसके बावजूद यह लोग ऐराज़ कर रहे हैं और ईमान नहीं ला रहे।

आयत 47

قُلْ اَرَءَيْتَكُمْ اِنْ اَتٰىكُمْ عَذَابُ اللّٰهِ بَغْتَةً اَوْ جَهْرَةً هَلْ يُهْلَكُ اِلَّا الْقَوْمُ الظّٰلِمُوْنَ ﴿٤٧﴾

"(इनसे) कहिये देखो तो अगर तुम पर अज़ाब आ जाये अचानक या अलल ऐलान, तो कौन हलाक होगा सिवाय ज़ालिमों के?"

यह अज़ाब अचानक आये या बतदरीज, पेशगी इत्तलाअ के बगैर वारिद हो जाये या डंके की चोट ऐलान करके आये, हलाक तो हर सूरत में वही लोग होंगे जो रसूल अलै. की दावत को ठुकरा कर, अपनी जानों पर ज़ुल्म के मुरतकिब हुए हैं। अब अम्बिया व रुसुल अलै. की बेअसत का वही बुनियादी मक़सद बयान हो रहा है जो इससे पहले हम सूरतुन्निसा (आयत 165) में पढ़ चुके हैं: {.....رُسُلًا مُّبَشِّرِيْنَ وَمُنْذِرِيْنَ}।

आयत 48

وَمَا نُرْسِلُ الْمُرْسَلِيْنَ اِلَّا مُبَشِّرِيْنَ وَمُنْذِرِيْنَ ۚ

"हम नहीं भेजते रहे हैं अपने रसूलों को मगर खुशखबरी देने वाले और ख़बरदार करने वाले बना कर।"

فَمَنْ اٰمَنَ وَاَصْلَحَ فَلَا خَوْفٌ عَلَيْهِمْ وَلَا هُمْ يَحْزَنُوْنَ ﴿٤٨﴾

"तो जो लोग ईमान ले आये और उन्होंने अपनी इस्लाह कर ली तो उन पर ना कोई खौफ़ है और ना वह ग़मगीन होंगे।"

यानि तमाम अम्बिया व रुसुल अहले हक़ के लिये बशारत देने वाले और अहले बातिल के लिये ख़बरदार करने वाले थे।

आयत 49

وَالَّذِيْنَ كَذَّبُوْا بِاٰيٰتِنَا يَمَسُّهُمُ الْعَذَابُ بِمَا كَانُوْا يَفْسُقُوْنَ ﴿٤٩﴾

"और वह लोग जिन्होंने हमारी आयात को झुठलाया उन पर अज़ाब मुसल्लत होकर रहेगा उनकी नाफ़रमानी के बाइस।"

आयत 50

قُلْ لَّآ اَقُوْلُ لَكُمْ عِنْدِيْ خَزَآئِنُ اللّٰهِ وَلَآ اَعْلَمُ الْغَيْبَ وَلَآ اَقُوْلُ لَكُمْ اِنِّيْ مَلَكٌ ۚ

"(ऐ नबी ﷺ इनसे) कह दीजिये कि मैं तुमसे यह नहीं कहता कि मेरे इख़्तियार में हैं अल्लाह के खज़ाने और ना (मैंने दावा किया है कि) मुझे गैब का इल्म हासिल है

और ना मैंने (कभी) यह कहा है कि मैं फ़रिश्ता हूँ।”

तुम लोग मुझसे मौज्ज़ात के मुतालबात करते हो और गैब के अहवाल पूछते हो, लेकिन किसी शख्स से मुतालबा तो किया जाना चाहिये उसके दावे के मुताबिक़। मैंने कब दावा किया है कि मैं गैब जानता हूँ और अलुहियत में मेरा हिस्सा है। मेरा दावा तो यह है कि मैं अल्लाह का एक बंदा हूँ, बशर हूँ, मुझ पर वही आती है, मुझे मामूर किया गया है कि तुम्हें ख़बरदार कर दूँ और वह काम मैं कर रहा हूँ।

اِنْ اَتَّبِعُ اِلَّا مَا یُوْحٰۤی اِلَیَّ

“मैं तो बस इत्तेबाअ कर रहा हूँ उस शय का जो मेरी तरफ़ वही की जाती है।”

قُلْ هَلْ یَسْتَوِی الْاَعْمٰی وَ الْبَصِیْرُ ۭ اَفَلَا تَتَفَكَّرُوْنَ ۝۵۰

“कहिये तो क्या अब बराबर हो जायेंगे अंधे और देखने वाले? तो क्या तुम गौरो फ़िक्र से काम नहीं लेते?”

आयात 51 से 55 तक

وَاَنْذِرْ بِهِ الَّذِیْنَ یَخَافُوْنَ اَنْ یُّحْشَرُوْۤا اِلٰی رَبِّهِمْ لَیْسَ لَهُمْ مِّنْ دُوْنِهٖ وَلِیٌّ وَّلَا
شَفِیْعٌ لَّعَلَّهُمْ یَتَّقُوْنَ ۝۵۱ وَلَا تَطْرُدِ الَّذِیْنَ یَدْعُوْنَ رَبَّهُمْ بِالْغَدٰوةِ وَالْعَشِیِّ
یُرِیْدُوْنَ وَجْهَهٗ ۭ مَا عَلَیْكَ مِنْ حِسَابِهِمْ مِّنْ شَیْءٍ وَّمَا مِنْ حِسَابِكَ عَلَیْهِمْ مِّنْ
شَیْءٍ فَتَطْرُدَهُمْ فَتَكُوْنَ مِنَ الظّٰلِمِیْنَ ۝۵۲ وَكَذٰلِكَ فَتَنَّا بَعْضَهُمْ بِبَعْضٍ
لِّیَقُوْلُوْۤا اَهٰۤؤُلَاۤءِ مَنَّ اللّٰهُ عَلَیْهِمْ مِّنْۢ بَیْنِنَا ۭ اَلَیْسَ اللّٰهُ بِاَعْلَمَ بِالشّٰكِرِیْنَ ۝۵۳
وَاِذَا جَآءَكَ الَّذِیْنَ یُؤْمِنُوْنَ بِاٰیٰتِنَا فَقُلْ سَلٰمٌ عَلَیْكُمْ كَتَبَ رَبُّكُمْ عَلٰی نَفْسِهِ
الرَّحْمَةَ ۙ اَنَّهٗ مَنْ عَمِلَ مِنْكُمْ سُوْۗءًۢا بِجَهَالَةٍ ثُمَّ تَابَ مِنْۢ بَعْدِهٖ وَاَصْلَحَ ۙ فَاَنَّهٗ غَفُوْرٌ
رَّحِیْمٌ ۝۵۴ وَكَذٰلِكَ نُفَصِّلُ الْاٰیٰتِ وَلِتَسْتَبِیْنَ سَبِیْلُ الْمُجْرِمِیْنَ ۝۵۵

अभी पिछले रुकूअ में हमने पढ़ा: { وَمَا نُرْسِلُ الْمُرْسَلِیْنَ اِلَّا مُبَشِّرِیْنَ وَمُنْذِرِیْنَ } (आयत 48) कि तमाम रसूल तब्शीर और इन्ज़ार के लिये आते रहे और इसी सूरत में हम यह भी पढ़ चुके हैं कि हुज़ूर ﷺ की ज़बाने मुबारक से कहलवाया गया: { وَاُوْحِیَ اِلَیَّ هٰذَا الْقُرْاٰنُ لِاُنْذِرَكُمْ بِهٖ وَمَنْۢ بَلَغَ } (आयत 19) “यह क़ुरान मेरी तरफ़ वही किया गया है ताकि इसके ज़रिये से मैं ख़बरदार करूँ तुम लोगों को और उन तमाम लोगों को भी जिन तक यह पहुँचे।” यहाँ अब फिर क़ुरान के ज़रिये से (بِهٖ) इन्ज़ार का हुक्म आ रहा है कि (ऐ नबी ﷺ) आपका काम इन्ज़ार और तब्शीर है जिसे आप इस क़ुरान के ज़रिये से सरअंजाम दें।

आयत 51

وَاَنْذِرْ بِهِ الَّذِیْنَ یَخَافُوْنَ اَنْ یُّحْشَرُوْۤا اِلٰی رَبِّهِمْ

“और ख़बरदार कर दीजिये इस (क़ुरान) के ज़रिये से उन लोगों को जिन्हें वाक़िअतन कुछ खौफ़ है कि वह अपने रब की तरफ़ इकट्ठे किये जायेंगे”

जैसा कि पहले भी ज़िक्र हो चुका है, मुशरिकीने मक्का में बहुत कम लोग थे जो बाअसे बाद अल् मौत के मुन्कर थे। उनमें ज़्यादातर लोगों का अक़ीदा यही था कि मरने के बाद हम उठाये जाएँगे, क़यामत आयेगी और अल्लाह के हुज़ूर पेशी होगी, लेकिन अपने बातिल मअबूदों के बारे में उनका गुमान था कि वह वहाँ हमारे छुड़ाने के लिये मौजूद होंगे और हमें बचा लेंगे।

لَيۡسَ لَهُمۡ مِّنۡ دُوۡنِهٖ وَلِىٌّ وَّلَا شَفِيۡعٌ لَّعَلَّهُمۡ يَتَّقُوۡنَ ﴿۵۱﴾

"इस हाल में कि उनके लिये नहीं होगा अल्लाह के सिवा कोई हिमायती और ना कोई सिफ़ारिश करने वाला, शायद कि (इस तरह समझाने से) उनमें कुछ तक़वा पैदा हो जाये।"

उनको ख़बरदार कर दें कि अपने बातिल मअबूदों और उनकी शफ़ाअत के सहारे के बारे में अपनी ग़लत फ़हमियों को दूर कर लें। शायद कि हक़ीक़ते हाल का इदराक होने के बाद उनके दिलों में कुछ खौफ़े ख़ुदा पैदा हो जाये।

आयत 52

وَلَا تَطۡرُدِ الَّذِيۡنَ يَدۡعُوۡنَ رَبَّهُمۡ بِالۡغَدٰوةِ وَالۡعَشِىِّ يُرِيۡدُوۡنَ وَجۡهَهٗ

"और मत धुत्कारिये आप उन लोगों को जो पुकारते हैं अपने रब को सुबह-शाम (और) उसकी रज़ा के तालिब हैं।"

दरअसल यह इशारा है उस मामले की तरफ़ जो तक़रीबन तमाम रसूलों के साथ पेश आया। वाक़िया यह है कि आम तौर पर रसूलों की दावत पर सबसे पहले मुफ़लिस और नादार लोग ही लब्बैक कहते रहे हैं। ऐसे लोगों को नबी की महफ़िल में देख कर साहिबे सरवत व हैसियत लोग उस दावत से इसलिये भी बिदकते थे कि अगर हम ईमान लाएँगे तो हमें इन लोगों के साथ बैठना पड़ेगा। इस सिलसिले में हज़रत नूह अलै. की क़ौम का क़ुरान में ख़ुसूसी तौर पर ज़िक्र हुआ है कि आप अलै. की क़ौम के सरदार कहते थे कि ऐ नूह हम तो आपके पास आना चाहते हैं, आपके पैगाम को समझना चाहते हैं, लेकिन हम जब आपके इर्द-गिर्द इन घटिया क़िस्म के लोगों को बैठे हुए देखते हैं तो हमारी गैरत यह गवारा नहीं करती कि हम इनके साथ बैठें। यही बात क़ुरैश के सरदारान रसूल अल्लाह ﷺ से कहते थे कि आप ﷺ के पास हर वक़्त जिन लोगों का जमघटा लगा रहता है वह लोग हमारे मआशरे के पस्त तबक़ात से ताल्लुक़ रखते हैं, इनमें से अक्सर हमारे गुलाम हैं। ऐसे लोगों की मौजूदगी में आपकी महफ़िल में बैठना हमारे शायाने शान नहीं। उनकी ऐसी बातों के जवाब में फ़रमाया जा रहा है कि ऐ नबी (ﷺ) आप उनकी बातों से कोई असर ना लें, आप ﷺ ख्वाह मा ख्वाह अपने इन साथियों को ख़ुद से दूर ना करें। अगर वह गरीब हैं या उनका ताल्लुक़ पस्त तबक़ात से है तो क्या हुआ, उनकी शान तो यह है कि वह सुहब-शाम अल्लाह को पुकारते हैं, अल्लाह से मुनाजात करते हैं, उसकी तस्बीह व तहमीद करते हैं, उसके रुए अनवर के तालिब हैं और उसकी रज़ा चाहते हैं। सूरतुल बक़रह में ऐसे लोगों के बारे में ही फ़रमाया गया है: { مَنۡ يَّشۡرِىۡ نَفۡسَهُ ابۡتِغَآءَ مَرۡضَاتِ اللّٰهِ ؕ } (आयत 207) कि यह वह लोग हैं जिन्होंने अपनी जानें और अपनी ज़िन्दगियाँ अल्लाह की रज़ा जोई के लिये वक़्फ़ कर दी हैं।

مَا عَلَيۡكَ مِنۡ حِسَابِهِمۡ مِّنۡ شَىۡءٍ وَّمَا مِنۡ حِسَابِكَ عَلَيۡهِمۡ مِّنۡ شَىۡءٍ

"आपके ज़िम्मे उनके हिसाब में से कुछ नहीं है और ना आपके हिसाब में से उनके ज़िम्मे कुछ है"

यानि हर शख्स अपने आमाल के लिये ख़ुद जवाबदेह है और हर शख्स को अपनी कमाई ख़ुद करनी है। उनकी ज़िम्मेदारी का कोई हिस्सा आप पर नहीं है। आप ﷺ के ज़िम्मे आपका फ़र्ज़ है, वह आप अदा करते रहें। जो लोग आप ﷺ की दावत पर ईमान ला रहे हैं वह भी अल्लाह की नज़र में हैं और जो इससे पहलु तही कर रहे हैं उनका हिसाब भी वह ले लेगा। हर एक को उसके तर्ज़े अमल के मुताबिक़ बदला दिया जायेगा। ना आप ﷺ उनकी तरफ़ से जवाबदेह हैं और ना वह आप ﷺ की तरफ़ से।

فَتَطۡرُدَهُمۡ فَتَكُوۡنَ مِنَ الظّٰلِمِيۡنَ ﴿۵۲﴾

"तो अगर (बिलफ़र्ज़) आप उन्हें अपने से दूर करेंगे तो आप ज़ालिमों में से हो जाएँगे।"

आयत 53

وَ كَذٰلِكَ فَتَنَّا بَعْضَهُمْ بِبَعْضٍ

"और इसी तरह हमने उनमें से बाज़ को बाज़ के ज़रिये से आज़माया है"

यह अल्लाह की आज़माइश का एक तरीक़ा है। मसलन एक शख्स मुफ़लिस और नादार है, अगर वह किसी दौलतमन्द और साहिबे मंसब व हैसियत शख्स को हक़ की दावत देता है तो वह उस पर हक़ारत भारी नज़र डाल कर मुस्कुरायेगा कि इसको देखो और और इसकी औक़ात को देखो, यह समझाने चला है मुझको! हालाँकि उसूली तौर पर उस साहिबे हैसियत शख्स को गौर करना चाहिये कि जो बात उससे कही जा रही है वह सही है या ग़लत, ना कि बात कहने वाले के मरतबा व मंसब को देखना चाहिये। अल्लाह तआला फ़रमाते हैं कि इस तरह हम लोगों की आज़माइश करते हैं।

لِّيَقُوْلُوْٓا اَهٰٓؤُلَآءِ مَنَّ اللّٰهُ عَلَيْهِمْ مِّنْۢ بَيْنِنَا ؕ اَلَيْسَ اللّٰهُ بِاَعْلَمَ بِالشّٰكِرِيْنَ ۝

"ताकि वह कहें कि क्या यही लोग हैं जिन पर अल्लाह ने ख़ास ईनाम किया है हम में से? तो क्या अल्लाह ज़्यादा वाक़िफ़ नहीं है उनसे जो वाक़िअतन उसका शुक्र करने वाले हैं?"

साहिबे हैसियत लोग तो दावा रखते हैं कि अल्लाह का ईनाम और अहसान तो हम पर हुआ है, दौलतमन्द तो हम हैं, चौधराहटें तो हमारी हैं। यह जो गिरे-पड़े तबक़ात के लोग हैं इनको हम पर फ़ज़ीलत कैसे मिल सकती है? मक्का के लोग भी इसी तरह की बातें किया करते थे कि अगर अल्लाह ने अपनी किताब नाज़िल करनी थी, किसी को नबुवत देनी ही थी तो उसके लिये कोई "رَجُل مِنَ الْقَرْيَتَيْن عَظِيْم" मुन्तखब किया जाता। यानि यह मक्का और ताइफ़ जो दो बड़े शहर हैं इनमें बड़े-बड़े सरदार हैं, सरमायादार हैं, बड़ी-बड़ी शख्सियात हैं, उनमें से किसी को नबुवत मिलती तो कोई बात भी थी। यह क्या हुआ कि मक्का का एक यतीम जिसका बचपन मुफ़लिसी में गुज़रा है, जवानी मशक्क़त में कटी है, जिसके पास कोई दौलत है ना कोई मंसब, वह नबुवत का दावेदार बन गया है। इस क़िस्म के ऐतराज़ात का एक और मुस्किल जवाब इसी सूरत की आयत नम्बर 124 में इन अल्फ़ाज़ में आयेगा: { اَللّٰهُ اَعْلَمُ حَيْثُ يَجْعَلُ رِسَالَتَهٗ } "अल्लाह तआला बेहतर जानता है कि अपनी रिसालत का मंसब किसको देना चाहिये।" और किस में इस मंसब को सम्भालने की सलाहियत है। जैसे तालूत के बारे में लोगों ने कह दिया था कि वह कैसे बादशाह बन सकता है जबकि उसे तो माल व दौलत की वुसअत भी नहीं दी गयी: { وَلَمْ يُؤْتَ سَعَةً مِّنَ الْمَالِ } (अल् बक़रह:247)। हम दौलतमन्द हैं, हमारे मुक़ाबले में इसकी कोई माली हैसियत नहीं। इसका जवाब यूँ दिया गया कि तालूत को जिस्म और इल्म के अन्दर कुशादगी { بَسْطَةً فِي الْعِلْمِ وَالْجِسْمِ } अता फ़रमायी गयी है। लिहाज़ा उसमें बादशाह बनने की अहलियत तुम लोगों से ज़्यादा है।

यहाँ रसूल अल्लाह ﷺ को बताया जा रहा है कि इन गरीब व नादार मोमिनीन के साथ आपका मामला कैसा होना चाहिये।

आयत 54

وَاِذَا جَآءَكَ الَّذِيْنَ يُؤْمِنُوْنَ بِاٰيٰتِنَا فَقُلْ سَلٰمٌ عَلَيْكُمْ ۘ كَتَبَ رَبُّكُمْ عَلٰى نَفْسِهِ الرَّحْمَةَ ۙ

"जब आप ﷺ के पास आयें वह लोग जो हमारी आयात पर ईमान रखते हैं तो आप उनसे कहें कि तुम पर सलामती हो, तुम्हारे रब ने अपने ऊपर रहमत को लाज़िम कर लिया है"

بِالظّٰلِمِيْنَ ﴿٥٨﴾ وَعِنْدَهٗ مَفَاتِحُ الْغَيْبِ لَا يَعْلَمُهَآ اِلَّا هُوَ ؕ وَيَعْلَمُ مَا فِي الْبَرِّ وَالْبَحْرِ ؕ
وَمَا تَسْقُطُ مِنْ وَّرَقَةٍ اِلَّا يَعْلَمُهَا وَلَا حَبَّةٍ فِيْ ظُلُمٰتِ الْاَرْضِ وَلَا رَطْبٍ وَّلَا
يَابِسٍ اِلَّا فِيْ كِتٰبٍ مُّبِيْنٍ ﴿٥٩﴾ وَهُوَ الَّذِيْ يَتَوَفّٰىكُمْ بِالَّيْلِ وَيَعْلَمُ مَا جَرَحْتُمْ
بِالنَّهَارِ ثُمَّ يَبْعَثُكُمْ فِيْهِ لِيُقْضٰٓى اَجَلٌ مُّسَمًّى ۚ ثُمَّ اِلَيْهِ مَرْجِعُكُمْ ثُمَّ يُنَبِّئُكُمْ بِمَا
كُنْتُمْ تَعْمَلُوْنَ ﴿٦٠﴾

आयत 56

قُلْ اِنِّيْ نُهِيْتُ اَنْ اَعْبُدَ الَّذِيْنَ تَدْعُوْنَ مِنْ دُوْنِ اللّٰهِ ؕ

"(ऐ नबी ﷺ) कह दीजिये कि मुझे तो मना कर दिया गया है उनको पूजने से जिनको तुम पुकारते हो अल्लाह के सिवा।"

यह लात, मनात, उज्ज़ा वगैरह जिनको तुम लोग अल्लाह के अलावा मअबूद मानते हो, उनको मैं नहीं पुकार सकता। मुझे इससे मना कर दिया गया है। मुझे तो हुक्म दिया गया है: {فَلَا تَدْعُوْا مَعَ اللّٰهِ اَحَدًا} (अल् जिन:18) कि अल्लाह के साथ किसी और को मत पुकारो।

قُلْ لَّآ اَتَّبِعُ اَهْوَآءَكُمْ ۙ قَدْ ضَلَلْتُ اِذًا
وَّمَآ اَنَا مِنَ الْمُهْتَدِيْنَ ﴿٥٦﴾

"कह दीजिये कि मैं तुम्हारी ख्वाहिशात की पैरवी नहीं कर सकता, अगर ऐसा करूँगा तो मैं गुमराह हो जाऊँगा और फिर ना रहूँगा मैं हिदायत पाने वालों में।"

आयत 57

اَنَّهٗ مَنْ عَمِلَ مِنْكُمْ سُوْٓءًا بِجَهَالَةٍ ثُمَّ
تَابَ مِنْ بَعْدِهٖ وَاَصْلَحَ ۙ فَاَنَّهٗ غَفُوْرٌ
رَّحِيْمٌ ﴿٥٤﴾

"(और तुम्हारे लिये अल्लाह की ख़ास रहमत का मज़हर यह है) कि तुम में से जो कोई किसी बुरे काम का इरतकाब कर बैठेगा जहालत की बिना पर, फिर वह उसके बाद तौबा करेगा और इस्लाह कर लेगा तो यक़ीनन अल्लाह बख्शने वाला और मेहरबान है।"

आयत 55

وَكَذٰلِكَ نُفَصِّلُ الْاٰيٰتِ وَلِتَسْتَبِيْنَ
سَبِيْلُ الْمُجْرِمِيْنَ ﴿٥٥﴾

"और इसी तरह हम अपनी आयात की तफ़सील बयान करते हैं ताकि (लोग इन पर गौरो फ़िक्र करें और) मुजरिमों का रास्ता वाज़ेह हो जाये।"

यहाँ पर "نُفَصِّلُ الْاٰيٰتِ" के बाद "لِيَتَفَكَّرُوْا بِهَا" महज़ूफ़ माना जायेगा। यानि हम आयात की तफ़सील इसलिये बयान करते हैं कि लोग इन पर गौरो फ़िक्र करें। अगर वह इन पर गौर करेंगे, तफ़क्कुर करेंगे तो मुजरिमों का रास्ता उनके सामने खुल कर वाज़ेह हो जायेगा।

आयात 56 से 60 तक

قُلْ اِنِّيْ نُهِيْتُ اَنْ اَعْبُدَ الَّذِيْنَ تَدْعُوْنَ مِنْ دُوْنِ اللّٰهِ ؕ قُلْ لَّآ اَتَّبِعُ اَهْوَآءَكُمْ ۙ قَدْ
ضَلَلْتُ اِذًا وَّمَآ اَنَا مِنَ الْمُهْتَدِيْنَ ﴿٥٦﴾ قُلْ اِنِّيْ عَلٰى بَيِّنَةٍ مِّنْ رَّبِّيْ وَكَذَّبْتُمْ بِهٖ ؕ مَا
عِنْدِيْ مَا تَسْتَعْجِلُوْنَ بِهٖ ؕ اِنِ الْحُكْمُ اِلَّا لِلّٰهِ ؕ يَقُصُّ الْحَقَّ وَهُوَ خَيْرُ الْفٰصِلِيْنَ ﴿٥٧﴾
قُلْ لَّوْ اَنَّ عِنْدِيْ مَا تَسْتَعْجِلُوْنَ بِهٖ لَقُضِيَ الْاَمْرُ بَيْنِيْ وَبَيْنَكُمْ ؕ وَاللّٰهُ اَعْلَمُ

قُلۡ اِنِّیۡ عَلٰی بَیِّنَۃٍ مِّنۡ رَّبِّیۡ

"कह दीजिये कि मैं तो अपने रब की तरफ़ से एक बड़ी बय्यिना पर हूँ"

यह बय्यिना क्या है? इसकी वज़ाहत सूरह हूद में आयेगी। जैसा कि इससे पहले भी बताया जा चुका है कि एक आम इन्सान के लिये बय्यिना दो चीज़ों से मिल कर बनती है, इन्सान की फ़ितरते सलीमा और वहिये इलाही। फ़ितरते सलीमा और अक़्ले सलीम इन्सान के अन्दर अल्लाह की तरफ़ से वदीयत कर दी गयी है जिसकी बिना पर उसको नेकी-बदी और अच्छे-बुरे की तमीज़ फ़ितरी तौर पर मिल गयी है। इसके बाद अगर किसी इन्सान तक नबी या रसूल के ज़रिये से अल्लाह की वही भी पहुँच गयी और उस वही ने भी उन हक़ाइक़ की तस्दीक़ कर दी जिन तक वह अपनी फ़ितरते सलीमा और अक़्ले सलीम की रहनुमाई में पहुँच चुका था, तो उस पर हुज्जत तमाम हो गयी। इस तरह यह दोनों चीज़ें यानि फ़ितरते सलीमा और वहिये इलाही मिल कर उस शख्स के लिये बय्यिना बन गयीं। फिर अल्लाह का रसूल और वहिये इलाही दोनों मिल कर भी लोगों के हक़ में बय्यिना बन जाते हैं। ख़ुद रसूल ﷺ के हक़ में बय्यिना यह है कि आप ﷺ अपनी फ़ितरते सलीमा और अक़्ले सलीम की रहनुमाई में जिन हक़ाइक़ तक पहुँच चुके थे वहिये इलाही ने आकर उन हक़ाइक़ को उजागर कर दिया। चुनाँचे हुज़ूर ﷺ से कहलवाया जा रहा है कि आप इनको बतायें कि मैं कोई अँधेरे में टामक-टोइयाँ नहीं मार रहा, मैं तो अपने रब की तरफ़ से बय्यिना पर हूँ। मैं जिस रास्ते पर चल रहा हूँ वह बहुत वाज़ेह और रोशन रास्ता है, और मुझ पर उसकी बातिनी हक़ीक़त भी मुन्कशिफ़ है।

وَ کَذَّبۡتُمۡ بِہٖ ؕ مَا عِنۡدِیۡ مَا تَسۡتَعۡجِلُوۡنَ بِہٖ ؕ

"और तुमने उसे झुठला दिया है। मेरे पास वह शय मौजूद नहीं है जिसकी तुम जल्दी मचा रहे हो।"

वह लोग जल्दी मचा रहे थे कि ले आइये हमारे ऊपर अज़ाब। दस बरस से आप हमें अज़ाब की धमकियाँ दे रहे हैं, अब जबकि हमने आपको मानने से इन्कार कर दिया है तो वह अज़ाब हम पर आ क्यों नहीं जाता? जवाब में हुज़ूर ﷺ से फ़रमाया जा रहा है कि आप इन्हें साफ़ अल्फ़ाज़ में बता दें कि अज़ाब का फ़ैसला मेरे इख़्तियार में नहीं है, वह अज़ाब जब आयेगा, जैसा आयेगा, अल्लाह के फ़ैसले से आयेगा और जब वह चाहेगा ज़रूर आयेगा।

اِنِ الۡحُکۡمُ اِلَّا لِلّٰہِ ؕ یَقُصُّ الۡحَقَّ وَ ہُوَ خَیۡرُ الۡفٰصِلِیۡنَ ﴿۵۷﴾

"फ़ैसले का इख़्तियार किसी को नहीं सिवाय अल्लाह के। वह हक़ को खोल कर बयान कर देता है और वह सबसे अच्छा फ़ैसला करने वाला है।"

आयत 58

قُلۡ لَّوۡ اَنَّ عِنۡدِیۡ مَا تَسۡتَعۡجِلُوۡنَ بِہٖ لَقُضِیَ الۡاَمۡرُ بَیۡنِیۡ وَ بَیۡنَکُمۡ ؕ وَ اللّٰہُ اَعۡلَمُ بِالظّٰلِمِیۡنَ ﴿۵۸﴾

"कह दीजिये अगर मेरे पास वह होता जिसकी तुम जल्दी मचा रहे हो तो मेरे और तुम्हारे दरमियान (कभी का) फ़ैसला तय हो चुका होता, और अल्लाह ख़ूब वाक़िफ़ है ज़ालिमों से।"

इन अल्फ़ाज़ से एक हद तक तल्ख़ी और बेज़ारी ज़ाहिर हो रही है कि अगर यह फ़ैसला करना मेरे इख़्तियार में होता तो मैं तुम्हें मज़ीद मोहलत ना देता। अब मैं भी तुम्हारे रवैय्ये से तंग आ चुका हूँ, मेरे भी सब्र का पैमाना आखरी हद तक पहुँच चुका है।

आयत 59

وَعِنۡدَهٗ مَفَاتِحُ الۡغَيۡبِ لَا يَعۡلَمُهَاۤ اِلَّا هُوَ ؕ وَيَعۡلَمُ مَا فِى الۡبَرِّ وَالۡبَحۡرِ ؕ

"और उसी के पास गैब के सारे खज़ाने हैं, कोई नहीं जानता उन (खज़ानों) को सिवाय उसके, और वह जानता है जो कुछ है खुश्की में और समुन्दर में।"

وَمَا تَسۡقُطُ مِنۡ وَّرَقَةٍ اِلَّا يَعۡلَمُهَا

"और नहीं गिरता कोई एक पत्ता भी (किसी दरख़्त से) मगर वह उसके इल्म में होता है"

وَلَا حَبَّةٍ فِىۡ ظُلُمٰتِ الۡاَرۡضِ وَلَا رَطۡبٍ وَّلَا يَابِسٍ اِلَّا فِىۡ كِتٰبٍ مُّبِيۡنٍ ۝۵۹

"और नहीं (गिरता) कोई दाना ज़मीन की तारीकियों में, और ना कोई तरो-ताज़ा और ना कोई सूखी चीज़, मगर एक किताबे मुबय्यन में (सबकी सब) मौजूद हैं।"

यह किताबे मुबय्यन अल्लाह का इल्मे क़दीम है, जिसमें हर शय (مَا كَانَ وَ مَا يَكُوْنُ) आने वाहिद की तरह मौजूद है।

आयत 60

وَهُوَ الَّذِىۡ يَتَوَفّٰٮكُمۡ بِالَّيۡلِ

"और वही है जो तुम्हें वफ़ात देता है रात के वक़्त"

सूरह आले इमरान की आयत 55 की तशरीह के सिलसिले में يُتَوَفّٰى, يُوَفِّىۡ और مُتَوَفِّى वगैरह अल्फ़ाज़ की वज़ाहत हो चुकी है, जिससे क़ादयानियों की सारी खबासत का तोड़ हो जाता है। ज़रा गौर कीजिये! यहाँ वफ़ात देने के क्या मायने हैं? क्या नींद के दौरान इन्सान मर जाता है? नहीं, जान तो बदन में रहती है, अलबत्ता शऊर नहीं रहता। इस सिलसिले में तीन चीज़ें अलग-अलग हैं, जिस्म, जान और शऊर। फ़ारसी का एक बड़ा ख़ूबसूरत शेअर है:

जाँ निहाँ दर जिस्म, ऊ दर जाँ निहाँ
ऐ निहाँ, अन्दर निहाँ, ऐ जाने जाँ!

"जान जिस्म के अन्दर पिन्हाँ है और जान में वह पिन्हाँ है। ऐ कि जो पिन्हाँ शय के अन्दर पिन्हाँ है, तू ही तो जाने जाँ है!"

इस शेअर में "ऊ" (वह) से मुराद कुछ और है, जिसकी तफ़सील का यह मौक़ा नहीं। इस वक़्त सिर्फ़ यह समझ लीजिये कि इन तीन चीज़ों (यानि जिस्म, जान और शऊर) में से नींद में सिर्फ़ शऊर जाता है जबकि मौत में शऊर भी जाता है और जान भी चली जाती है। हज़रत ईसा अलै. का "تَوَفِّى" मुकम्मल सूरत में वक़ूअ पज़ीर हुआ था, यानि जिस्म, जान और शऊर तीनों चीज़ों के साथ। आम आदमी की मौत की सूरत में यह "تَوَفِّى" अधूरा होता है, यानि जिस्म यहीं रह जाता है, जान और शऊर चले जाते हैं, जबकि नींद की हालत में सिर्फ़ शऊर जाता है।

وَيَعۡلَمُ مَا جَرَحۡتُمۡ بِالنَّهَارِ ثُمَّ يَبۡعَثُكُمۡ فِيۡهِ لِيُقۡضٰٓى اَجَلٌ مُّسَمًّى ۚ

"और वह जानता है जो कुछ तुम करते हो दिन के वक़्त, फिर वह उसमें (अगली सुबह को) तुम्हें उठाता है, ताकि (तुम्हारी) मुद्दते मुअय्यन पूरी हो जाये।"

यानि रोज़ाना हम एक तरह से मौत की आगोश में चले जाते हैं, क्योंकि नींद आधी मौत होती है, जैसे सुबह के वक़्त उठने की मसनून दुआ में मज़कूर है: "اَلْحَمْدُ لِلّٰهِ الَّذِي أَحْيَانِيْ بَعْدَ مَا اَمَاتَنِيْ وَإِلَيْهِ النُّشُوْرُ" (कुल शुक्र और कुल तारीफ़ उस अल्लाह के लिये है जिसने मुझे दोबारा ज़िन्दा किया, इसके बाद कि मुझ पर मौत वारिद कर दी थी और उसी की तरफ़ जी उठाना है)। इस दुआ से एक बड़ा अजीब नुक्ता ज़हन में आता है। वह यह कि हर रोज़ सुबह उठते ही जिस शख्स की ज़बान पर यह अल्फ़ाज़ आते हों: "اَلْحَمْدُ لِلّٰهِ الَّذِي أَحْيَانِيْ بَعْدَ مَا اَمَاتَنِيْ وَإِلَيْهِ النُّشُوْرُ" क़यामत के दिन जब वह क़ब्र से उठेगा

तो दुनिया में अपनी आदत के सबब उसकी ज़बान पर ख़ुद-ब-ख़ुद यही तराना जारी हो जायेगा, जो उस वक़्त लफ़्ज़ी ऐतबार से सद फ़ीसद दुरुस्त होगा, क्योंकि वह उठना हक़ीक़ी मौत के बाद का उठना होगा। इसलिये ज़रूरी है कि ज़िन्दगी में रोज़ाना इसकी रिहर्सल की जाये ताकि यह आदत पुख्ता हो जाये।

ثُمَّ اِلَیۡهِ مَرۡجِعُکُمۡ ثُمَّ یُنَبِّئُکُمۡ بِمَا کُنۡتُمۡ تَعۡمَلُوۡنَ ﴿٦٠﴾

"फिर उसी की तरफ़ तुम सबका लौटना है, फिर वह तुम्हें जितला देता जो कुछ तुम करते रहे हो।"

आयात 61 से 70 तक

وَهُوَ الۡقَاهِرُ فَوۡقَ عِبَادِهٖ وَیُرۡسِلُ عَلَیۡکُمۡ حَفَظَةً ؕ حَتّٰۤی اِذَا جَآءَ اَحَدَکُمُ الۡمَوۡتُ
تَوَفَّتۡهُ رُسُلُنَا وَهُمۡ لَا یُفَرِّطُوۡنَ ﴿٦١﴾ ثُمَّ رُدُّوۡۤا اِلَی اللّٰهِ مَوۡلٰىهُمُ الۡحَقِّ ؕ اَلَا لَهُ الۡحُکۡمُ ۟
وَهُوَ اَسۡرَعُ الۡحٰسِبِیۡنَ ﴿٦٢﴾ قُلۡ مَنۡ یُّنَجِّیۡکُمۡ مِّنۡ ظُلُمٰتِ الۡبَرِّ وَالۡبَحۡرِ تَدۡعُوۡنَهٗ
تَضَرُّعًا وَّخُفۡیَةً ۚ لَئِنۡ اَنۡجٰنَا مِنۡ هٰذِهٖ لَنَکُوۡنَنَّ مِنَ الشّٰکِرِیۡنَ ﴿٦٣﴾ قُلِ اللّٰهُ
یُنَجِّیۡکُمۡ مِّنۡهَا وَمِنۡ کُلِّ کَرۡبٍ ثُمَّ اَنۡتُمۡ تُشۡرِکُوۡنَ ﴿٦٤﴾ قُلۡ هُوَ الۡقَادِرُ عَلٰۤی اَنۡ یَّبۡعَثَ
عَلَیۡکُمۡ عَذَابًا مِّنۡ فَوۡقِکُمۡ اَوۡ مِنۡ تَحۡتِ اَرۡجُلِکُمۡ اَوۡ یَلۡبِسَکُمۡ شِیَعًا وَّیُذِیۡقَ
بَعۡضَکُمۡ بَاۡسَ بَعۡضٍ ؕ اُنۡظُرۡ کَیۡفَ نُصَرِّفُ الۡاٰیٰتِ لَعَلَّهُمۡ یَفۡقَهُوۡنَ ﴿٦٥﴾ وَکَذَّبَ بِهٖ
قَوۡمُکَ وَهُوَ الۡحَقُّ ؕ قُلۡ لَّسۡتُ عَلَیۡکُمۡ بِوَکِیۡلٍ ﴿٦٦﴾ؕ لِکُلِّ نَبَاٍ مُّسۡتَقَرٌّ ۫ وَّسَوۡفَ
تَعۡلَمُوۡنَ ﴿٦٧﴾ وَاِذَا رَاَیۡتَ الَّذِیۡنَ یَخُوۡضُوۡنَ فِیۡۤ اٰیٰتِنَا فَاَعۡرِضۡ عَنۡهُمۡ حَتّٰی یَخُوۡضُوۡا
فِیۡ حَدِیۡثٍ غَیۡرِهٖ ؕ وَاِمَّا یُنۡسِیَنَّکَ الشَّیۡطٰنُ فَلَا تَقۡعُدۡ بَعۡدَ الذِّکۡرٰی مَعَ الۡقَوۡمِ
الظّٰلِمِیۡنَ ﴿٦٨﴾ وَمَا عَلَی الَّذِیۡنَ یَتَّقُوۡنَ مِنۡ حِسَابِهِمۡ مِّنۡ شَیۡءٍ وَّلٰکِنۡ ذِکۡرٰی
لَعَلَّهُمۡ یَتَّقُوۡنَ ﴿٦٩﴾ وَذَرِ الَّذِیۡنَ اتَّخَذُوۡا دِیۡنَهُمۡ لَعِبًا وَّلَهۡوًا وَّغَرَّتۡهُمُ الۡحَیٰوةُ
الدُّنۡیَا وَذَکِّرۡ بِهٖۤ اَنۡ تُبۡسَلَ نَفۡسٌۢ بِمَا کَسَبَتۡ ٭ۖ لَیۡسَ لَهَا مِنۡ دُوۡنِ اللّٰهِ وَلِیٌّ وَّلَا
شَفِیۡعٌ ۚ وَاِنۡ تَعۡدِلۡ کُلَّ عَدۡلٍ لَّا یُؤۡخَذۡ مِنۡهَا ؕ اُولٰٓئِکَ الَّذِیۡنَ اُبۡسِلُوۡا بِمَا کَسَبُوۡا ۚ
لَهُمۡ شَرَابٌ مِّنۡ حَمِیۡمٍ وَّعَذَابٌ اَلِیۡمٌۢ بِمَا کَانُوۡا یَکۡفُرُوۡنَ ﴿٧٠﴾ؒ

आयत 61

وَهُوَ الۡقَاهِرُ فَوۡقَ عِبَادِهٖ وَیُرۡسِلُ عَلَیۡکُمۡ حَفَظَةً ؕ

"और वह अपने बन्दों पर पूरी तरह ग़ालिब है और वह तुम पर निगहबान भेजता रहता है।"

अल्लाह तआला की मशीयत से इन्सान को अपनी अज्ले मुअय्यन तक ब-हर सूरत ज़िन्दा रहना है, इसलिये हर इन्सान के साथ अल्लाह के मुक़र्रर करदा फ़रिश्ते उसके बॉडीगार्डज़ की हैसियत से हर वक़्त मौजूद रहते हैं। चुनाँचे कभी इन्सान को ऐसा हादसा भी पेश आता है जब ज़िन्दा बच जाने का बज़ाहिर कोई इम्कान नहीं होता, लेकिन यूँ महसूस होता है जैसे किसी ने हाथ देकर उसे बचा लिया हो। बहरहाल जब तक इन्सान की मौत का वक़्त नहीं आता, यह मुहाफ़िज़ उसकी हिफ़ाज़त करते रहते हैं।

حَتّٰۤی اِذَا جَآءَ اَحَدَکُمُ الۡمَوۡتُ تَوَفَّتۡهُ رُسُلُنَا وَهُمۡ لَا یُفَرِّطُوۡنَ ﴿٦١﴾

"यहाँ तक कि जब तुम में से किसी की मौत आती है तो हमारे भेजे हुए फ़रिश्ते उसको क़ब्ज़े में ले लेते हैं और उसमें कोई कोताही नहीं करते।"

अब यहाँ फिर लफ़्ज़ "تَوَفّٰی" शऊर और जान दोनों के जाने के मफ़हूम में इस्तेमाल हुआ है कि अल्लाह तआला के मुक़र्रर करदा फ़रिश्ते जान

निकालने में कोई कोताही नहीं करते। उन्हें जो हुक्म दिया जाता है, जब दिया जाता है उसकी तामील करते हैं।

आयत 62

ثُمَّ رُدُّوْٓا اِلَى اللّٰهِ مَوْلٰىهُمُ الْحَقِّ ؕ

"फिर वह लौटा दिये जाते हैं अल्लाह की तरफ़ जो उनका मौला है बरहक़।"

اَلَا لَهُ الْحُكْمُ ۫ وَهُوَ اَسْرَعُ الْحٰسِبِيْنَ ﴿۶۲﴾

"आगाह हो जाओ फ़ैसले का इख़्तियार उसी के हाथ में है, और वह हिसाब करने वालों में सबसे बढ़ कर तेज़ है।"

हक़ीक़ी हाकिमियत सिर्फ़ अल्लाह ही की है। यह बात यहाँ दूसरी दफ़ा आयी है। इससे पहले आयत 57 में हम पढ़ आये हैं: { اِنِ الْحُكْمُ اِلَّا لِلّٰهِ } कि फ़ैसले का इख़्तियार कुल्लियतन अल्लाह के हाथ में है। मज़ीद फ़रमाया कि वह सबसे ज़्यादा तेज़ हिसाब चुकाने वाला है। उसे हिसाब चुकाने में कुछ देर नहीं लगेगी, सिर्फ़ हर्फ़े कुन कहने से आने वाहिद में वह सब कुछ हो जायेगा जो वह चाहेगा।

आयत 63

قُلْ مَنْ يُّنَجِّيْكُمْ مِّنْ ظُلُمٰتِ الْبَرِّ وَالْبَحْرِ تَدْعُوْنَهٗ تَضَرُّعًا وَّخُفْيَةً

"इनसे पूछिये कौन तुम्हें निजात देता है ख़ुश्की और समुन्दरों के अँधेरों से जबकि तुम उसी को पुकारते हो बहुत ही गिडगिडाते हुए और (दिल ही दिल में) चुपके-चुपके।"

कभी तुमने गौर किया जब तुम समुन्दर में सफ़र करते हो, वहाँ घुप अँधेरे में जब हाथ को हाथ सुझाई नहीं देता और समुन्दर की खौफ़नाक तूफ़ानी लहरें हर लम्हा मौत का पैगाम दे रही होती हैं तो ऐसे में अल्लाह के सिवा तुम्हें कौन बचाता है? कौन है जो तुम्हारी दस्तगीरी करता है और तुम्हारे लिये आफ़ियत का रास्ता निकालता है। इस तरह *"अँधेरी शब है जुदा अपने क़ाफ़िले से है तू!"* के मिस्दाक़ जब कोई क़ाफ़िला सहरा में भटक जाता है, अँधेरी रात में ना दायें का पता होता है ना बायें की ख़बर, हर दरख़्त अँधेरे में एक आसेब मालूम होता है, ऐसे खौफ़नाक माहौल और इन्तहाई मायूसी के आलम में सब ख़ुदाओं को भुला कर तुम लोग एक अल्लाह ही को पुकारते हो।

لَئِنْ اَنْجٰىنَا مِنْ هٰذِهٖ لَنَكُوْنَنَّ مِنَ الشّٰكِرِيْنَ ﴿۶۳﴾

"(और कहते हो) अगर अल्लाह ने हमें इससे बचा लिया तो हम ज़रूर शुक्रगुज़ार बन कर रहेंगे।"

आयत 64

قُلِ اللّٰهُ يُنَجِّيْكُمْ مِّنْهَا وَمِنْ كُلِّ كَرْبٍ ثُمَّ اَنْتُمْ تُشْرِكُوْنَ ﴿۶۴﴾

"कहिये अल्लाह ही निजात देता है तुम्हें उससे और हर तकलीफ़ से, फिर तुम शिर्क करने लगते हो!"

मुसीबत से निजात के बाद फिर से तुम्हें देवियाँ, देवता, झूठे मअबूद और अपने सरदार याद आ जाते हैं। अब अगली आयत इस लिहाज़ से बहुत अहम है कि इसमें अज़ाबे इलाही की तीन क़िस्में बयान हुई हैं।

आयत 65

قُلْ هُوَ الْقَادِرُ عَلٰٓى اَنْ يَّبْعَثَ عَلَيْكُمْ عَذَابًا مِّنْ فَوْقِكُمْ

"कह दीजिये कि वह क़ादिर है इस पर कि तुम पर भेज दे कोई अज़ाब तुम्हारे ऊपर से"

मसलन आसमान का कोई टुकड़ा या कोई शहाबे साक़ब (meteorite) गिर जाये। आज-कल ऐसी ख़बरें अक्सर सुनने को मिलती हैं कि इस तरह की कोई चीज़ ज़मीन पर गिरने वाली है, लेकिन फिर अल्लाह के हुक्म से वह खला में ही तहलील हो जाती है। इसी तरह ओज़ोन की तह भी अल्लाह तआला ने ज़मीन और ज़मीन वालों के बचाव के लिये पैदा की है, वह चाहे तो इस हिफ़ाज़ती छतरी को हटा दे। बहरहाल आसमानों से अज़ाब नाज़िल होने की कोई भी सूरत हो सकती है और अल्लाह जब चाहे यह अज़ाब नाज़िल हो सकता है।

اَوْ مِنْ تَحْتِ اَرْجُلِكُمْ

"या तुम्हारे क़दमों के नीचे से"

यह अज़ाब तुम्हारे क़दमों के नीचे से भी आ सकता है, ज़मीन फट सकती है, ज़लज़ले के बाइस शहरों के शहर ज़मीन में धंस सकते हैं। जैसा कि हदीस में ख़बर दी गयी है कि क़यामत से पहले तीन बड़े-बड़े "खस्फ़" होंगे, यानि ज़मीन वसीअ पैमाने पर तीन मुख्तलिफ़ जगहों से धंस जायेगी। अज़ाब की दो शक्लें तो यह हैं, ऊपर से या क़दमों के नीचे से।

اَوْ يَلْبِسَكُمْ شِيَعًا وَّيُذِيْقَ بَعْضَكُمْ بَاْسَ بَعْضٍ

"या तुम्हें गिरोहों में तक़सीम कर दे और एक की ताक़त का मज़ा दूसरे को चखाये।"

यह खाना जंगी की सूरत में अज़ाब का ज़िक्र है कि किसी मुल्क के अवाम या क़ौम के मुख्तलिफ़ गिरोह आपस में लड़ पड़ें। जैसे पंजाबी और उर्दू बोलने वाले आपस में उलझ जायें, बलोच और पख्तून एक-दूसरे के खून के प्यासे हो जायें, शिया सुन्नी को मारे और सुन्नी शिया को। अल्लाह तआला को आसमान से कुछ गिराने की ज़रूरत है ना ज़मीन को धंसाने की। यह गिरोहबंदी और इसकी बुनियाद पर बाहमी खूँरेजी अज़ाबे इलाही की बदतरीन शक्ल है, जो आज मुसलमाने पाकिस्तान पर मुसल्लत है। तक़सीमे हिन्द से क़ब्ल जब हिन्दू से मुक़ाबला था तो मुस्लमान एक क़ौम थे। पाकिस्तान बना तो उसके तमाम वासी पाकिस्तानी थे। अब यही पाकिस्तानी क़ौम छोटी-छोटी क़ौमियतों और अस्बियतों में तहलील हो चुकी है और हर गिरोह दूसरे गिरोह का दुश्मन है।

اُنْظُرْ كَيْفَ نُصَرِّفُ الْاٰيٰتِ لَعَلَّهُمْ يَفْقَهُوْنَ ﴿٦٥﴾

"देखो किस तरह हम अपनी आयात की तसरीफ़ करते हैं ताकि वह समझें।"

तसरीफ़ के मायने हैं घुमाना। *"एक फूल का मज़मून हो तो सौ रंग से बाँधूं"* के मिस्दाक़ एक ही बात को असलूब बदल-बदल कर, मुख्तलिफ़ अंदाज़ में, नयी-नयी तरतीब के साथ बयान करना।

आयत 66

وَ كَذَّبَ بِهٖ قَوْمُكَ وَهُوَ الْحَقُّ ؕ

"और (ऐ नबी ﷺ) आपकी क़ौम ने उसे झुठला दिया हालाँकि वह हक़ है।"

यहाँ بِهٖ से मुराद क़ुरान है। जैसा कि पहले बयान हो चुका है, इस सूरत का उमूद यह मज़मून है कि मुशरिकीन के मुतालबे पर कोई हिस्सी मौज्ज़ा नहीं दिखाया जायेगा, मुहम्मद रसूल अल्लाह ﷺ का असल मौज्ज़ा यह क़ुरान है। इसी लिये इस मज़मून की तफ़सील में "بِهٖ" की तकरार कसरत से मिलेगी।

قُلْ لَّسْتُ عَلَيْكُمْ بِوَكِيْلٍ ﴿٦٦﴾ ؕ

"(इनसे) कह दीजिये कि (अब) मैं तुम्हारा ज़िम्मेदार नहीं हूँ।"

अब मैं नहीं कह सकता कि कब अल्लाह के अज़ाब का दरवाज़ा खुल जाये और अज़ाबे हलाकत तुम पर टूट पड़े।

आयत 67

لِكُلِّ نَبَإٍ مُّسْتَقَرٌّ وَّسَوْفَ تَعْلَمُوْنَ ﴿٦٧﴾

"हर बड़ी बात के लिये एक वक़्त मुक़र्रर है, और अनक़रीब तुम्हें मालूम हो जायेगा।"

जैसा कि सूरतुल अम्बिया में फ़रमाया गया: {وَاِنْ اَدْرِيْٓ اَقَرِيْبٌ اَمْ بَعِيْدٌ مَّا تُوْعَدُوْنَ} (आयत:109) "मैं यह तो नहीं जानता कि जिस अज़ाब की तुम्हें धमकी दी जा रही है वह क़रीब आ चुका है या दूर है।" अलबत्ता यह ज़रूर जानता हूँ कि अगर तुम्हारी रविश यही रही तो यह अज़ाब तुम पर ज़रूर आकर रहेगा।

अब वह आयत आ रही है जिसका हवाला सूरतुन्निसा की आयत 140 में आया था कि "अल्लाह तआला तुम पर किताब में यह बात नाज़िल कर चुका है कि जब तुम सुनो कि अल्लाह की आयात के साथ कुफ़्र किया जा रहा है और उनका मज़ाक़ उड़ाया जा रहा है तो उनके पास मत बैठो...." ईमान का कम से कम तक़ाज़ा है कि ऐसी महफ़िल से अहतजाज के तौर पर वाक आउट तो ज़रूर किया जाये।

आयत 68

وَاِذَا رَاَيْتَ الَّذِيْنَ يَخُوْضُوْنَ فِيْٓ اٰيٰتِنَا فَاَعْرِضْ عَنْهُمْ

"और जब तुम देखो लोगों को कि वह हमारी आयात में मीन-मेख निकाल रहे हैं तो उनसे किनारा कश हो जाओ"

"उर्दू में "गौरो खोज़" की तरकीब कसरत से इस्तेमाल होती है। "गौर" और "खोज़" दोनों अरबी ज़बान के अल्फ़ाज़ हैं और मायने के ऐतबार से दोनों की आपस में मुशाबेहत है। 'गौर' मुस्बत अंदाज़ में किसी चीज़ की तहक़ीक़ करने के लिये बोला जाता है जबकि 'खोज़' मनफ़ी तौर पर किसी मामले की छानबीन करने और ख्वाह मा ख्वाह में बाल की खाल उतारने के मायने देता है।

حَتّٰى يَخُوْضُوْا فِيْ حَدِيْثٍ غَيْرِهٖٓ

"यहाँ तक कि वह किसी और बात में लग जाये।"

जब किसी महफ़िल में लोग अल्लाह और उसकी आयात का तमस्खुर उड़ा रहे हों तो उनसे किनारा कशी कर लो, और जब वह किसी दूसरे मौज़ू पर गुफ्तुगू करने लगें तो फिर तुम उनके पास जा सकते हो।

وَاِمَّا يُنْسِيَنَّكَ الشَّيْطٰنُ فَلَا تَقْعُدْ بَعْدَ الذِّكْرٰى مَعَ الْقَوْمِ الظّٰلِمِيْنَ ﴿٦٨﴾

"और अगर तुम्हें शैतान भुला दे तो याद आ जाने के बाद ऐसे ज़ालिमों के साथ मत बैठो।"

यानि किसी महफ़िल में गुफ्तुगू शुरू हुई और कुछ देर तक तुम्हें अहसास नहीं हुआ कि यह लोग किस मौज़ू पर गुफ्तुगू कर रहे हैं, लेकिन ज्यों ही अहसास हो जाये कि इनकी गुफ्तुगू और अन्दाज़े गुफ्तुगू क़ाबिले ऐतराज़ है तो अहतजाज करते हुए फ़ौरन वहाँ से वाक आउट कर जाओ। अब चूँकि दावत व तब्लीग के लिये तुम्हारा उनके पास जाना एक ज़रूरत है लिहाज़ा ऐसी महफ़िलों के बारे में किसी बेहतर सूरते हाल के मुन्तज़िर रहो, और जब उन लोगों का रवैय्या मुस्बत हो तो उनके पास दोबारा जाने में कोई हर्ज नहीं। यानि वही "قَالُوْا سَلٰمًا" वाला अंदाज़ होना चाहिये कि अलैहदा भी हों तो लठ मार कर ना हुआ जाये बल्कि चुपके से, मतानत के साथ किनारा कर लिया जाये।

आयत 69

وَمَا عَلَى الَّذِيْنَ يَتَّقُوْنَ مِنْ حِسَابِهِمْ مِّنْ شَيْءٍ وَّلٰكِنْ ذِكْرٰى لَعَلَّهُمْ يَتَّقُوْنَ ﴿٦٩﴾

"और यक़ीनन जो लोग तक़वा की रविश इख़्तियार करते हैं उन पर उन लोगों के हिसाब की कोई ज़िम्मेदारी नहीं है, लेकिन यह याद दिहानी है ताकि वह तक़वा इख़्तियार करें।"

आयत 70

وَذَرِ الَّذِيْنَ اتَّخَذُوْا دِيْنَهُمْ لَعِبًا وَّلَهْوًا

"और छोड़ दो उन लोगों को जिन्होंने अपने दीन को खेल और तमाशा बना लिया है"

आज भी हमारे मआशरे में ऐसे लोगों की कमी नहीं जो दीन के मामले में कभी संजीदा होते ही नहीं। वह दीन की हर बात को इस्तेहज़ा और तमस्खुर में उड़ाने के आदी होते हैं।

وَّغَرَّتْهُمُ الْحَيٰوةُ الدُّنْيَا

"और उनको धोखे में मुब्तला कर दिया है दुनिया की ज़िन्दगी ने"

उनकी सारी तवज्जो, तमाम भाग-दौड़ दुनिया के लिये है। ज़्यादा से ज़्यादा कमाना, माल जमा करना और जायदादें बनाना ही उनका मक़सदे हयात है, ख्वाह हलाल से हो या हराम से, इसकी कोई परवाह उनको नहीं होती।

وَذَكِّرْ بِهٖٓ اَنْ تُبْسَلَ نَفْسٌۢ بِمَا كَسَبَتْ ۚ

"और आप तज़कीर कीजिये इसी (क़ुरान) के ज़रिये से, मबादा कोई जान अपने करतूतों के सबब गिरफ्तार हो जाये।"

सूरह क़ाफ़ की आखरी आयत में हुक्म दिया गया है: { فَذَكِّرْ بِالْقُرْاٰنِ مَنْ يَّخَافُ وَعِيْدِ } कि आप क़ुरान के ज़रिये से तज़कीर कीजिये उस शख्स को जिसके अन्दर अल्लाह की वईद का कुछ खौफ़ है। इसी तरह यहाँ भी हुज़ूर ﷺ से फ़रमाया जा रहा है कि आप इन दुनिया के परिस्तारों को छोड़िये, अलबत्ता इस क़ुरान के ज़रिये से इन्हें तज़कीर करते रहिये, इन्हें याद दिहानी कराते रहिये। ऐसा ना हो कि कोई शख्स अपने करतूतों और बदआमालियों के बवाल में गिरफ्तार हो जाये।

لَيْسَ لَهَا مِنْ دُوْنِ اللّٰهِ وَلِيٌّ وَّلَا شَفِيْعٌ ۚ

"फिर उसके लिये नहीं होगा अल्लाह के मुक़ाबले में कोई कारसाज़ और ना कोई सिफ़ारशी।"

शफ़ाअत के बारे में दो टूक इन्कार (categorical denial) यहाँ दूसरी दफ़ा आया है। इससे पहले आयत 51 में भी यह मज़मून आ चुका है। सूरतुल बक़रह (आयत 254) में {يَوْمٌ لَّا بَيْعٌ فِيْهِ وَلَا خُلَّةٌ وَّلَا شَفَاعَةٌ} के दो टूक अल्फ़ाज़ के बाद अगली आयत में यह अल्फ़ाज़ भी आये हैं: { مَنْ ذَا الَّذِيْ يَشْفَعُ عِنْدَهٗٓ اِلَّا بِاِذْنِهٖ } (आयतुल कुरसी) चुनाँचे शफ़ाअते हक्क़ा का इन्कार नहीं किया जा सकता। ताहम इस मसले को अच्छी तरह समझने की ज़रूरत है। शफ़ाअत की कुछ शराइत और कुछ हुदूद (limits) हैं। इन शराइत और हुदूद व क़ैद के बगैर मुतलक़ शफ़ाअत का तसव्वुर गोया ईमान बिलआख़िरत की नफ़ी के मुतरादिफ़ है। यानि जब आपको छुड़ाने वाले मौजूद हैं तो फिर डर काहे का? जो चाहो करो! शराबी हैं, ज़ानी हैं, चोर हैं, डाकू हैं, हरामखोर हैं, ग़बन करते हैं, जो भी कुछ हैं, लेकिन ऐ अल्लाह तेरे महबूब ﷺ की उम्मत में हैं! तो अगर इसी तरह से कोई मामला तय होना है तो ख्वाह मा ख्वाह काहे को कोई अपना हाथ रोके, जी भर कर ऐश क्यों ना करे? बाबर बा ऐश कोश कि आलम दोबारा नीस्त!

وَاِنْ تَعْدِلْ كُلَّ عَدْلٍ لَّا يُؤْخَذْ مِنْهَا ۭ

"और अगर वह फ़िदया देना चाहे कुल का कुल फ़िदया तो भी उससे क़ुबूल नहीं किया जायेगा।"

यह मज़मून भी सूरतुल बक़रह में दो मर्तबा (आयत 48, 123) आ चुका है।

اُولٰٓىِٕكَ الَّذِيْنَ اُبْسِلُوْا بِمَا كَسَبُوْا ۚ لَهُمْ شَرَابٌ مِّنْ حَمِيْمٍ وَّعَذَابٌ اَلِيْمٌۢ بِمَا كَانُوْا يَكْفُرُوْنَ ۝

"यही लोग हैं जो गिरफ्तार हो चुके हैं अपने करतूतों की पादाश में। इनके लिये खोलता हुआ पानी पीने को और दर्दनाक अज़ाब होगा इनके कुफ़्र की पादाश में।"

आयत 71 से 82 तक

قُلْ اَنَدْعُوْا مِنْ دُوْنِ اللّٰهِ مَا لَا يَنْفَعُنَا وَلَا يَضُرُّنَا وَنُرَدُّ عَلٰٓى اَعْقَابِنَا بَعْدَ اِذْ
هَدٰىنَا اللّٰهُ كَالَّذِي اسْتَهْوَتْهُ الشَّيٰطِيْنُ فِي الْاَرْضِ حَيْرَانَ ۖ لَهٗٓ اَصْحٰبٌ يَّدْعُوْنَهٗٓ
اِلَى الْهُدَى ائْتِنَا ۗ قُلْ اِنَّ هُدَى اللّٰهِ هُوَ الْهُدٰى ۭ وَاُمِرْنَا لِنُسْلِمَ لِرَبِّ الْعٰلَمِيْنَ ۝
وَاَنْ اَقِيْمُوا الصَّلٰوةَ وَاتَّقُوْهُ ۭ وَهُوَ الَّذِيْٓ اِلَيْهِ تُحْشَرُوْنَ ۝ وَهُوَ الَّذِيْ خَلَقَ
السَّمٰوٰتِ وَالْاَرْضَ بِالْحَقِّ ۭ وَيَوْمَ يَقُوْلُ كُنْ فَيَكُوْنُ ڛ قَوْلُهُ الْحَقُّ ۭ وَلَهُ الْمُلْكُ
يَوْمَ يُنْفَخُ فِي الصُّوْرِ ۭ عٰلِمُ الْغَيْبِ وَالشَّهَادَةِ ۭ وَهُوَ الْحَكِيْمُ الْخَبِيْرُ ۝ وَاِذْ قَالَ
اِبْرٰهِيْمُ لِاَبِيْهِ اٰزَرَ اَتَتَّخِذُ اَصْنَامًا اٰلِهَةً ۚ اِنِّيْٓ اَرٰىكَ وَقَوْمَكَ فِيْ ضَلٰلٍ مُّبِيْنٍ ۝
وَكَذٰلِكَ نُرِيْٓ اِبْرٰهِيْمَ مَلَكُوْتَ السَّمٰوٰتِ وَالْاَرْضِ وَلِيَكُوْنَ مِنَ الْمُوْقِنِيْنَ ۝
فَلَمَّا جَنَّ عَلَيْهِ الَّيْلُ رَاٰ كَوْكَبًا ۚ قَالَ هٰذَا رَبِّيْ ۚ فَلَمَّآ اَفَلَ قَالَ لَآ اُحِبُّ
الْاٰفِلِيْنَ ۝ فَلَمَّا رَاَ الْقَمَرَ بَازِغًا قَالَ هٰذَا رَبِّيْ ۚ فَلَمَّآ اَفَلَ قَالَ لَىِٕنْ لَّمْ يَهْدِنِيْ رَبِّيْ
لَاَكُوْنَنَّ مِنَ الْقَوْمِ الضَّاۗلِّيْنَ ۝ فَلَمَّا رَاَ الشَّمْسَ بَازِغَةً قَالَ هٰذَا رَبِّيْ هٰذَآ اَكْبَرُ ۚ
فَلَمَّآ اَفَلَتْ قَالَ يٰقَوْمِ اِنِّيْ بَرِيْۗءٌ مِّمَّا تُشْرِكُوْنَ ۝ اِنِّيْ وَجَّهْتُ وَجْهِيَ لِلَّذِيْ فَطَرَ
السَّمٰوٰتِ وَالْاَرْضَ حَنِيْفًا وَّمَآ اَنَا مِنَ الْمُشْرِكِيْنَ ۝ وَحَاۗجَّهٗ قَوْمُهٗ ۭ قَالَ
اَتُحَاۗجُّوْۗنِّيْ فِي اللّٰهِ وَقَدْ هَدٰىنِ ۭ وَلَآ اَخَافُ مَا تُشْرِكُوْنَ بِهٖٓ اِلَّآ اَنْ يَّشَاۗءَ رَبِّيْ
شَيْـــًٔا ۭ وَسِعَ رَبِّيْ كُلَّ شَيْءٍ عِلْمًا ۭ اَفَلَا تَتَذَكَّرُوْنَ ۝ وَكَيْفَ اَخَافُ مَآ اَشْرَكْتُمْ
وَلَا تَخَافُوْنَ اَنَّكُمْ اَشْرَكْتُمْ بِاللّٰهِ مَا لَمْ يُنَزِّلْ بِهٖ عَلَيْكُمْ سُلْطٰنًا ۭ فَاَيُّ الْفَرِيْقَيْنِ
اَحَقُّ بِالْاَمْنِ ۚ اِنْ كُنْتُمْ تَعْلَمُوْنَ ۝ اَلَّذِيْنَ اٰمَنُوْا وَلَمْ يَلْبِسُوْٓا اِيْمَانَهُمْ بِظُلْمٍ
اُولٰٓىِٕكَ لَهُمُ الْاَمْنُ وَهُمْ مُّهْتَدُوْنَ ۝

आयत 71

قُلْ اَنَدْعُوْا مِنْ دُوْنِ اللّٰهِ مَا لَا يَنْفَعُنَا وَلَا يَضُرُّنَا

"(ऐ नबी ﷺ! इनसे) कहिये क्या हम पुकारें अल्लाह को छोड़ कर उन चीज़ों को जो हमें ना नफ़ा पहुँचा सकती हैं ना नुक़सान"

यह बुत किसी को कुछ नफ़ा या नुक़सान नहीं पहुँचा सकते। यह तो ख़ुद अणि हिफ़ाज़त नहीं कर सकते। ख़ुद पर बैठी हुई मक्खी तक नहीं उड़ा सकते। इनको पुकारने का क्या फ़ायदा? इनके सामने सज्दा करने से क्या हासिल? बुतों के बारे में तो यह बात खैर बहुत ही वाज़ेह है, लेकिन इनके अलावा भी पूरी कायनात में कोई किसी के लिये खैर की कुछ क़ुदरत रखता है ना शर की। ला हवला वला क़ुव्वता इल्लाह बिल्लाह का मफ़हूम यही है। यह यक़ीन जब इन्सान के दिल की गहराइयों में पूरी तरह जागज़ीं हो जाये तब ही तो तौहीद मुकम्मल होती है, जिसके बाद इन्सान किसी के आगे सर झुका कर ख्वाह मा ख्वाह अपनी इज़्ज़ते नफ्स का सौदा नहीं करता। इसी नुक्ते की वज़ाहत रसूल अल्लाह ﷺ ने हज़रत अब्दुल्लाह बिन अब्बास रज़ि. को मुख़ातिब करके इस तरह फ़रमायी थी: "इस बात को अच्छी तरह जान लो कि अगर दुनिया के तमाम इन्सान मिल कर चाहें कि तुम्हें कोई फ़ायदा पहुँचा दें तो इसके सिवा कोई फ़ायदा नहीं पहुँचा सकते जो अल्लाह ने तुम्हारे मुक़द्दर में लिख दिया है, और अगर तमाम इन्सान मिल कर चाहें कि तुम्हें कोई नुक़सान पहुँचा दें तो इसके सिवा कोई

नुक़सान नहीं पहुँचा सकते जो अल्लाह ने तुम्हारे मुक़द्दर में लिख दिया है"(4)। लिहाज़ा "यक दर गैरो मोहकम बगैर" के मिस्दाक़ मदद के लिये पुकारो तो उसी एक अल्लाह को पुकारो। किसी गैरुल्लाह को पुकारने, किसी दूसरे से सवाल करने, किसी और से डरने, इल्तजायें करने, इस्तगासा करने का क्या फ़ायदा?

وَنُرَدُّ عَلٰٓى اَعْقَابِنَا بَعْدَ اِذْ هَدٰىنَا اللّٰهُ كَالَّذِى اسْتَهْوَتْهُ الشَّيٰطِيْنُ فِى الْاَرْضِ حَيْرَانَ

"और हम अपनी एड़ियों के बल लौटा दिये जाएँगे इसके बाद कि अल्लाह ने हमें हिदायत दे दी है, उस शख्स की मानिन्द जिसे श्यातीन ने बियाबान में भटका कर हैरान व सरगर्दां छोड़ दिया हो?"

لَهٗٓ اَصْحٰبٌ يَّدْعُوْنَهٗٓ اِلَى الْهُدَى ائْتِنَا ؕ

"उसके साथी उसको सीधे रास्ते की तरफ़ पुकार रहे हों कि आओ हमारी तरफ़!"

यहाँ जमाती ज़िन्दगी की बरकत और इन्फ़रादी ज़िन्दगी की क़बाहत का नक़्शा खींचा गया है। अगर आप अकेले हों, कहीं भटक गये हों, तो आपके लिये दोबारा सीधे रास्ते पर आना बहुत मुश्किल हो जाता है। लेकिन जमाती ज़िन्दगी में दूसरे साथियों के मशवरे और उनकी रहनुमाई से हर फ़र्द को अपनी सिम्त के सीधा रखने में आसानी होती है। जैसा कि सूरतुत्तौबा में फ़रमाया गया: { يٰٓاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوا اتَّقُوا اللّٰهَ وَكُوْنُوْا مَعَ الصّٰدِقِيْنَ} "ऐ अहले ईमान, अल्लाह का तक़वा इख़्तियार करो और साथ रहो सदिक़ीन (सच्चों) के।" बाज़ अवक़ात इन्सान बड़ी आज़माइश में फँस जाता है। वह हराम को हराम समझता है और यह भी समझता है कि इसको इख़्तियार करना इन्तहाई तबाहकुन है। दूसरी तरफ़ उसकी मजबूरियाँ हैं, बच्चों की महरूमियाँ हैं, अहले खाना का दबाव है। ऐसी हालत में उसके लिये दुरुस्त फ़ैसला करना मुश्किल हो जाता है। इस कैफ़ियत में उसके हराम में पड़ने के इम्कानात बढ़ जाते हैं। अगर ऐसे वक़्त में उसको नेक दोस्त अहबाब की मईयत (साथ) हासिल हो तो वह ना सिर्फ़ उसको सही मशवरा देते हैं बल्कि उसका हाथ थाम कर सहारा भी देते हैं।

قُلْ اِنَّ هُدَى اللّٰهِ هُوَ الْهُدٰى ؕ وَاُمِرْنَا لِنُسْلِمَ لِرَبِّ الْعٰلَمِيْنَ ۙ

"कह दीजिये यक़ीनन अल्लाह की हिदायत ही असल हिदायत है, और हमें तो हुक्म हुआ है कि हम तमाम जहानों के परवरदिगार की फ़रमाबरदारी इख़्तियार करें।"

आयत 72

وَاَنْ اَقِيْمُوا الصَّلٰوةَ وَاتَّقُوْهُ ؕ وَهُوَ الَّذِىْٓ اِلَيْهِ تُحْشَرُوْنَ ۚ

"और यह कि नमाज़ क़ायम करो और अल्लाह का तक़वा इख़्तियार करो, और वही है जिसकी तरफ़ तुम्हें जमा कर दिया जायेगा।"

आयत 73

وَهُوَ الَّذِىْ خَلَقَ السَّمٰوٰتِ وَالْاَرْضَ بِالْحَقِّ ؕ

"और वही है जिसने आसमान और ज़मीन बनाये हैं हक़ के साथ।"

यानि यह ज़मीन व आसमान अल्लाह तआला ने ख़ास मक़सद के तहत पैदा किये हैं। जैसा की सूरह आले इमरान में फ़रमाया गया: { رَبَّنَا مَا خَلَقْتَ هٰذَا بَاطِلًا ۚ} (आयत:191) "ऐ रब हमारे, तूने यह सब बातिल (बेमक़सद) पैदा नहीं किया।" गोया "हक़" का लफ्ज़ यहाँ "बातिल" के मुक़ाबले में आया है।

وَيَوْمَ يَقُوْلُ كُنْ فَيَكُوْنُ

“और जिस दिन वह कहेगा हो जा तो वह हो जायेगा।”

जब वह चाहेगा इस कायनात की बिसात को लपेट देगा। उसी ने इसे हक़ के साथ बनाया है और उसी के हुक्म के साथ यह लपेट दी जायेगी। अज़रुए अल्फ़ाज़े क़ुरानी: {يَوْمَ نَطْوِي السَّمَاۗءَ كَطَيِّ السِّجِلِّ لِلْكُتُبِ} (अम्बिया:104) “जिस दिन हम (इन तमाम खलाओं, फ़ज़ाओं और) आसमानों को ऐसे लपेट देंगे जैसे किताबों का तूमार लपेट दिया जाता है।” इसी तरह सूरतुज़्ज़ुमुर में इरशाद हुआ: {وَالسَّمٰوٰتُ مَطْوِيّٰتٌۢ بِيَمِيْنِهٖ} (आयत:67) “और (उस रोज़) आसमान अल्लाह के दाहिने हाथ में लिपटे हुए होंगे।”

قَوْلُهُ الْحَقُّ

“उसका फ़रमान ही हक़ है।”

उसका फ़रमान शदनी (होने वाला) है। उसका ‘कुन’ कह देना बरहक़ है। उसे तख्लीक़ के लिये किसी और शय की ज़रूरत नहीं, माद्दा (material) या तवानाई (energy) कुछ भी उसे दरकार नहीं।

وَلَهُ الْمُلْكُ يَوْمَ يُنْفَخُ فِي الصُّوْرِ

“और उसी के लिये होगी बादशाही जिस दिन सूर फूँका जायेगा।”

अगरचे हक़ीक़त में तो अब भी बादशाही उसी की है लेकिन अभी झूठे-सच्चे कई बादशाह इधर-उधर बैठे हुए हैं, जो मुख्तलिफ़ ड्रामों के मुख्तलिफ़ किरदार हैं। मगर यह सबके सब उस दिन नस्यम मन्सिया हो जाएँगे और पूछा जायेगा: {لِمَنِ الْمُلْكُ الْيَوْمَ} और फिर जवाब में ख़ुद ही फ़रमाया जायेगा: {لِلّٰهِ الْوَاحِدِ الْقَهَّارِ} (अल् मोमिन:16)

عٰلِمُ الْغَيْبِ وَالشَّهَادَةِ وَهُوَ الْحَكِيْمُ الْخَبِيْرُ

“वह तमाम गैब और खुली बातों का जानने वाला है, और वह कमाले हिकमत वाला और हर शय से बाख़बर है।”

इस सूरह मुबारका में अब हज़रत इब्राहीम अलै. और फिर उनकी नस्ल के बाज़ अम्बिया किराम अलै. का ज़िक्र आ रहा है। अम्बिया के नामों पर मुश्तमिल एक ख़ूबसूरत गुलदस्ता तो सूरतुन्निसा के आख़िर में हम देख आये हैं, वहाँ हमने 13 अम्बिया व रुसुल के नाम पढ़े थे। अब यहाँ उससे ज़रा बड़ा गुलदस्ता सजाया गया है, जिसमें 17 अम्बिया व रुसुल के नाम शामिल हैं। हज़रत इब्राहीम अलै. का ज़िक्र यहाँ ज़रा तफ़सील के साथ आया है। आप अलै. की क़ौम का क्या अंजाम हुआ, उसकी तफ़सील क़ुरान में मज़कूर नहीं है। इसी लिये आप अलै. के मामले को यहाँ इस सूरत में अलग कर लिया गया है, क्योंकि इस सूरत में सिर्फ़ التذكير بآلاء الله की मिसालें शामिल हैं, जबकि सूरतुल आराफ़ में “ذَكِّرْهُمْ بِاَيّٰمِ اللّٰهِ” के तहत التذكير بايام الله का ज़हूर नज़र आता है। चुनाँचे हज़रत नूह, हज़रत हूद, हज़रत सालेह, हज़रत शुऐब, हज़रत लूत और हज़रत मूसा अलै. का ज़िक्र सूरतुल आराफ़ में है। यही वह छ: रसूल हैं जिनकी क़ौमों पर अज़ाब आया और उनको इबरत का निशान बना दिया गया।

आयत 74

وَاِذْ قَالَ اِبْرٰهِيْمُ لِاَبِيْهِ اٰزَرَ اَتَتَّخِذُ اَصْنَامًا اٰلِهَةً

“और याद करो जब कहा था इब्राहीम अलै. ने अपने बाप आज़र से क्या तुमने इन बुतों को अपना ख़ुदा बना रखा है?”

यहाँ पर ख़ुसूसी तौर पर लफ्ज़ “आज़र” जो हज़रत इब्राहीम अलै. के वालिद के नाम के तौर पर आया है, यह मेरे नज़दीक तौरात में मन्दर्ज नाम की नफ़ी करने के लिये आया है। तौरात में आप अलै. के वालिद का नाम

"तारिख" लिखा गया है और उसकी यहाँ तसहीह की गयी है, वरना यहाँ यह फ़िक़रा लफ्ज़ "आज़र" के बगैर भी काफ़ी था। इस वाज़ेह निशानदेही के बावजूद भी बाज़ लोग मुगालते में पड़ गये हैं और उन्होंने तौरात में मज़कूर नाम ही इख़्तियार किया है। जैसे अहले तशय्य हज़रत इब्राहीम अलै. के बाप का नाम "तारिख" ही कहते हैं और आज़र जिसका ज़िक्र यहाँ आया है उसको आप अलै. का चचा कहते हैं। उन्होंने यह मौक़फ़ क्यों इख़्तियार किया है, इसकी एक ख़ास वजह है, जो फिर किसी मौक़े पर बयान होगी।

اِنِّیۡۤ اَرٰىكَ وَقَوۡمَكَ فِیۡ ضَلٰلٍ مُّبِیۡنٍ ﴿۷۴﴾

"मेरी राय में तो आप और आपकी क़ौम खुली गुमराही में मुब्तला हैं।"

आयत 75

وَ كَذٰلِكَ نُرِیۡۤ اِبۡرٰهِیۡمَ مَلَكُوۡتَ السَّمٰوٰتِ وَالۡاَرۡضِ

"और इसी तरह हम दिखाते रहे इब्राहीम अलै. को आसमानों और ज़मीन के मलाकूत"

यहाँ मलाकूत से मुराद यह पूरा निज़ाम है जिसके तहत अल्लाह तआला इस कायनात को चला रहा है। यह निज़ाम गोया एक Universal Government है और अल्लाह तआला के मुक़र्रर करदा कारिन्दे इसे चला रहे हैं। इस निज़ाम का मुशाहिदा अल्लाह तआला अपने रसूलों को कराता है ताकि उनका यक़ीन इस दर्जे का हो जाये जैसा कि आँखों देखी चीज़ के बारे में होता है।

وَلِیَكُوۡنَ مِنَ الۡمُوۡقِنِیۡنَ ﴿۷۵﴾

"ताकि वह पूरी तरह यक़ीन करने वालों में से हो जाये।"

इस फ़िक़रे में "वाव" की वजह से हम इससे पहले यह फ़िक़रा महज़ूफ़ मानेंगे: "ताकि वह अपनी क़ौम पर हुज्जत क़ायम कर सके" وَلِیَكُوۡنَ مِنَ الۡمُوۡقِنِیۡنَ "और हो जाये पूरी तरह यक़ीन करने वालों में से।"

अब आगे जो तफ़सील आ रही है यह दरहक़ीक़त हज़रत इब्राहीम अलै. की तरफ़ से अपनी क़ौम पर हुज्जत पेश करने का एक अंदाज़ है। बाज़ हज़रात के नज़दीक यह हज़रत इब्राहीम अलै. के अपने ज़हनी इरतक़ा के कुछ मराहिल हैं, कि वाक़िअतन उन्होंने यह समझा कि यह सितारा मेरा ख़ुदा है। फिर जब वह छुप गया तो उन्होंने समझा कि नहीं-नहीं यह तो डूब गया है, यह ख़ुदा नहीं हो सकता। फिर चाँद को देख कर ऐसा ही समझा। फिर सूरज को देखा तो ऐसा ही ख्याल उनके दिल में आया। यह बाज़ हज़रात की राय है और इन अल्फ़ाज़ से ऐसा कुछ मुतबादर भी होता है, लेकिन इस सिलसिले में ज़्यादा सही राय यही है कि हज़रत इब्राहीम अलै. ने अपनी क़ौम पर हुज्जत क़ायम करने के लिये यह तदरीजी तरीक़ा इख़्तियार किया। आगे आयत 83 के इन अल्फ़ाज़ से इस मौक़फ़ की ताइद भी होती है: { وَتِلۡكَ حُجَّتُنَاۤ اٰتَیۡنٰهَاۤ اِبۡرٰهِیۡمَ عَلٰی قَوۡمِهٖ } फिर यह बात भी वाज़ेह रहे कि हज़रत इब्राहीम अलै. तो अल्लाह के नबी थे और कोई भी नबी ज़िन्दगी के किसी भी मरहले पर कभी शिर्क का इरतकाब नहीं करता। उसकी फ़ितरत और सरशत (nature) इतनी ख़ालिस होती है कि वह कभी शिर्क में मुब्तला हो ही नहीं सकता। अम्बिया का मरतबा तो बहुत ही बुलन्द है, अल्लाह तआला ने तो सिद्दिक़ीन को यह शान अता की है कि वह भी शिर्क में कभी मुब्तला नहीं होते। हज़रत अबु बक्र और हज़रत उस्मान रज़ि. जो सहाबा किराम रज़ि. में से सिद्दिक़ीन हैं, उन्होंने रसूल अल्लाह ﷺ की बेअसत से पहले भी कभी शिर्क नहीं किया था।

आयत 76

فَلَمَّا جَنَّ عَلَيْهِ الَّيْلُ رَاٰ كَوْكَبًا ۚ قَالَ هٰذَا رَبِّيْ ۚ

"पस जब रात ने उन (अलै.) को (अपनी तारीकी में) ढाँप लिया तो उन्होंने देखा एक (चमकदार) सितारे को, तो कहा यह मेरा रब है!"

यह सवालिया अंदाज़ भी हो सकता है, गोया कह रहे हो क्या यह मेरा रब है? और इस्तेजाबिया अंदाज़ भी हो सकता है। गोया लोगों को चौंकाने के लिये ऐसे कहा हो।

فَلَمَّآ اَفَلَ قَالَ لَآ اُحِبُّ الْاٰفِلِيْنَ ۝

"फिर जब वह गुरूब हो गया तो कहने लगे कि मैं गुरूब हो जाने वालों को पसंद नहीं करता।"

मैं इसको अपना ख़ुदा कैसे मान लूँ? यह क़ौम जिसमें हज़रत इब्राहीम अलै. भेजे गये थे सितारापरस्त भी थी, बुतपरस्त भी थी और शाहपरस्त भी थी। तीनों क़िस्म के शिर्क उस क़ौम में मौजूद थे। हज़रत इब्राहीम अलै. बेबिलोनिया (आज का इराक़) के शहर "उर" में पैदा हुए। इस शहर के खण्डरात भी अब दरयाफ्त हो चुके हैं। फिर वहाँ से हिजरत करके फ़लस्तीन गये, वहाँ से हिजाज़ गये और हज़रत इस्माइल अलै. को वहाँ आबाद किया। जबकि अपने दूसरे बेटे हज़रत इसहाक़ अलै. को फ़लस्तीन में आबाद किया। उस वक़्त इराक़ में शिर्क के घटा टॉप अँधेरे थे। वह लोग बुतपरस्ती और सितारापरस्ती के साथ-साथ नमरूद की परस्तिश भी करते थे, जो दावा करता था कि मैं ख़ुदा हूँ। नमरूद का हज़रत इब्राहीम अलै. के साथ मुहाज्जा (मकालमा) हम सूरह बक़रह में पढ़ चुके हैं, इसमें उसने कहा था: اَنَا اُحْيٖ وَ اُمِيْتُ कि मैं भी यह इख़्तियार रखता हूँ कि जिसको चाहूँ ज़िन्दा रखूँ, जिसको चाहूँ मार दूँ।

आयत 77

فَلَمَّا رَاَ الْقَمَرَ بَازِغًا قَالَ هٰذَا رَبِّيْ ۚ فَلَمَّآ اَفَلَ قَالَ لَئِنْ لَّمْ يَهْدِنِيْ رَبِّيْ لَاَكُوْنَنَّ مِنَ الْقَوْمِ الضَّآلِّيْنَ ۝

"फिर जब उन्होंने देखा चाँद चमकता हुआ तो कहा यह है मेरा रब! फिर जब वह भी गायब हो गया तो उन्होंने कहा अगर मेरे रब ने मुझे हिदायत ना दी तो मैं गुमराहों में से हो जाऊँगा।"

गोया यह वह अल्फ़ाज़ हैं जिनसे मुतबादर होता है कि शायद अभी आप अलै. का अपना ज़हनी और फ़िक्री इरतक़ा हो रहा है। लेकिन इन दोनों पहलुओं पर गौरो फ़िक्र के बाद जो राय बनती है वह यही है कि आप अलै. ने अपनी क़ौम पर हुज्जत क़ायम करने के लिये यह तदरीजी अंदाज़ इख़्तियार किया था।

आयत 78

فَلَمَّا رَاَ الشَّمْسَ بَازِغَةً قَالَ هٰذَا رَبِّيْ هٰذَآ اَكْبَرُ ۚ فَلَمَّآ اَفَلَتْ قَالَ يٰقَوْمِ اِنِّيْ بَرِيْٓءٌ مِّمَّا تُشْرِكُوْنَ ۝

"फिर जब देखा सूरज को बहुत चमकदार तो कहने लगे हाँ यह है मेरा रब, यह सबसे बड़ा है! फिर जब वह भी गायब हो गया तो उन्होंने कहा ऐ मेरी क़ौम के लोगो! मैं ऐलाने बराअत करता हूँ इन सबसे जिन्हें तुम शरीक ठहरा रहे हो।"

आयत 79

اِنِّیۡ وَجَّهۡتُ وَجۡهِیَ لِلَّذِیۡ فَطَرَ السَّمٰوٰتِ وَالۡاَرۡضَ حَنِیۡفًا وَّمَاۤ اَنَا مِنَ الۡمُشۡرِکِیۡنَ ﴿۷۹﴾

"मैंने तो अपना रुख कर लिया है यकसू होकर उस हस्ती की तरफ़ जिसने आसमान व ज़मीन को बनाया है और मैं मुशरिकों में से नहीं हूँ।"

आयत 80

وَحَآجَّهٗ قَوۡمُهٗ

"अब (इस पर) आप अलै. की क़ौम आप अलै. से बहस करने लगी।"

हज़रत इब्राहीम अलै. की क़ौम ने आप अलै. से हुज्जतबाज़ी शुरू कर दी कि यह तुमने क्या कह दिया, तमाम देवी-देवताओं की नफ़ी कर दी, सारे सितारों और चाँद-सूरज की रबूहियत से इन्कार कर दिया! अब इन देवी-देवताओं सितारों की नहूसत तुम पर पड़ेगी। अब तुम अंजाम के लिये तैयार हो जाओ, तुम्हारी शामत आने वाली है।

قَالَ اَتُحَآجُّوۡٓنِّیۡ فِی اللّٰهِ وَقَدۡ هَدٰىنِ ؕ وَلَاۤ اَخَافُ مَا تُشۡرِکُوۡنَ بِهٖۤ اِلَّاۤ اَنۡ یَّشَآءَ رَبِّیۡ شَیۡـًٔا ؕ

"(इब्राहीम अलै. ने) कहा क्या तुम मुझसे हुज्जतबाज़ी कर रहे हो अल्लाह के बारे में, जबकि मुझे तो उसने हिदायत दी है। और मुझे कोई खौफ़ नहीं है उन (हस्तियों) का जिन्हें तुम उसका शरीक ठहराते रहे हो, सिवाय इसके कि मेरा रब ही कोई बात चाहे।"

हाँ अगर अल्लाह चाहे कि मुझे कोई तकलीफ़ पहुँचे, कोई आज़माइश आ जाये तो ठीक है, क्योंकि वह मेरा खालिक़ और मेरा रब है, लेकिन इसके अलावा मुझे किसी का कोई खौफ़ नहीं, ना तुम्हारी किसी देवी का, ना किसी देवता का, ना किसी सितारे की नहूसत का और ना किसी और का।

وَسِعَ رَبِّیۡ کُلَّ شَیۡءٍ عِلۡمًا ؕ اَفَلَا تَتَذَکَّرُوۡنَ ﴿۸۰﴾

"मेरा रब हर शय का इल्म के ऐतबार से इहाता किये हुए है, तो क्या तुम लोग नसीहत हासिल नहीं करते?"

मेरे रब का इल्म हर शय को मुहीत है। तो क्या तुम लोग सोचते नहीं हो, अक़्ल से काम नहीं लेते हो?

आयत 81

وَکَیۡفَ اَخَافُ مَاۤ اَشۡرَکۡتُمۡ وَلَا تَخَافُوۡنَ اَنَّکُمۡ اَشۡرَکۡتُمۡ بِاللّٰهِ مَا لَمۡ یُنَزِّلۡ بِهٖ عَلَیۡکُمۡ سُلۡطٰنًا ؕ

"और मैं कैसे डरूँ उनसे जिन्हें तुमने शरीक ठहरा रखा है जबकि तुम इस बात से नहीं डरते कि तुमने अल्लाह के साथ शरीक ठहरा लिये हैं जिनके लिये अल्लाह ने तुम पर कोई सनद नहीं उतारी।"

अल्लाह तआला की ज़ात और सिफ़ात में शराकत की कोई सनद मौजूद ही नहीं। ना अक़्ल और फ़ितरत में इसकी कोई बुनियाद है, ना किसी आसमानी किताब में किसी दूसरे मअबूद के लिये कोई गुंजाइश है।

فَاَیُّ الۡفَرِیۡقَیۡنِ اَحَقُّ بِالۡاَمۡنِ ۚ اِنۡ کُنۡتُمۡ تَعۡلَمُوۡنَ ﴿۸۱﴾

"तो (हम दोनों) फ़रीक़ैन में से कौन अमन का ज़्यादा हक़दार है? अगर तुम इल्म रखते हो तो (बताओ!)"

यानि एक शख्स मुवह्हिद है, एक अल्लाह पर ईमान रखता है और यक़ीन रखता है कि वह सारी कायनात का बिला शिरकते गैरे मालिक है, हर शय उसके क़ब्ज़ा-ए-क़ुदरत में है, जबकि दूसरा वह है जो अल्लाह को मानने के साथ-साथ उसके इक़तदार व इख़्तियार में बाज़ दूसरी हस्तियों को भी

शरीक समझता है, कुछ छोटे मअबूदों और देवी-देवताओं को भी मानता है। तो अब ज़रा बताओ कि अमन, चैन, रूहानी इत्मिनान और हक़ीक़ी सुकूने क़ल्ब का ज़्यादा हक़दार इन दोनों में से कौन होगा? सवाल करने के बाद इसका जवाब भी ख़ुद ही इरशाद फ़रमाया:

आयत 82

اَلَّذِيْنَ اٰمَنُوْا وَلَمْ يَلْبِسُوْٓا اِيْمَانَهُمْ بِظُلْمٍ

"यक़ीनन वह लोग जो ईमान लाये और उन्होंने अपने ईमान को किसी तरह के शिर्क से आलूदा नहीं किया"

यहाँ लफ्ज़ "ज़ुल्म" क़ाबिले तवज्जो है। ज़ुल्म किसी छोटे गुनाह को भी कह सकते हैं। इसी लिये इस लफ्ज़ पर सहाबा किराम रज़ि. घबरा गये थे कि हुज़ूर कौन शख्स होगा जिसने कभी कोई ज़ुल्म ना किया हो? और नहीं तो इन्सान अपने ऊपर तो किसी ना किसी हद तक ज़ुल्म करता ही है। गोया इसका तो मतलब यह हुआ कि कोई शख्स भी इस शर्त पर पूरा नहीं उतर सकता। आप ﷺ ने फ़रमाया कि नहीं, यहाँ ज़ुल्म से मुराद शिर्क है, और फिर आप ﷺ ने सूरह लुक़मान की वह आयत तिलावत फ़रमायी जिसमें शिर्क को ज़ुल्मे अज़ीम क़रार दिया गया है:

وَاِذْ قَالَ لُقْمٰنُ لِابْنِهٖ وَهُوَ يَعِظُهٗ يٰبُنَيَّ لَا تُشْرِكْ بِاللّٰهِ ۭ اِنَّ الشِّرْكَ لَظُلْمٌ عَظِيْمٌ ۝۱۳

चुनाँचे यहाँ पर {لَمْ يَلْبِسُوْٓا اِيْمَانَهُمْ بِظُلْمٍ} का मफ़हूम यह है कि ईमान ऐसा हो जो शिर्क की हर आलूदगी से पाक हो। लेकिन शिर्क का पहचानना आसान नहीं, यह तरह-तरह के भेस बदलता रहता है। शिर्क क्या है और शिर्क की क़िस्में कौन-कौन सी हैं और यह ज़माने और हालात के मुताबिक़ कैसे-कैसे भेस बदलता रहता है, यह सब कुछ जानना एक मुस्लमान के लिये इन्तहाई ज़रूरी है, ताकि जिस भेस और शक्ल में भी यह नमूदार हो इसे पहचाना जा सके। बक़ौल शायर:

बहर रंगे कि ख्वाही जामा मी पोश
मन अन्दाज़े क़दत रा मी शनासिम!

(तुम चाहे किसी भी रंग का लिबास पहन कर आ जाओ, मैं तुम्हें तुम्हारे क़द से पहचान लेता हूँ।)

"हक़ीक़त व अक़सामे शिर्क" के मौज़ू पर मेरी छ: घंटों पर मुश्तमिल तवील तक़ारीर ऑडियो, वीडियो के अलावा किताबी शक्ल में भी मौजूद हैं, उनसे इस्तफ़ादा करना, इंशाअल्लाह बहुत मुफ़ीद होगा।

اُولٰۗىِٕكَ لَهُمُ الْاَمْنُ وَهُمْ مُّهْتَدُوْنَ ۝۸۲

"वही लोग हैं जिनके लिये अमन है और वही राहयाब होंगे।"

अमन और ईमान इस्लाम और सलामती का लफ्ज़ी ऐतबार से आपस में बड़ा गहरा रब्त है। यह रब्त इस दुआ में बहुत नुमाया हो जाता है जो रसूल अल्लाह ﷺ हर नया चाँद देखने पर माँगा करते थे:

اَللّٰهُمَّ اَهِلَّهٗ عَلَيْنَا بِالْاَمْنِ وَالْاِيْمَانِ وَالسَّلَامَةِ وَالْاِسْلَامِ

"ऐ अल्लाह (यह महीना जो शुरू हो रहा है इस नये चाँद के साथ) इसे हम पर तुलूअ फ़रमा अमन और ईमान, सलामती और इस्लाम के साथ।"

"क़ुरान और अमने आलम" के नाम से मेरा एक छोटा सा किताबचा इस मौज़ू पर बड़ी मुफ़ीद मालूमात का हामिल है।

आयात 83 से 90 तक

وَتِلْكَ حُجَّتُنَآ اٰتَيْنٰهَآ اِبْرٰهِيْمَ عَلٰي قَوْمِهٖ ۭ نَرْفَعُ دَرَجٰتٍ مَّنْ نَّشَاۗءُ ۭ اِنَّ رَبَّكَ حَكِيْمٌ عَلِيْمٌ ۝۸۳ وَوَهَبْنَا لَهٗٓ اِسْحٰقَ وَيَعْقُوْبَ ۭ كُلًّا هَدَيْنَا ۚ وَنُوْحًا هَدَيْنَا مِنْ قَبْلُ وَمِنْ ذُرِّيَّتِهٖ دَاوٗدَ وَسُلَيْمٰنَ وَاَيُّوْبَ وَيُوْسُفَ وَمُوْسٰى وَهٰرُوْنَ ۭ وَكَذٰلِكَ نَجْزِي الْمُحْسِنِيْنَ ۝۸۴ وَزَكَرِيَّا وَيَحْيٰى وَعِيْسٰى وَاِلْيَاسَ ۭ كُلٌّ مِّنَ الصّٰلِحِيْنَ ۝۸۵

وَاِسْمٰعِيْلَ وَالْيَسَعَ وَيُوْنُسَ وَلُوْطًا ۭ وَكُلًّا فَضَّلْنَا عَلَى الْعٰلَمِيْنَ ۝ وَمِنْ اٰبَاۗىِٕهِمْ
وَذُرِّيّٰتِهِمْ وَاِخْوَانِهِمْ ۚ وَاجْتَبَيْنٰهُمْ وَهَدَيْنٰهُمْ اِلٰى صِرَاطٍ مُّسْتَقِيْمٍ ۝ ذٰلِكَ
هُدَى اللّٰهِ يَهْدِيْ بِهٖ مَنْ يَّشَاۗءُ مِنْ عِبَادِهٖ ۭ وَلَوْ اَشْرَكُوْا لَحَبِطَ عَنْهُمْ مَّا كَانُوْا
يَعْمَلُوْنَ ۝ اُولٰۗىِٕكَ الَّذِيْنَ اٰتَيْنٰهُمُ الْكِتٰبَ وَالْحُكْمَ وَالنُّبُوَّةَ ۚ فَاِنْ يَّكْفُرْ بِهَا
هٰٓؤُلَاۗءِ فَقَدْ وَكَّلْنَا بِهَا قَوْمًا لَّيْسُوْا بِهَا بِكٰفِرِيْنَ ۝ اُولٰۗىِٕكَ الَّذِيْنَ هَدَى اللّٰهُ
فَبِهُدٰىهُمُ اقْتَدِهْ ۭ قُلْ لَّآ اَسْـَٔـلُكُمْ عَلَيْهِ اَجْرًا ۭ اِنْ هُوَ اِلَّا ذِكْرٰى لِلْعٰلَمِيْنَ ۝

आयत 83

وَتِلْكَ حُجَّتُنَآ اٰتَيْنٰهَآ اِبْرٰهِيْمَ عَلٰي قَوْمِهٖ

"यह हमारी वह हुज्जत थी जो हमने इब्राहीम अलै. को अता की थी उसकी क़ौम के ख़िलाफ़।"

इस आयत का हवाला मौज़ू के आगाज़ में आया था। पूरी सरगज़िश्त बयान करने के बाद अब फ़रमाया कि यह हमारी वह हुज्जत थी जो हमने इब्राहीम अलै. को उसकी क़ौम के ख़िलाफ़ अता की। हज़रत इब्राहीम अलै. अपनी क़ौम से जिस अंदाज़ से मुहाज्जा कर रहे थे उसको "तौरिया" कहते हैं। तौरिया से मुराद ऐसा अन्दाज़े गुफ्तुगू है जिसमें झूठ बोले बगैर मुख़ातिब को मुग़ालते में मुब्तला कर दिया जाये। मसलन हज़रत शैखुल हिन्द रहि. का मशहूर वाक़िया है कि एक ज़माने में अँगरेज़ हुकूमत की तरफ़ से उनकी गिरफ़्तारी के लिये वारंट जारी किये गये। उस ज़माने में वह मक्का मुकर्रमा में मुक़ीम थे। शरीफ़ हुसैन वालिये मक्का के सिपाही उन्हें ढूँढते फिर रहे थे कि एक सिपाही ने उन्हें कहीं खड़े हुए देखा। वह आपको पहचानता नहीं था। उसने क़रीब आकर आप रहि. से पूछा कि तुम महमूदुल हसन को जानते हो? आप रहि. ने कहा जी हाँ, मैं जानता हूँ। उसने पूछा वह कहाँ हैं? आप रहि. ने दो क़दम पीछे हट कर कहा कि अभी यहीं थे। इससे उस सिपाही को मुग़ालता हुआ और वह यह समझते हुए वहाँ से दौड़ पड़ा कि अभी इधर थे तो मैं जल्दी से यहीं-कहीं से उन्हें ढूँढ लूँ। हज़रत इब्राहीम अलै. के इस कलाम में तौरिया का अंदाज़ पाया जाता है। जैसे आप अलै. ने बुत खाने के बुतों को तोड़ा, और जिस तेशे से उनको तोड़ा था वह उस बड़े बुत की गर्दन में लटका दिया। पूछने पर आप अलै. ने जवाब दिया कि इस बड़े बुत ने ही यह काम दिखाया होगा जो सही सालिम खड़ा है और आला-ए-वारदात भी इसके पास है। वहाँ भी यह अंदाज़ इख़्तियार करने का मक़सद यही था कि वह लोग सोचने पर मजबूर और दरूंबीनी पर आमादा हों।

نَرْفَعُ دَرَجٰتٍ مَّنْ نَّشَاۗءُ ۭ اِنَّ رَبَّكَ حَكِيْمٌ عَلِيْمٌ ۝

"हम बुलन्द करते हैं दर्जे जिनके चाहते हैं। यक़ीनन तेरा रब हकीम और अलीम है।"

यानि हमने इब्राहीम अलै. के दर्जे बहुत बुलन्द किये हैं। अब अम्बिया व रुसुल के नामों का वह गुलदस्ता आ रहा है जिसका ज़िक्र पहले किया गया था।

आयत 84

وَوَهَبْنَا لَهٗٓ اِسْحٰقَ وَيَعْقُوْبَ ۭ كُلًّا هَدَيْنَا ۚ وَنُوْحًا هَدَيْنَا مِنْ قَبْلُ وَمِنْ ذُرِّيَّتِهٖ دَاوٗدَ وَسُلَيْمٰنَ وَاَيُّوْبَ وَيُوْسُفَ وَمُوْسٰى وَهٰرُوْنَ ۭ وَكَذٰلِكَ نَجْزِي الْمُحْسِنِيْنَ ۝

"और हमने उसे (इब्राहीम अलै. को) अता फ़रमाया इसहाक़ अलै. (जैसा बेटा) और याक़ूब अलै. (जैसा पोता), उन सबको हमने हिदायत दी। और नूह अलै. को भी हमने हिदायत दी थी उनसे पहले, और उस (इब्राहीम अलै.) की औलाद में से दाऊद अलै., सुलेमान अलै., अय्यूब अलै., युसुफ़ अलै., मूसा अलै. और हारून अलै.

को भी (हिदायत बख़्शी)। और इसी तरह हम बदला देते हैं मोहसिनीन को।"

यानि यह लोग ईमान की उस बुलन्द तरीन मंज़िल पर फ़ाइज़ थे जिसके बारे में हम सूरह मायदा में पढ़ आये हैं: { ثُمَّ اتَّقَوْا وَّاٰمَنُوْا ثُمَّ اتَّقَوْا وَّاَحْسَنُوْا ۭ وَاللّٰهُ يُحِبُّ الْمُحْسِنِيْنَ} (आयत 93)।

आयत 85

وَزَكَرِيَّا وَيَحْيٰى وَعِيْسٰى وَاِلْيَاسَ ۭ كُلٌّ مِّنَ الصّٰلِحِيْنَ ۝۸۵

"और (उसी की औलाद में से) ज़करिया अलै., याहया अलै., ईसा अलै. और इल्यास अलै. को भी। यह सबके सब नेकोकारों में से थे।"

आयत 86

وَاِسْمٰعِيْلَ وَالْيَسَعَ وَيُوْنُسَ وَلُوْطًا ۭ وَكُلًّا فَضَّلْنَا عَلَى الْعٰلَمِيْنَ ۝۸۶

"और इस्माइल अलै. और अल् यसाअ अलै. और युनुस अलै. और लूत अलै. को भी (राहयाब किया), और इन सबको हमने तमाम जहान वालों पर फ़ज़ीलत दी।"

आयत 87

وَمِنْ اٰبَاۗىِٕهِمْ وَذُرِّيّٰتِهِمْ وَاِخْوَانِهِمْ ۚ وَاجْتَبَيْنٰهُمْ وَهَدَيْنٰهُمْ اِلٰى صِرَاطٍ مُّسْتَقِيْمٍ ۝۸۷

"और उनके आबा व अजदाद में से भी, इनकी नस्लों में से भी और इनके भाइयों में से भी (हमने हिदायत याफ्ता बनाये), और इनको हमने चुन लिया और इनको हिदायत दी सीधे रास्ते की तरफ़।"

आयत 88

ذٰلِكَ هُدَى اللّٰهِ يَهْدِيْ بِهٖ مَنْ يَّشَاۗءُ مِنْ عِبَادِهٖ ۭ وَلَوْ اَشْرَكُوْا لَحَبِطَ عَنْهُمْ مَّا كَانُوْا يَعْمَلُوْنَ ۝۸۸

"यह अल्लाह की वह हिदायत है जिसके साथ वह रहनुमाई फ़रमाता है जिसकी चाहता है अपने बन्दों में से। और अगर (बिलफ़र्ज़) वह भी शिर्क करते तो उनके भी सारे आमाल ज़ाया हो जाते।"

यह अंदाज़ हमें समझाने की गर्ज़ से इख़्तियार किया गया है कि शिर्क कितनी बुरी शय है। वरना इसका कोई इम्कान नहीं था कि ऐसे आला मरातिब पर फ़ाइज़ अल्लाह के अज़ीमुश्शान अम्बिया व रुसुल शिर्क में मुब्तला होते। बहरहाल अल्लाह तआला के नज़दीक शिर्क ना क़ाबिले माफ़ी जुर्म है, जिसके बारे में सूरतुन्निसा (आयत 48, 116) में दो मर्तबा यह अल्फ़ाज़ आ चुके हैं: {اِنَّ اللّٰهَ لَا يَغْفِرُ اَنْ يُّشْرَكَ بِهٖ وَيَغْفِرُ مَا دُوْنَ ذٰلِكَ لِمَنْ يَّشَاۗءُ ۚ}।

आयत 89

اُولٰۗىِٕكَ الَّذِيْنَ اٰتَيْنٰهُمُ الْكِتٰبَ وَالْحُكْمَ وَالنُّبُوَّةَ ۚ

"यह वह लोग हैं जिनको हमने किताब, हिकमत और नबुवत अता फ़रमायी।"

فَإِنْ يَّكْفُرْ بِهَا هٰٓؤُلَآءِ فَقَدْ وَكَّلْنَا بِهَا قَوْمًا لَّيْسُوْا بِهَا بِكٰفِرِيْنَ ۝٨٩

"फिर अगर यह लोग इसका इन्कार कर रहे हैं तो (कुछ परवाह नहीं) हमने कुछ और लोग इस काम के लिये मुक़र्रर कर दिये हैं जो इसकी नाक़द्री नहीं करेंगे।"

मक़ामे इबरत है! मुहम्मद रसूल अल्लाह ﷺ जैसा रसूल, मुबल्लिग़, दाई, मुरब्बी, मुज़क्की और मुअल्लिम पिछले बारह साल से दिन-रात मेहनत कर रहा है और उसके नतीजे में अब तक सिर्फ़ डेढ़, पौने दो सौ अफ़राद दायरा-ए-इस्लाम में दाख़िल हुए हैं। इस पसमंज़र में आप ﷺ से फ़रमाया जा रहा है कि मक्का के यह लोग अगर इस दावत की नाक़द्री कर रहे हैं, इस क़ुरान की नाशुक्री कर रहे हैं, इसका इन्कार कर रहे हैं और आप ﷺ की दस-बारह साल की मेहनत के खातिर ख्वाह नताइज सामने नहीं आये हैं तो आप ﷺ दिल शिकस्ता ना हों, अनक़रीब एक दूसरी क़ौम बड़े ज़ोक़ व शोक़ से इस दावत पर लब्बैक कहने जा रही है। इस खुशकिस्मत क़ौम से मुराद अन्सारे मदीना हैं। और वाक़ई इस सिलसिले में अहले मक्का पीछे रह गये और अहले मदीना बाज़ी ले गये। बक़ौले शायर: *गिरफ़्ता चीनीयाँ अहराम व मक्की खफ्ता दर बत्हा!*

दुनिया के हालात व असबाब को देखते हुए कुछ नहीं कहा जा सकता कि अल्लाह तआला दीन के काम में कैसे-कैसे असबाब पैदा फ़रमाते हैं और कहाँ-कहाँ से किस-किस तरह के लोगों के दिलों को फेर कर हिदायत की तौफ़ीक़ दे देते हैं। मुझे अपनी दावत रुजूअ इलल क़ुरान के बारे में भी इत्मिनान है कि पाकिस्तान में इसको खातिर ख्वाह पज़ीराई नहीं मिली तो क्या हुआ, यह दावत मुख्तलिफ़ ज़राय से पूरी दुनिया में फेल रही है, और कुछ नहीं कहा जा सकता कि क़ुरान की यह इन्क़लाबी दावत किस जगह ज़मीन के अन्दर जड़ पकड़ ले और एक तनावर दरख़्त की सूरत इख़्तियार कर ले।

आयत 90

أُولٰٓئِكَ الَّذِيْنَ هَدَى اللّٰهُ فَبِهُدٰىهُمُ اقْتَدِهْ

"यही लोग हैं जिनको अल्लाह ने हिदायत दी थी, तो आप भी इनकी हिदायत की पैरवी कीजिये।"

यानि अभी जिन अम्बिया व रुसुल का ज़िक्र हुआ है, सत्रह नामों का ख़ूबसूरत गुलदस्ता आपने मुलाहिज़ा किया है, वह सबके सब अल्लाह तआला के हिदायत याफ्ता थे। इस सिलसिले में हुज़ूर ﷺ को फ़रमाया जा रहा है कि आप भी उनके तरीक़े की पैरवी करें। इस आयत से एक बहुत अहम नुक्ता और उसूल यह सामने आता है कि साबिक़ अम्बिया की शरीअत का ज़िक्र करते हुए जिन अहकाम की नफ़ी ना की गयी हो, वह हमारे लिये भी क़ाबिले इत्तेबाअ हैं। मसलन रज्म की सज़ा क़ुरान में मज़कूर नहीं है, यह साबक़ा शरीअत की सज़ा है, जिसको हुज़ूर ﷺ ने बरक़रार रखा है। इसी तरह क़त्ले मुर्तद की सज़ा का ज़िक्र भी क़ुरान में नहीं है, यह भी साबक़ा शरीअत की सज़ा है, जिसको बरक़रार रखा गया है। इस नुक्ते से यह उसूल सामने आता है कि जब तक क़ुरान व सुन्नत में साबक़ा शरीअत के किसी हुक्म की नफ़ी नहीं होती वह हुक्म इस्लामी शरीअत में बरक़रार रहता है।

قُلْ لَّآ اَسْـَٔلُكُمْ عَلَيْهِ اَجْرًا ۭ اِنْ هُوَ اِلَّا ذِكْرٰى لِلْعٰلَمِيْنَ ۝٩٠

"कह दीजिये मैं तुमसे इस पर किसी अज्र का तालिब नहीं हूँ। यह नहीं है मगर तमाम जहान वालों के लिये याद दिहानी।"

यह क़ुरान तो बस अहले आलम के लिये एक नसीहत है, याद दिहानी है, जो चाहे इससे कस्बे फ़ैज़ करे, जो चाहे इससे नूर हासिल करे, जो चाहे इससे सिराते मुस्तक़ीम की रहनुमाई अख़ज़ कर ले।

आयात 91 से 94 तक

وَمَا قَدَرُوا اللّٰهَ حَقَّ قَدْرِهٖٓ اِذْ قَالُوْا مَآ اَنْزَلَ اللّٰهُ عَلٰى بَشَرٍ مِّنْ شَيْءٍ ۭ قُلْ مَنْ اَنْزَلَ
الْكِتٰبَ الَّذِيْ جَاۗءَ بِهٖ مُوْسٰى نُوْرًا وَّهُدًى لِّلنَّاسِ تَجْعَلُوْنَهٗ قَرَاطِيْسَ تُبْدُوْنَهَا
وَتُخْفُوْنَ كَثِيْرًا ۚ وَعُلِّمْتُمْ مَّا لَمْ تَعْلَمُوْٓا اَنْتُمْ وَلَآ اٰبَاۗؤُكُمْ ۭ قُلِ اللّٰهُ ۙ ثُمَّ ذَرْهُمْ فِيْ
خَوْضِهِمْ يَلْعَبُوْنَ ۝۹۱ وَهٰذَا كِتٰبٌ اَنْزَلْنٰهُ مُبٰرَكٌ مُّصَدِّقُ الَّذِيْ بَيْنَ يَدَيْهِ
وَلِتُنْذِرَ اُمَّ الْقُرٰى وَمَنْ حَوْلَهَا ۭ وَالَّذِيْنَ يُؤْمِنُوْنَ بِالْاٰخِرَةِ يُؤْمِنُوْنَ بِهٖ وَهُمْ
عَلٰي صَلَاتِهِمْ يُحَافِظُوْنَ ۝۹۲ وَمَنْ اَظْلَمُ مِمَّنِ افْتَرٰى عَلَي اللّٰهِ كَذِبًا اَوْ قَالَ اُوْحِيَ
اِلَيَّ وَلَمْ يُوْحَ اِلَيْهِ شَيْءٌ وَّمَنْ قَالَ سَاُنْزِلُ مِثْلَ مَآ اَنْزَلَ اللّٰهُ ۭ وَلَوْ تَرٰٓى اِذِ
الظّٰلِمُوْنَ فِيْ غَمَرٰتِ الْمَوْتِ وَالْمَلٰۗىِٕكَةُ بَاسِطُوْٓا اَيْدِيْهِمْ ۚ اَخْرِجُوْٓا اَنْفُسَكُمْ ۭ
اَلْيَوْمَ تُجْزَوْنَ عَذَابَ الْهُوْنِ بِمَا كُنْتُمْ تَقُوْلُوْنَ عَلَي اللّٰهِ غَيْرَ الْحَقِّ وَكُنْتُمْ عَنْ
اٰيٰتِهٖ تَسْتَكْبِرُوْنَ ۝۹۳ وَلَقَدْ جِئْتُمُوْنَا فُرَادٰى كَمَا خَلَقْنٰكُمْ اَوَّلَ مَرَّةٍ وَّتَرَكْتُمْ مَّا
خَوَّلْنٰكُمْ وَرَاۗءَ ظُهُوْرِكُمْ ۚ وَمَا نَرٰى مَعَكُمْ شُفَعَاۗءَكُمُ الَّذِيْنَ زَعَمْتُمْ اَنَّهُمْ فِيْكُمْ
شُرَكٰۗؤُا ۭ لَقَدْ تَّقَطَّعَ بَيْنَكُمْ وَضَلَّ عَنْكُمْ مَّا كُنْتُمْ تَزْعُمُوْنَ ۝۹۴

अब उस रद्दो क़दा का ज़िक्र होने जा रहा है जो मक्का के लोग यहूदियों के सिखाने-पढ़ाने पर हुज़ूर ﷺ से कर रहे थे। अब तक इस सूरत में जो गुफ्तुगू हुई है वह ख़ालिस मक्का के मुशरिकीन की तरफ़ से थी और उन्हीं के साथ सारा मकालमा और मुनाज़रा था। लेकिन जैसा कि पहले बयान हो चुका है कि यह दोनों सूरतें (सूरतुल अनआम और सूरतुल आराफ़) मक्की दौर के आखरी ज़माने में नाज़िल हुईं। उस वक़्त तक हुज़ूर ﷺ की रिसालत और नबुवत के दावे का चर्चा मदीना मुनव्वरा में भी पहुँच चुका था और अहले किताब (यहूद) ने खतरे को भाँप कर वहीं बैठे-बैठे आप ﷺ के ख़िलाफ़ साज़िशें और रेशा दवानियाँ शुरू कर दी थीं। वह ज़िद और हठधर्मी में यहाँ तक कह बैठे थे कि इन मुसलमानों से तो यह मुशरिक बेहतर हैं जो बुतों को पूजते हैं, वगैरह-वगैरह। इसी तरह की एक बात वह है जो यहाँ कही जा रही है।

आयत 91

وَمَا قَدَرُوا اللّٰهَ حَقَّ قَدْرِهٖٓ اِذْ قَالُوْا مَآ اَنْزَلَ اللّٰهُ عَلٰى بَشَرٍ مِّنْ شَيْءٍ

"और उन्होंने हरगिज़ अल्लाह की क़द्र ना पहचानी जैसा कि उसका हक़ था जब उन्होंने कहा कि नहीं उतारी है अल्लाह ने किसी भी इन्सान पर कोई भी चीज़।"

वहिये इलाही के बारे में यह साफ़ इन्कार (categorical denial) उन लोगों का था जो ख़ुद को इल्हामी किताब के वारिस समझते थे। अहले मक्का तो चूँकि आसमानी किताबों से वाक़िफ़ ही नहीं थे इसलिये उन्होंने हुज़ूर ﷺ की नबुवत और वही का ज़िक्र यहूद से किया और उनसे राय पूछी। इस पर यहूदियों का जवाब यह था कि यह सब ख्याल और वहम है, अल्लाह ने किसी इन्सान पर कभी कोई चीज़ उतारी ही नहीं। अब अहले मक्का ने यहूदियों के पढ़ाने पर क़ुरान मजीद पर जब यह ऐतराज़ किया तो उसके जवाब में मुशरिकीने मक्का से ख़िताब नहीं किया गया, बल्कि बराहेरास्त यहूद को मुख़ातिब किया गया जिनकी तरफ से यह ऐतराज़ आया था, और उनसे पूछा गया कि अगर अल्लाह ने किसी इन्सान पर कभी कुछ नाज़िल ही नहीं किया तो:

قُلْ مَنْ اَنْزَلَ الْكِتٰبَ الَّذِيْ جَاۗءَ بِهٖ مُوْسٰى نُوْرًا وَّهُدًى لِّلنَّاسِ

"आप ﷺ पूछिये कि फिर किसने उतारी थी वह किताब जो मूसा लेकर आये थे जो ख़ुद नूर (रोशन) थी और लोगों के लिये हिदायत भी थी?"

तो क्या तौरात हज़रत मूसा अलै. की तरफ़ से मनघडत थी? क्या उन्होंने उसे अपने हाथ से लिख लिया था?

تَجْعَلُوْنَهٗ قَرَاطِيْسَ تُبْدُوْنَهَا وَتُخْفُوْنَ كَثِيْرًا ۚ

"तुमने उसे वर्क़-वर्क़ कर दिया है, उस (के अहकाम) में से कुछ को ज़ाहिर करते हो और अक्सर को छुपा कर रखते हो।"

यहूद अपनी इल्हामी किताब के साथ जो सुलूक करते रहे थे वह भी उन्हें जितला दिया। यहूदी उल्मा में तौरात के अहकाम को ना सिर्फ़ पसंद और नापसंद के खानों में तक़सीम कर दिया था बल्कि अपनी मनमानी फ़तवा फ़रोशियों के लिये उसको इस तरह छुपा कर रखा था कि आम लोगों की दस्तरस उस तक नामुमकिन होकर रह गयी थी।

وَعُلِّمْتُمْ مَّا لَمْ تَعْلَمُوْٓا اَنْتُمْ وَلَآ اٰبَآؤُكُمْ ۚ

"और तुम्हें सिखायी गयी थीं (तौरात के ज़रिये से) वह सब बातें जो ना तुम जानते थे और ना तुम्हारे आबा व अजदाद।"

قُلِ اللّٰهُ ۙ

"कहिये (यह सब नाज़िल किया था) अल्लाह ने"

यानि फिर ख़ुद ही जवाब दीजिये कि तुम्हारी अपनी इल्हामी किताबें तौरात और इन्जील भी अल्लाह ही की तरफ़ से नाज़िल शुदा हैं और अब यह क़ुरान भी अल्लाह ही ने नाज़िल फ़रमाया है।

ثُمَّ ذَرْهُمْ فِيْ خَوْضِهِمْ يَلْعَبُوْنَ ۝۹۱

"फिर इनको छोड़ दीजिये कि यह अपनी कज बहसों के अन्दर खेलते रहें।"

आयत 92

وَهٰذَا كِتٰبٌ اَنْزَلْنٰهُ مُبٰرَكٌ مُّصَدِّقُ الَّذِيْ بَيْنَ يَدَيْهِ وَلِتُنْذِرَ اُمَّ الْقُرٰى وَمَنْ حَوْلَهَا ۭ

"और (इसी तरह की) यह एक किताब है जिसे हमने नाज़िल किया है, बड़ी बाबरकत है, तस्दीक़ करने वाली है उसकी जो इसके सामने मौजूद है, ताकि आप ﷺ ख़बरदार कर दें उम्मुल क़ुरा (मक्का) और उसके आस-पास के लोगों को।"

क़ुरा जमा है क़ुरया की और उम्मुल क़ुरा का मतलब है बस्तियों की माँ, यानि किसी इलाक़े का सबसे बड़ा शहर। हर मुल्क में एक सबसे बड़ा और सबसे अहम शहर होता है, उसे दारुल ख़िलाफ़ा कहें या दारुल हुकूमत। वह बड़ा शहर पूरे मुल्क के लिये मरकज़ी हैसियत रखता है। अगरचे अरब में उस वक़्त कोई मरकज़ी हुकूमत नहीं थी जिसका कोई दारुल हुकूमत होता, लेकिन मुख्तलिफ़ वजूहात की बिना पर मक्का मुकर्रमा को पूरे अरब में एक मरकज़ी शहर की हैसियत हासिल थी। खाना काबा की वजह से यह शहर मज़हबी मरकज़ था। अरब के तमाम क़बाइल यहाँ हज के लिये आते थे। काबे ही की वजह से क़ुरैशे मक्का को ख़ित्ते की तिजारती सरगर्मियों में एक ख़ास अजारह दारी (monopoly) हासिल थी। चुनाँचे अहले मक्का के यहाँ पैसे की रेल-पेल थी और आम लोग ख़ुशहाल थे। यहाँ तिजारती क़ाफ़िलों का आना-जाना सारा साल लगा रहता था। यमन से क़ाफ़िले चलते थे जो मक्का से होकर शाम को जाते थे और शाम से चलते थे तो मक्का से होकर यमन को जाते थे। इन वजूहात की बिना पर शहर मक्का बजा तौर पर इलाक़े में "उम्मुल क़ुरा" की हैसियत रखता था। इसलिये फ़रमाया कि ऐ नबी ﷺ हमने आप ﷺ की तरफ़ यह किताबे मुबारक नाज़िल की है ताकि आप ﷺ उम्मुल क़ुरा में बसने वालों को ख़बरदार करें और फिर उनको भी जो उसके इर्द-गिर्द बसते हैं। यहाँ पर وَمَنْ حَوْلَهَا के अल्फ़ाज़ में जो फ़साहत और वुसअत है उसे भी समझ लें। "माहौल" का दायरा बढ़ते-बढ़ते लामहदूद हो जाता है। उसका एक दायरा तो बिल्कुल क़रीबी और immediate होता है, फिर उससे बाहर ज़रा ज़्यादा फ़ासले पर, और फिर

उससे बाहर मज़ीद फ़ासले पर। यह दायरा फैलते-फैलते पूरे क़ुर्रा-ए-अर्ज़ पर मुहीत हो जायेगा। अगर दौरे नबवी में क़ुर्रा-ए-अर्ज़ की आबादी को देखा जाये तो उस वक़्त बर्रे अज़ीम एक लिहाज़ से तीन ही थे, एशिया, यूरोप और अफ्रीक़ा। अमेरिका बहुत बाद में दरयाफ्त हुआ है जबकि ऑस्ट्रेलिया और अंटार्कटिका भी मालूम दुनिया का हिस्सा ना थे। दुनिया के नक़्शे पर निगाह डालें तो एशिया, यूरोप और अफ़्रीक़ा तीनों बर्रे अज़ीम जहाँ पर मिल रहे हैं, तक़रीबन यह इलाक़ा वह है जिसे अब "मिडिल ईस्ट" या मशरिक़े वुस्ता कहते हैं। अगरचे यह नाम (मिडिल ईस्ट) इस इलाक़े के लिये misnomer है, यानि दुरुस्त नाम नहीं है, लेकिन बहरहाल यह इलाक़ा एक नुक्ता-ए-इत्तेसाल है जहाँ एशिया, यूरोप और अफ़्रीक़ा आपस में मिल रहे हैं और इस जंक्शन पर यह जज़ीरा नुमाए अरब वाक़ेअ है। यह इलाक़ा इस ऐतबार से पूरी दुनिया के लिये भी एक मरकज़ी हैसियत रखता है। चुनाँचे وَمَنْ حَوْلَهَا के दायरे में पूरी दुनिया शामिल समझी जायेगी।

وَالَّذِيْنَ يُؤْمِنُوْنَ بِالْاٰخِرَةِ يُؤْمِنُوْنَ بِهٖ

"और वह लोग जो आख़िरत पर ईमान रखते हैं इस (क़ुरान) पर भी ईमान ले आयेंगे"

यानि क़ुरान के मुख़ातिब लोगों में से कुछ तो मुशरिक हैं और कुछ वह हैं जो बाअसे बाद अल् मौत के सिरे से ही मुन्कर हैं, लेकिन जिन लोगों के दिलों में मरने के बाद दोबारा जी उठने और अल्लाह के सामने जवाबदेह होने का ज़रा सा भी तसव्वुर मौजूद है वह ज़रूर इस पर ईमान ले आएँगे। यह इशारा सालेहीने अहले किताब की तरफ़ है।

وَهُمْ عَلٰى صَلَاتِهِمْ يُحَافِظُوْنَ ۝

"और वही अपनी नमाज़ों की हिफ़ाज़त करते हैं।"

आयत 93

وَمَنْ اَظْلَمُ مِمَّنِ افْتَرٰى عَلَى اللّٰهِ كَذِبًا اَوْ قَالَ اُوْحِيَ اِلَيَّ وَلَمْ يُوْحَ اِلَيْهِ شَيْءٌ

"और उससे बढ़ कर ज़ालिम कौन होगा जिसने कोई बात गढ़ कर अल्लाह से मंसूब कर दी या (उस शख्स से बढ़ कर ज़ालिम कौन होगा) जो यह कहे कि मुझ पर वही की गयी है जबकि उस पर कुछ भी वही ना की गयी हो"

कोई बात ख़ुद गढ़ कर अल्लाह की तरफ़ मंसूब कर देना या यह कहना कि मुझ पर कोई शय वही की गयी है यह दोनों शनाअत के ऐतबार से बराबर के गुनाह हैं। तो ऐ अहले मक्का! ज़रा गौर तो करो कि मुहम्मद ﷺ जिन्होंने तुम्हारे दरमियान एक उम्र बसर की है क्या आप ﷺ की सीरत व किरदार, आप ﷺ की ज़िन्दगी में तुम कोई ऐसा पहलु देखते हो कि आप ﷺ इतने बड़े-बड़े गुनाहों के मुरतकिब भी हो सकते हैं? और इन दो बातों के साथ एक तीसरी बात:

وَمَنْ قَالَ سَاُنْزِلُ مِثْلَ مَآ اَنْزَلَ اللّٰهُ

"और जो कहे कि मैं भी उतार सकता हूँ जैसा कलाम अल्लाह ने उतारा है।"

वह लोग अगरचे अच्छी तरह समझते थे कि इस कलाम की नज़ीर पेश करना किसी इन्सान के बस की बात नहीं, फिर भी ज़बान से अल्फ़ाज़ कह देने की हद तक किसी ने ऐसा कह दिया होगा। हक़ीक़त यह है कि क़ुरान ने ज़बान दानी का दावा करने वाले माहिरीन, शौअरा और उ'दबाअ समेत उस मआशरे के तमाम लोगों को एक बार नहीं, बार-बार यह चैलेंज किया कि तुम सब सर जोड़ कर बैठ जाओ और इस जैसा कलाम बना कर दिखाओ, लेकिन किसी में भी इस चैलेंज का जवाब देने की हिम्मत ना हो सकी।

وَلَوْ تَرٰٓى اِذِ الظّٰلِمُوْنَ فِيْ غَمَرٰتِ الْمَوْتِ وَالْمَلٰٓئِكَةُ بَاسِطُوْٓا اَيْدِيْهِمْ ۚ اَخْرِجُوْٓا اَنْفُسَكُمْ ۭ

"और काश तुम देख सकते जबकि यह ज़ालिम मौत की सख्तियों में होंगे और फ़रिश्ते अपने हाथ आगे बढ़ा रहे होंगे (और कह रहे होंगे) कि निकालो अपनी जानें।"

اَلْيَوْمَ تُجْزَوْنَ عَذَابَ الْهُوْنِ بِمَا كُنْتُمْ تَقُوْلُوْنَ عَلَي اللّٰهِ غَيْرَ الْحَقِّ وَكُنْتُمْ عَنْ اٰيٰتِهٖ تَسْتَكْبِرُوْنَ۝

"आज तुम्हें ज़िल्लत का अज़ाब दिया जायेगा बसबब उसके जो तुम कहते रहे थे अल्लाह की तरफ़ मंसूब करके नाहक़ बातें और जो तुम अल्लाह की आयात से मुतकब्बिराना ऐराज़ करते रहे थे।"

आयत 94

وَلَقَدْ جِئْتُمُوْنَا فُرَادٰى كَمَا خَلَقْنٰكُمْ اَوَّلَ مَرَّةٍ

"(फिर उनसे कहा जायेगा) और अब आ गये हो ना! हमारे पास अकेले-अकेले, जैसा कि हमने तुम्हें पैदा किया था पहली मर्तबा"

यानि आज अपने तमाम लाव लश्कर, माल व मताअ और खदम व हशम सब कुछ पीछे छोड़ आये हो, आज कोई भी, कुछ भी तुम्हारी मदद के लिये तुम्हारे साथ नहीं। यही बात सूरह मरयम (आयत 95) में इस तरह कही गयी है: {وَكُلُّهُمْ اٰتِيْهِ يَوْمَ الْقِيٰمَةِ فَرْدًا} कि क़यामत के दिन हर शख्स का मुहास्बा इन्फ़रादी हैसियत में होगा। और ज़ाहिर है उसके लिये हर कोई अकेला खड़ा होगा, ना किसी के रिश्तेदार साथ होंगे, ना माँ-बाप, ना औलाद, ना बीवी, ना बीवी के साथ उसका शौहर, ना साज़ो-सामान ना खदम व हशम!

यहाँ एक और अहम बात नोट कीजिये कि خَلَقْنٰكُمْ اَوَّلَ مَرَّةٍ का मतलब है कि इन्सान की तख्लीक़ दो मर्तबा हुई है। एक तख्लीक़ आलमे अरवाह में हुई थी, वहाँ भी सब अकेले-अकेले थे, ना किसी का बाप साथ था ना किसी की माँ। तब अरवाह के माबैन कोई रिश्तेदारी भी नहीं थी। यह रिश्तेदारियाँ तो बाद में आलमे ख़ल्क़ में आकर हुई हैं। आयत ज़ेरे नज़र में आलमे अरवाह की इसी तख्लीक़ की तरफ़ इशारा है। आलमे अरवाह के उस इज्तमाअ में बनी नौए इन्सान के हर फ़र्द ने वह अहद किया था जिसे "अहदे अलस्त" कहा जाता है। जब परवरदिगार-ए-आलम ने औलादे आदम की अरवाह से सवाल किया: {اَلَسْتُ بِرَبِّكُمْ} "क्या मैं तुम्हारा रब नहीं हूँ?" तो सबने जवाब दिया" {بَلٰي} (अल् आराफ़:172) "क्यों नहीं!" आलमे अरवाह के इज्तमाअ और रोज़े महशर के इज्तमाअ में एक लिहाज़ से फ़र्क़ है और एक लिहाज़ से मुशाबेहत। फ़र्क़ यह है कि पहले इज्तमाअ में मुजर्रद अरवाह की की शुमूलियत हुई थी, उस वक़्त तक इंसानों को जिस्म अता नहीं हुए थे, जबकि रोज़े महशर के इज्तमाअ में यह दुनियावी अज्साम भी साथ होंगे। इन इज्तमाआत में मुशाबेहत यह है कि पहले इज्तमाअ में भी हज़रत आदम अलै. से लेकर उनकी नस्ल के आखरी इन्सान तक सबकी अरवाह मौजूद थीं और क़यामत के दिन भी यह सबके सब इन्सान अपने परवरदिगार के हुज़ूर खड़े होंगे।

وَّتَرَكْتُمْ مَّا خَوَّلْنٰكُمْ وَرَاۗءَ ظُهُوْرِكُمْ ۚ

"और तुम छोड़ आये हो अपने पीछे वह सब कुछ जिसमें हमने तुम्हें लपेट दिया था।"

वह कौनसी चीज़ें हैं जिनमें यहाँ हमें लपेट दिया गया है, इस पर गौर की ज़रूरत है। असल चीज़ तो इन्सान की रूह है। इस रूह के लिये पहला गिलाफ़ यह जिस्म है, फिर इस गिलाफ़ के ऊपर कपड़ों का गिलाफ़ है, कपड़ों के ऊपर फिर मकान का गिलाफ़ और फिर दीगर अश्याये ज़रूरत। इस तरह रूह के लिये जिस्म और जिस्म की ज़रुरियात के लिये तमाम माद्दी अश्या यानि इस दुनिया का साज़ो-सामान सब कुछ इसमें शामिल

है। हमारी रूह दरहक़ीक़त इन माद्दी गिलाफ़ों में लिपटी हुई है। क़यामत के दिन इरशाद होगा कि आज तुम हमारे पास अकेले हाज़िर हुए हो और दुनिया की तमाम चीज़ें अपने पीछे छोड़ आये हो।

وَمَا نَرٰى مَعَكُمْ شُفَعَآءَكُمُ الَّذِيْنَ زَعَمْتُمْ اَنَّهُمْ فِيْكُمْ شُرَكٰٓؤُا

"और हम नहीं देख रहे तुम्हारे साथ तुम्हारे वह सिफ़ारशी भी जिनके बारे में तुम्हें ज़अम था कि वह तुम्हारे मामले में शरीक हैं।"

उन मुजरिम लोगों को जिन-जिन के बारे में भी ज़अम (आरोप) था कि वह इनके लिये क़यामत के दिन शफ़ाअत करेंगे वह सब वहाँ उनसे ऐलाने बराअत कर देंगे। लात, मनात, उज्ज़ा और दूसरे मअबूदाने बातिल तो किसी शुमार व क़तार ही में नहीं होंगे, इस सिलसिले में अम्बिया किराम अलै., मलाइका और औलिया अल्लाह से लगायी गयी इनकी उम्मीदें भी उस रोज़ बर नहीं आयेंगी।

لَقَدْ تَّقَطَّعَ بَيْنَكُمْ

"अब तुम्हारे माबैन सारे रिश्ते टूट चुके"

وَضَلَّ عَنْكُمْ مَّا كُنْتُمْ تَزْعُمُوْنَ ﴿٩٤﴾

"और वह सब चीज़ें तुमसे गम हो गयीं जिनका तुम ज़अम किया करते थे।"

आज उन हस्तियों में से कोई तुम्हारे साथ नज़र नहीं आ रहा जिनकी सिफ़ारिश की उम्मीद के सहारे पर तुम हराम खोरियाँ किया करते थे।

आयात 95 से 100 तक

اِنَّ اللّٰهَ فَالِقُ الْحَبِّ وَالنَّوٰى ؕ يُخْرِجُ الْحَيَّ مِنَ الْمَيِّتِ وَمُخْرِجُ الْمَيِّتِ مِنَ الْحَيِّ ؕ ذٰلِكُمُ اللّٰهُ فَاَنّٰى تُؤْفَكُوْنَ ﴿٩٥﴾ فَالِقُ الْاِصْبَاحِ ۚ وَجَعَلَ الَّيْلَ سَكَنًا وَّالشَّمْسَ وَالْقَمَرَ حُسْبَانًا ؕ ذٰلِكَ تَقْدِيْرُ الْعَزِيْزِ الْعَلِيْمِ ﴿٩٦﴾ وَهُوَ الَّذِيْ جَعَلَ لَكُمُ النُّجُوْمَ لِتَهْتَدُوْا بِهَا فِيْ ظُلُمٰتِ الْبَرِّ وَالْبَحْرِ ؕ قَدْ فَصَّلْنَا الْاٰيٰتِ لِقَوْمٍ يَّعْلَمُوْنَ ﴿٩٧﴾ وَهُوَ الَّذِيْٓ اَنْشَاَكُمْ مِّنْ نَّفْسٍ وَّاحِدَةٍ فَمُسْتَقَرٌّ وَّمُسْتَوْدَعٌ ؕ قَدْ فَصَّلْنَا الْاٰيٰتِ لِقَوْمٍ يَّفْقَهُوْنَ ﴿٩٨﴾ وَهُوَ الَّذِيْٓ اَنْزَلَ مِنَ السَّمَآءِ مَآءً ۚ فَاَخْرَجْنَا بِهٖ نَبَاتَ كُلِّ شَيْءٍ فَاَخْرَجْنَا مِنْهُ خَضِرًا نُّخْرِجُ مِنْهُ حَبًّا مُّتَرَاكِبًا ۚ وَمِنَ النَّخْلِ مِنْ طَلْعِهَا قِنْوَانٌ دَانِيَةٌ وَّجَنّٰتٍ مِّنْ اَعْنَابٍ وَّالزَّيْتُوْنَ وَالرُّمَّانَ مُشْتَبِهًا وَّغَيْرَ مُتَشَابِهٍ ؕ اُنْظُرُوْٓا اِلٰى ثَمَرِهٖٓ اِذَآ اَثْمَرَ وَيَنْعِهٖ ؕ اِنَّ فِيْ ذٰلِكُمْ لَاٰيٰتٍ لِّقَوْمٍ يُّؤْمِنُوْنَ ﴿٩٩﴾ وَجَعَلُوْا لِلّٰهِ شُرَكَآءَ الْجِنَّ وَخَلَقَهُمْ وَخَرَقُوْا لَهٗ بَنِيْنَ وَبَنٰتٍۢ بِغَيْرِ عِلْمٍ ؕ سُبْحٰنَهٗ وَتَعٰلٰى عَمَّا يَصِفُوْنَ ﴿١٠٠﴾

आयत 95

اِنَّ اللّٰهَ فَالِقُ الْحَبِّ وَالنَّوٰى ؕ

"यक़ीनन अल्लाह ही दाने और गुठली को फाड़ने वाला है।"

आलमे ख़ल्क़ के अन्दर जो उमूर और मामलात मामूल के मुताबिक़ वक़ूअ पज़ीर (घटित) हो रहे हैं, यहाँ उनकी हक़ीक़त बयान की गयी है। मसलन आम की गुठली ज़मीन में दबायी गयी, कुछ देर के बाद वह गुठली फटी और उसमें से दो पत्ते निकले। इसी तरह पूरी कायनात का निज़ाम चल रहा है। बज़ाहिर यह सब कुछ ख़ुद-ब-ख़ुद होता नज़र आ रहा है, मगर हक़ीक़त में यह सब कुछ उन फ़ितरी क़वानीन के तहत हो रहा है जो अल्लाह ने इस दुनिया में फ़िज़िकल और केमिकल तब्दीलियों के लिये वज़अ (नियमबद्ध) कर दिये हैं। इसलिये इस कायनात में वक़ूअ पज़ीर (घटित) होने वाले हर छोटे-बड़े मामले का फ़ाइल हक़ीक़ी अल्लाह तआला है। यही वह हक़ीक़त है जिसका ज़िक्र शेख़ अब्दुल क़ादिर जिलानी रहि. ने अपने वसाया में किया

है। वह अपने बेटे को वसीयत करते हुए फ़रमाते हैं कि ऐ मेरे बच्चे इस हक़ीक़त को हर वक़्त मुस्तहज़र (ध्यान में) रखना कि " لَا فاعلَ فی الحقیقۃ ولا مؤثِّر اِلَّا اللہ" यानि हक़ीक़त में फ़ाइल और मौस्सर अल्लाह के सिवा कोई नहीं। अश्या (चीज़ों) में जो तासीर है वह उसी की अता करदा है, उसी के इज़्न से है। तुम किसी फ़अल का इरादा तो कर सकते हो लेकिन फ़अल का बिलफ़अल अंजाम पज़ीर होना तुम्हारे इख़्तियार में नहीं है, क्योंकि हर फ़अल अल्लाह के हुक्म से अंजाम पज़ीर होता है।

يُخْرِجُ الْحَيَّ مِنَ الْمَيِّتِ وَمُخْرِجُ الْمَيِّتِ مِنَ الْحَيِّ ذٰلِكُمُ اللّٰهُ فَاَنّٰى تُؤْفَكُوْنَ ﴿٩٥﴾

"वह निकालता है ज़िन्दा को मुर्दा में से और वही निकालने वाला है मुर्दा को ज़िन्दा में से, यही तो है अल्लाह (इसको पहचानो) लेकिन तुम किधर उल्टे जा रहे हो।"

आयत 96

فَالِقُ الْاِصْبَاحِ ۚ

"वही है सुबह को फाड़ने वाला।"

यह "फ़लक़" की दूसरी क़िस्म है कि अल्लाह ही रात की स्याही का पर्दा चाक करके सफ़ेदा सहर को नमूदार करता है। बज़ाहिर यह भी ख़ुद-ब-ख़ुद ज़मीन की गर्दिश के तहत होता नज़र आता है, लेकिन यह ना समझें कि अल्लाह के तसर्रुफ़ और उसकी तदबीर के बगैर हो रहा है। यह सब भी उन ही क़वानीन के तहत हो रहा है जो अल्लाह तआला ने ज़मीन, चाँद, सूरज और दूसरे अजरामे फ़लकी के बारे में बना दिये हैं। इस सब कुछ का फ़ाइल हक़ीक़ी भी वही है।

وَجَعَلَ الَّيْلَ سَكَنًا وَّالشَّمْسَ وَالْقَمَرَ حُسْبَانًا ۭ

"उसने बना दिया रात को सुकून का वक़्त और सूरज और चाँद को हिसाब के लिये।"

यह التذکیر بآلاء اللہ की मिसालें हैं, जिनके हवाले से अल्लाह की अज़मत उसकी सिफ़ात और उसकी क़ुदरत को नुमाया किया जा रहा है। यह एक लगा बंधा निज़ाम है जिसके तहत सूरज और चाँद चल रहे हैं। इसी निज़ाम से दिन और रात बनते हैं और इसी से महीने और साल वजूद में आ रहे हैं।

ذٰلِكَ تَقْدِيْرُ الْعَزِيْزِ الْعَلِيْمِ ﴿٩٦﴾

"यह अंदाज़ा मुक़र्रर किया हुआ है उस हस्ती का जो ज़बरदस्त है और सब कुछ जानने वाला है।"

आयत 97

وَهُوَ الَّذِيْ جَعَلَ لَكُمُ النُّجُوْمَ لِتَهْتَدُوْا بِهَا فِيْ ظُلُمٰتِ الْبَرِّ وَالْبَحْرِ ۭ

"और वही है जिसने तुम्हारे लिये सितारे बनाये ताकि तुम उनसे ख़ुश्की और समुन्दर की तारीकियों में रास्ता पाओ।"

अँधेरी रातों में क़ाफ़िले चलते थे तो वह सितारों से सिम्त मुतअय्यन करके चलते थे। इसी तरह समुन्दर में जहाज़रानी के लिये भी सितारों की मदद से ही रुख मुतअय्यन किया जाता था।

قَدْ فَصَّلْنَا الْاٰيٰتِ لِقَوْمٍ يَّعْلَمُوْنَ ﴿٩٧﴾

"हमने तो अपनी निशानियाँ तफ़सील से बयान कर दी हैं उन लोगों के लिये जो इल्म रखते हैं।"

आयत 98

وَهُوَ الَّذِیۡۤ اَنۡشَاَکُمۡ مِّنۡ نَّفۡسٍ وَّاحِدَۃٍ

"और वही है जिसने तुम्हें उठाया एक जान से"

ज़ाहिर है कि तमाम नौए इंसानी एक ही जान से वजूद में आयी है। इससे हज़रत आदम अलै. भी मुराद हो सकते हैं और अगर नज़रिया-ए-इरतक़ा में कोई हक़ीक़त तस्लीम कर ली जाये तो फिर तहक़ीक़ का यह सफ़र अमीबा (Amoeba) तक चला जाता है कि उस एक जान से मुख्तलिफ़ इरतक़ाई मराहिल तय करते हुए इन्सान बना। अमीबा में कोई sex यानि तज़कीर व तानीस का मामला नहीं था। दौराने इरतक़ा रफ़्ता-रफ़्ता sex ज़ाहिर हुआ तो {خَلَقَ مِنۡهَا زَوۡجَهَا} (अन्निसा:1) वाला मरहला आया। इस सिलसिले में डॉक्टर रफ़ीउद्दीन मरहूम ने अपनी किताब "क़ुरान और इल्मे जदीद" में बहुत उम्दा तहक़ीक़ की है और मौलाना अमीन अहसन इस्लाही साहब ने भी उसकी तस्वीब (प्रशंसा) की है। जिन हज़रात को दिलचस्पी हो कि एक जान से तमाम बनी नौए इन्सान को पैदा करने का क्या मतलब है, वह इस किताब का मुताअला ज़रूर करें।

فَمُسۡتَقَرٌّ وَّمُسۡتَوۡدَعٌ

"फिर तुम्हारे लिये एक तो मुस्तक़िल ठिकाना है और एक कुछ देर (अमानतन) रखे जाने की जगह।"

"मुस्तक़र्र" और "मुस्तवद" के बारे में मुफ़स्सिरीन के तीन अक़वाल हैं:

पहला क़ौल यह है कि "मुस्तक़र्र" यह दुनिया है जहाँ हम रह रहे हैं और "मुस्तवद" से मुराद रहमे मादर है। दूसरी राय यह है कि "मुस्तक़र्र" आख़िरत है और "मुस्तवद" क़ब्र है। क़ब्र में इन्सान को आरज़ी तौर पर अमानतन रखा जाता है। यह आलमे बरज़ख़ है और यहाँ से इन्सान ने बिलआख़िर अपने "मुस्तक़र्र" (आख़िरत) की तरफ़ जाना है। तीसरी राय यह है कि "मुस्तक़र्र" आख़िरत है और "मुस्तवद" दुनिया है। दुनिया में जो वक़्त हम गुज़ार रहे हैं यह आख़िरत के मुक़ाबले में बहुत ही आरज़ी है।

قَدۡ فَصَّلۡنَا الۡاٰیٰتِ لِقَوۡمٍ یَّفۡقَهُوۡنَ ﴿۹۸﴾

"हमने तो अपनी आयात को वाज़ेह कर दिया है उन लोगों के लिये जो समझ बूझ से काम लें।"

आयत 99

وَهُوَ الَّذِیۡۤ اَنۡزَلَ مِنَ السَّمَآءِ مَآءً

"और वही है जिसने उतारा आसमान (या बुलन्दी) से पानी।"

فَاَخۡرَجۡنَا بِهٖ نَبَاتَ کُلِّ شَیۡءٍ فَاَخۡرَجۡنَا مِنۡهُ خَضِرًا نُّخۡرِجُ مِنۡهُ حَبًّا مُّتَرَاکِبًا

"फिर हमने निकाली उसके ज़रिये से हर क़िस्म की नबातात, फिर हमने उगाये उससे सरसब्ज़ खेत, जिनमें से हम निकालते हैं दाने तह-बा-तह एक-दूसरे के ऊपर चढ़े हुए।"

किसी भी फ़सल या अनाज का सिट्टा देखें तो उसके दाने निहायत ख़ूबसूरती और सलीक़े से बाहम जुड़े हुए और एक-दूसरे के ऊपर चढ़े हुए नज़र आते हैं।

وَمِنَ النَّخۡلِ مِنۡ طَلۡعِهَا قِنۡوَانٌ دَانِیَةٌ وَّجَنّٰتٍ مِّنۡ اَعۡنَابٍ وَّالزَّیۡتُوۡنَ وَالرُّمَّانَ مُشۡتَبِهًا وَّغَیۡرَ مُتَشَابِهٍ

"और ख़जूर के गाभे में से लटकते हुए खोशे, और (हमने बना दिये) बाग़ात अंगूरों के और ज़ैतून और अनार के जो (रंग, शक्ल और ज़ायक़े के ऐतबार से) आपस में मुशाबेह भी हैं और मुख्तलिफ़ भी।"

اُنْظُرُوْٓا اِلٰى ثَمَرِهٖٓ اِذَآ اَثْمَرَ وَيَنْعِهٖ

"देखो इसके फ़ल को जब वह फ़ल लाता है और देखो इसके पकने को जब वह पकता है।"

यानि मुख्तलिफ़ दरख्तों के फ़ल लाने और फिर फ़ल के पकने के अमल को ज़रा गौर से देखा करो। यहाँ पर وَيَنْعِهٖ के बाद "اِذَا اَيْنَعَ" (जब वह पक जाये) महज़ूफ़ माना जायेगा। यानि इसके पकने को देखो कि किस तरह तदरीजन पकता है। पहले फ़ल आता है, फिर तदरीजन उसके अन्दर तब्दीलियाँ आती हैं, जसामत में बढ़ता है, फिर कच्ची हालत से आहिस्ता-आहिस्ता पकना शुरू होता है।

فِيْ ذٰلِكُمْ لَاٰيٰتٍ لِّقَوْمٍ يُّؤْمِنُوْنَ ۝٩٩

"यक़ीनन इसमें निशानियाँ हैं उन लोगों के लिये जो ईमान रखते हैं।"

ऐसी निशानियों पर गौर करने से कमज़ोर ईमान वालों का ईमान बढ़ जायेगा, दिल के यक़ीन में इज़ाफ़ा हो जायेगा (زَادَتْهُمْ اِيْمَانًا) और जिनके दिलों में तलबे हिदायत है उन्हें ऐसे मुशाहिदे से ईमान की दौलत नसीब होगी।

आयत 100

وَجَعَلُوْا لِلّٰهِ شُرَكَآءَ الْجِنَّ وَخَلَقَهُمْ

"और इन्होंने अल्लाह का शरीक ठहरा लिया जिन्नात को, हालाँकि उसी ने उन्हें पैदा किया है"

अल्लाह तआला ने जैसे इंसानों को पैदा किया है इसी तरह उसने जिन्नात को भी पैदा किया है। फ़र्क़ सिर्फ़ यह है कि जिन्नात को आग से पैदा किया गया है और वह अपनी ख़ुदादाद तबई सलाहियतों की वजह से कायनात में वसीअ पैमाने पर रसाई रखते हैं। आज इन्सान ने अरबों डॉलर खर्च करके खलाओं के जिस सफ़र को मुमकिन बनाया है, एक आम जिन के लिये ऐसा सफ़र मामूल की कार्यवाही हो सकती है, मगर इन सारे कमालात के बावजूद यह जिन हैं तो अल्लाह ही की मख्लूक़। इसी तरह फ़रिश्ते अपनी तख्लीक़ और सलाहियतों के लिहाज़ से जिन्नात से भी बढ़ कर हैं, मगर पैदा तो उन्हें भी अल्लाह ही ने किया है। लिहाज़ा इन्सान, जिन्नात और फ़रिश्ते सब अल्लाह की मख्लूक़ हैं और इनमें से किसी का भी अलुहियत में ज़र्रा बराबर हिस्सा नहीं।

وَخَرَقُوْا لَهٗ بَنِيْنَ وَبَنٰتٍۢ بِغَيْرِ عِلْمٍ

"और उसके लिये इन्होंने गढ़ लिये हैं बेटे और बेटियाँ बगैर किसी इल्मी सनद के।"

हज़रत ईसा और हज़रत उज़ैर अलै. को अल्लाह के बेटे क़रार दिया गया, जबकि फ़रिश्तों के बारे में कह दिया गया कि वह अल्लाह की बेटियाँ हैं।

سُبْحٰنَهٗ وَتَعٰلٰى عَمَّا يَصِفُوْنَ ۝١٠٠

"वह बहुत पाक है और बहुत बुलन्द व बाला है उन तमाम चीज़ों से जो यह बयान कर रहे हैं।"

आयात 101 से 110 तक

بَدِيْعُ السَّمٰوٰتِ وَالْاَرْضِ ۭ اَنّٰى يَكُوْنُ لَهٗ وَلَدٌ وَّلَمْ تَكُنْ لَّهٗ صَاحِبَةٌ ۭ وَخَلَقَ كُلَّ
شَيْءٍ ۚ وَهُوَ بِكُلِّ شَيْءٍ عَلِيْمٌ ۝١٠١ ذٰلِكُمُ اللّٰهُ رَبُّكُمْ ۚ لَآ اِلٰهَ اِلَّا هُوَ ۚ خَالِقُ كُلِّ شَيْءٍ
فَاعْبُدُوْهُ ۚ وَهُوَ عَلٰي كُلِّ شَيْءٍ وَّكِيْلٌ ۝١٠٢ لَا تُدْرِكُهُ الْاَبْصَارُ ۡ وَهُوَ يُدْرِكُ
الْاَبْصَارَ ۚ وَهُوَ اللَّطِيْفُ الْخَبِيْرُ ۝١٠٣ قَدْ جَاۗءَكُمْ بَصَاۗىِٕرُ مِنْ رَّبِّكُمْ ۚ فَمَنْ اَبْصَرَ
فَلِنَفْسِهٖ ۚ وَمَنْ عَمِيَ فَعَلَيْهَا ۭ وَمَآ اَنَا عَلَيْكُمْ بِحَفِيْظٍ ۝١٠٤ وَكَذٰلِكَ نُصَرِّفُ الْاٰيٰتِ
وَلِيَقُوْلُوْا دَرَسْتَ وَلِنُبَيِّنَهٗ لِقَوْمٍ يَّعْلَمُوْنَ ۝١٠٥ اِتَّبِعْ مَآ اُوْحِيَ اِلَيْكَ مِنْ رَّبِّكَ ۚ لَآ
اِلٰهَ اِلَّا هُوَ ۚ وَاَعْرِضْ عَنِ الْمُشْرِكِيْنَ ۝١٠٦ وَلَوْ شَاۗءَ اللّٰهُ مَآ اَشْرَكُوْا ۭ وَمَا جَعَلْنٰكَ

عَلَيْهِمْ حَفِيْظًا ؕ وَمَآ اَنْتَ عَلَيْهِمْ بِوَكِيْلٍ ﴿۱۰۷﴾ وَلَا تَسُبُّوا الَّذِيْنَ يَدْعُوْنَ مِنْ دُوْنِ
اللّٰهِ فَيَسُبُّوا اللّٰهَ عَدْوًۢا بِغَيْرِ عِلْمٍ ؕ كَذٰلِكَ زَيَّنَّا لِكُلِّ اُمَّةٍ عَمَلَهُمْ ۪ ثُمَّ اِلٰى رَبِّهِمْ
مَّرْجِعُهُمْ فَيُنَبِّئُهُمْ بِمَا كَانُوْا يَعْمَلُوْنَ ﴿۱۰۸﴾ وَاَقْسَمُوْا بِاللّٰهِ جَهْدَ اَيْمَانِهِمْ لَئِنْ
جَآءَتْهُمْ اٰيَةٌ لَّيُؤْمِنُنَّ بِهَا ؕ قُلْ اِنَّمَا الْاٰيٰتُ عِنْدَ اللّٰهِ وَمَا يُشْعِرُكُمْ ۙ اَنَّهَآ اِذَا
جَآءَتْ لَا يُؤْمِنُوْنَ ﴿۱۰۹﴾ وَنُقَلِّبُ اَفْـِٕدَتَهُمْ وَاَبْصَارَهُمْ كَمَا لَمْ يُؤْمِنُوْا بِهٖۤ اَوَّلَ
مَرَّةٍ وَّنَذَرُهُمْ فِىْ طُغْيَانِهِمْ يَعْمَهُوْنَ ﴿۱۱۰﴾

आयत 101

بَدِيْعُ السَّمٰوٰتِ وَالْاَرْضِ ؕ

"वह अदम से वजूद में लाने वाला है आसमानों और ज़मीन को।"

यह लफ्ज़ (बदीअ) सूरतुल बक़रह की आयत 117 में भी आ चुका है। यह अल्लाह तआला का सिफ़ाती नाम है और इसके मायने हैं अदम महज़ से किसी चीज़ की तख्लीक़ करने वाला।

اَنّٰى يَكُوْنُ لَهٗ وَلَدٌ وَّلَمْ تَكُنْ لَّهٗ صَاحِبَةٌ ؕ
وَخَلَقَ كُلَّ شَىْءٍ ۚ وَهُوَ بِكُلِّ شَىْءٍ عَلِيْمٌ ﴿۱۰۱﴾

"उसके औलाद कैसे हो सकती है जबकि उसकी कोई बीवी नहीं, और उसने तो हर शय को पैदा किया है, और वह हर चीज़ का इल्म रखता है।"

अल्लाह तआला की औलाद बताने वाले यह भी नहीं सोचते कि जब उसकी कोई शरीके हयात ही नहीं है तो औलाद कैसे होगी? दरअसल कायनात और उसके अन्दर हर चीज़ का ताल्लुक़ अल्लाह के साथ सिर्फ़ यह है कि वह एक खालिक़ है और बाक़ी सब मख्लूक़ हैं। और वह ऐसी अलीम और खबीर हस्ती है कि उसकी मख्लूक़ात में से कोई शय उसकी निगाहों से एक लम्हे के लिये भी ओझल नहीं हो पाती।

आयत 102

ذٰلِكُمُ اللّٰهُ رَبُّكُمْ ۚ

"वह है अल्लाह तुम्हारा रब"

यह अन्दाज़े ख़िताब समझने की ज़रूरत है। मुशरिकीने मक्का और अहले अरब अल्लाह के मुन्किर नहीं थे। वह अल्लाह को मानते तो थे लेकिन अल्लाह की सिफ़ात, उसकी क़ुदरत, उसकी अज़मत के बारे में उनका ज़हन कुछ महदूद था। इसलिये यहाँ यह अंदाज़ इख़्तियार किया गया है कि देखो जिस अल्लाह को तुम मानते हो वही तो तुम्हारा रब और परवरदिगार है। वह अल्लाह बहुत बुलन्द शान वाला है। तुमने उसकी असल हक़ीक़त को नहीं पहचाना। तुमने उसको कोई ऐसी शख्सियत समझ लिया है जिसके ऊपर कोई दबाव डाल कर भी अपनी बात मनवाई जा सकती है। तुम फ़रिश्तों को उसकी बेटियाँ समझते हो। तुम्हारे ख्याल में यह जिसकी सिफ़ारिश करेंगे उसको बख्श दिया जायेगा। इस तरह तुमने अल्लाह को भी अपने ऊपर ही क़यास कर लिया है कि जिस तरह तुम अपनी बेटी की बात रद्द नहीं करते, इसी तरह तुम समझते हो कि अल्लाह भी फ़रिश्तों की बात नहीं टालेगा। अल्लाह तआला की हक़ीक़ी क़ुदरत, उसकी अज़मत, उसका वरा उल वरा होना, उसका बिकुल्ली शयइन अलीम होना, उसका अला कुल्ली शयइन क़दीर होना, उसका हर जगह पर हर वक़्त मौजूद होना, उसकी ऐसी सिफ़ात हैं जिनका तसव्वुर तुम लोग नहीं कर पा रहे हो। लिहाज़ा अगर तुम समझना चाहो तो समझ लो: {ذٰلِكُمُ اللّٰهُ رَبُّكُمْ ۚ} वह है अल्लाह तुम्हारा रब जिसकी यह शान और क़ुदरत बयान हो रही है।

لَاۤ اِلٰهَ اِلَّا هُوَ ۚ خَالِقُ كُلِّ شَىْءٍ فَاعْبُدُوْهُ ۚ
وَهُوَ عَلٰى كُلِّ شَىْءٍ وَّكِيْلٌ ﴿۱۰۲﴾

"उसके सिवा कोई मअबूद नहीं है, वह हर शय का पैदा करने वाला है, पस तुम उसी की बन्दगी करो, और वह हर शय का कारसाज़ है।"

उसके सिवा कोई तुम्हारे लिये कारसाज़ नहीं। ख़ुद उसका हुक्म है (बनी इसराइल 2): {اَلَّا تَتَّخِذُوْا مِنْ دُوْنِيْ وَكِيْلًا} कि मेरे सिवा किसी और को अपना कारसाज़ ना समझा करो।

आयत 103

لَا تُدْرِكُهُ الْاَبْصَارُ وَهُوَ يُدْرِكُ الْاَبْصَارَ ۚ وَهُوَ اللَّطِيْفُ الْخَبِيْرُ ۝

"उसे निगाहें नहीं पा सकतीं जबकि वह तुम्हारी निगाहों को पा लेता है, और वह लतीफ़ भी है और हर चीज़ से बाख़बर भी।"

वह इस हद तक लतीफ़ है, इस क़दर लतीफ़ है कि इंसानी निगाहें उसका इदराक नहीं कर सकतीं। चुनाँचे इससे एक सवाल पैदा होता है कि शबे मेराज में क्या रसूल अल्लाह ﷺ ने अल्लाह को देखा या नहीं देखा? इसमें कुछ इख्तलाफ़ है। हज़रत अली रज़ि. की राय यह है कि हुज़ूर ﷺ ने अल्लाह को देखा था, लेकिन हज़रत उमर और हज़रत आयशा रज़ि. की राय है कि नहीं देखा था। इस ज़िमन में हज़रत आयशा रज़ि. का क़ौल है: نُورٌ اَنّٰى يُرٰى यानि वह तो नूर है उसे देखा कैसे जायेगा? चुनाँचे हज़रत मूसा अलै. ने जब कोहे तूर पर इस्तदआ की थी: {رَبِّ اَرِنِيْٓ اَنْظُرْ اِلَيْكَ} (अल् आराफ़:143) "परवरदिगार, मुझे यारा-ए-नज़र दे कि मैं तेरा दीदार करूँ!" तो साफ़ कह दिया गया था कि {لَنْ تَرٰىنِيْ} "तुम मुझे हरगिज़ नहीं देख सकते।" अल्लाह इतनी लतीफ़ हस्ती है कि उसका देखना हमारी निगाहों से मुमकिन नहीं। हाँ दिल की आँख से उसे देखा जा सकता है। मुहम्मद रसूल अल्लाह ﷺ दुनिया में बैठ कर भी दिल की आँख से उसे देख सकते थे।

आयत 104

قَدْ جَآءَكُمْ بَصَآىِٕرُ مِنْ رَّبِّكُمْ ۚ

"(देखो) तुम्हारे पास आ चुकी हैं बसीरत अफ़रोज़ बातें तुम्हारे रब की तरफ़ से।"

فَمَنْ اَبْصَرَ فَلِنَفْسِهٖ ۚ وَمَنْ عَمِيَ فَعَلَيْهَا ۭ

"तो अब जो कोई बीनाई से काम लेगा तो अपने ही भले के लिये, और जो कोई अँधा बन जायेगा तो उसका वबाल उसी पर होगा।"

अब जो इन बसाइर को आँखें खोल कर देखेगा, चश्मे बसीरत वा करेगा, हक़ाइक़ का मुवाजहा करेगा, हक़ीक़त को तस्लीम करेगा तो वह ख़ुद अपना ही भला करेगा और जो इनकी तरफ़ से जानबूझ कर आँखें बंद कर लेगा, किसी तास्सुब, हठधर्मी और ज़िद की वजह से हक़ीक़त को नहीं देखना चाहेगा तो उसका सारा वबाल उसी पर आयेगा।

وَمَآ اَنَا عَلَيْكُمْ بِحَفِيْظٍ ۝

"और मैं तुम्हारे ऊपर कोई निगरान नहीं हूँ।"

यह बात पैगम्बर ﷺ की तरफ़ से अदा हो रही है कि हर कोई अपने अच्छे-बुरे आमाल का ख़ुद ज़िम्मेदार है, मेरी ज़िम्मेदारी तुम तक अल्लाह का पैगाम पहुँचाना है, मैं तुम्हारी तरफ़ से जवाबदेह नहीं हूँ।

आयत 105

وَكَذٰلِكَ نُصَرِّفُ الْاٰيٰتِ وَلِيَقُوْلُوْا دَرَسْتَ

"और इसी तरह हम अपनी आयात को गर्दिश दिलाते हैं ताकि यह पुकार उठें कि (ऐ नबी ﷺ) आपने समझा दिया"

हम अपनी आयात बार-बार मुख्तलिफ़ तरीक़ों से बयान करते हैं, अपनी दलीलें मुख्तलिफ़ असालेब से पेश करते हैं ताकि इन पर हुज्जत क़ायम हो और यह तस्लीम करें कि आप ﷺ ने समझाने का हक़ अदा कर दिया है।

دَرَسَ, يَدْرُسُ के मायने हैं लिखना और लिखने के बाद मिटाना, फिर लिखना, फिर मिटाना। जैसे बच्चे शुरू में जब लिखना सीखते हैं तो मश्क़ के लिये बार-बार लिखते हैं। (इस मक़सद के लिये हमारे यहाँ तख़्ती इस्तेमाल होती थी जो अब मतरूक हो गयी है।) यहाँ तदरीजन बार-बार पढ़ाने के मायने में यह लफ्ज़ (دَرَسْتَ) इस्तेमाल हुआ है।

وَلِنُبَيِّنَهٗ لِقَوْمٍ يَّعْلَمُوْنَ ﴿۱۰۵﴾

"और ताकि हम वाज़ेह कर दें इसको हर तरह से उन लोगों के लिये जो इल्म रखते हैं (या जो इल्म हासिल करना चाहते हैं)।"

आयत 106

اِتَّبِعْ مَآ اُوْحِيَ اِلَيْكَ مِنْ رَّبِّكَ ۚ

"आप ﷺ पैरवी किये जायें उसकी जो वही किया जा रहा है आप ﷺ पर आप ﷺ के रब की तरफ़ से।"

इस सूरत में आप देख रहे हैं कि नबी अकरम ﷺ को बार-बार मुख़ातिब किया जा रहा है। लेकिन जैसा कि पहले बताया गया है यह ख़िताब दरअसल हुज़ूर ﷺ की वसातत से उम्मत के लिये भी है। मक्की सूरतों (दो तिहाई क़ुरान) में मुसलमानों से बराहे रास्त ख़िताब बहुत कम मिलता है। इसकी हिकमत यह है कि मक्की दौर में मुस्लमान बाक़ायदा एक उम्मत नहीं थे। उम्मत की तशकील तो तहवीले क़िब्ला के बाद हुई। इसी लिये तहवीले क़िब्ला के हुक्म के फ़ौरन बाद यह आयत नाज़िल हुई है (अल् बक़रह 143): {وَكَذٰلِكَ جَعَلْنٰكُمْ اُمَّةً وَّسَطًا لِّتَكُوْنُوْا شُهَدَآءَ عَلَي النَّاسِ وَيَكُوْنَ الرَّسُوْلُ عَلَيْكُمْ شَهِيْدًا ۭ} अब जबकि मुसलमानों को बाक़ायदा उम्मत का दर्जा दे दिया गया तो फिर उनसे ख़िताब भी बराहे रास्त होने लगा। चुनाँचे सूरतुल हुजरात जो 18 आयात पर मुश्तमिल मदनी सूरत है, उसमें पाँच दफ़ा {يٰٓاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا} के अल्फ़ाज़ से अहले ईमान को बराहे रास्त मुख़ातिब फ़रमाया गया है। लेकिन दूसरी तरफ़ मक्की सूरतों में अहले ईमान से जो भी कहा गया है वह हुज़ूर ﷺ को मुख़ातिब करके वाहिद के सीगे में कहा गया है। चुनाँचे आयत ज़ेरे नज़र में यह जो फ़रमाया गया है कि पैरवी करो उसकी जो आप ﷺ पर वही किया जा रहा है आप ﷺ के रब की तरफ़ से, तो यह हुक्म सिर्फ़ हुज़ूर ﷺ के लिये ही नहीं बल्कि तमाम मुसलमानों के लिये भी है।

لَآ اِلٰهَ اِلَّا هُوَ ۚ وَاَعْرِضْ عَنِ الْمُشْرِكِيْنَ ﴿۱۰۶﴾

"उसके सिवा कोई मअबूद नहीं, और इन मुशरिकों से किनारा कशी कर लीजिये।"

आयत 107

وَلَوْ شَاۗءَ اللّٰهُ مَآ اَشْرَكُوْا ۭ وَمَا جَعَلْنٰكَ عَلَيْهِمْ حَفِيْظًا ۚ

"और अगर अल्लाह चाहता तो यह शिर्क ना करते। और (ऐ नबी ﷺ) हमने आपको इन पर निगरान नहीं बनाया है।"

अगर अल्लाह को अपना जब्र ही नाफ़िज़ करना होता और बिलजब्र इन सब को ईमान पर लाना होता तो अल्लाह के लिये यह कुछ मुश्किल नहीं था। इस सिलसिले में आप ﷺ पर इनकी ज़िम्मेदारी डाली ही नहीं गयी। आप ﷺ को इन पर दरोगा या निगरान मुक़र्रर नहीं किया गया। आप ﷺ का काम है हक़ को वाज़ेह कर देना। आप ﷺ इस क़ुरान के ज़रिये इन्हें ख़बरदार करते रहिये, इसके ज़रिये इन्हें तज़कीर करते रहिये, इसके ज़रिये इन्हें खुशखबरियाँ देते रहिये। आप ﷺ की बस यह ज़िम्मेदारी है (अल् गाशिया): {لَسْتَ عَلَيْهِمْ بِمُصَيْطِرٍ ﴿۲۲﴾ فَذَكِّرْ ۣ اِنَّمَآ اَنْتَ مُذَكِّرٌ ﴿۲۱﴾} "पस आप ﷺ इन्हें याद दिहानी कराइये, इसलिये कि आप ﷺ तो याद दिहानी ही कराने वाले हैं। आप ﷺ इनके ऊपर निगरान नहीं हैं।

وَمَآ اَنْتَ عَلَيْهِمْ بِوَكِيْلٍ ﴿۱۰۷﴾

"और ना ही आप ﷺ इनके ज़ामिन हैं।"

आयत 108

وَلَا تَسُبُّوا الَّذِيْنَ يَدْعُوْنَ مِنْ دُوْنِ اللّٰهِ فَيَسُبُّوا اللّٰهَ عَدْوًۢا بِغَيْرِ عِلْمٍ ؕ

"और मत गालियाँ दो (या मत बुरा-भला कहो) उनको जिन्हें यह पुकारते हैं अल्लाह के सिवा, तो वह अल्लाह को गालियाँ देने लगेंगे ज़्यादती करते हुए बगैर सोचे-समझे।"

यानि कहीं जोश में आकर इनके बुतों को बुरा-भला मत कहो, क्योंकि वह उनको अपने मअबूद समझते हैं, इनके ज़हनों में उनकी अज़मत और दिलों में उनकी अक़ीदत है, इसलिये कहीं ऐसा ना हो कि वह गुस्से में आकर जवाबन अल्लाह को गालियाँ देने लग जायें। लिहाज़ा तुम कभी ऐसा इश्तेआल आमेज़ (भड़काऊ) अंदाज़ इख़्तियार ना करना। यहाँ एक दफ़ा फिर नोट कीजिये कि यह ख़िताब मुसलमानों से है, लेकिन इन्हें "يٰۤاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْۤا" से मुख़ातिब नहीं किया गया।

كَذٰلِكَ زَيَّنَّا لِكُلِّ اُمَّةٍ عَمَلَهُمْ ۪

"इसी तरह हमने हर क़ौम के लिये उसके अमल को मुज़य्यन कर दिया है"

जिस तरह हर कोई अपने अक़ीदे में खुश है इसी तरह यह मुशरिकीन भी अपने बुतों की अक़ीदत में मगन हैं। ज़ाहिर बात है वह उनको अपने मअबूद समझते हैं तो उनके बारे में उनके जज़्बात भी बहुत हस्सास हैं। इसलिये आप ﷺ उन्हें मुनासिब अंदाज़ से समझायें, इन्ज़ार, तब्शीर, तज़कीर और तब्लीग वगैरह सब तरीक़े आजमायें, लेकिन उनके मअबूदों को बुरा-भला ना कहें।

ثُمَّ اِلٰى رَبِّهِمْ مَّرْجِعُهُمْ فَيُنَبِّئُهُمْ بِمَا كَانُوْا يَعْمَلُوْنَ ۝١٠٨

"फिर अपने रब ही की तरफ़ उन सबको लौटना है तो वह उनको जितला देगा जो कुछ वह करते रहे थे।"

आयत 109

وَاَقْسَمُوْا بِاللّٰهِ جَهْدَ اَيْمَانِهِمْ لَئِنْ جَآءَتْهُمْ اٰيَةٌ لَّيُؤْمِنُنَّ بِهَا ؕ

"और वह अल्लाह की क़समें खा रहे हैं शद्दो-मद्द के साथ कि अगर उनके पास कोई निशानी आ जाये तो वह लाज़िमन ईमान ले आयेंगे।"

फिर उनके उसी मुतालबे का ज़िक्र आ गया कि किस तरह वह अल्लाह की क़समें खा-खा कर कहते थे कि अगर उन्हें मौज्ज़ा दिखा दिया जाये तो वह लाज़िमन ईमान ले आयेंगे। जैसा कि पहले भी बताया गया है कि यह मज़मून इस सूरह मुबारका का उमूद है। उनका यह मुतालबा था कि जब आप (ﷺ) नबुवत व रिसालत का दावा करते हैं तो फिर मौज्ज़ा क्यों नहीं दिखाते? इससे पहले तमाम अम्बिया मौज्ज़ात दिखाते रहे हैं। आप ख़ुद कहते हैं कि हज़रत मूसा अलै. ने अपनी क़ौम को मौज्ज़ात दिखाये, हज़रत ईसा अलै. ने भी मौज्ज़ात दिखाये, हज़रत सालेह अलै. ने अपनी क़ौम को मौज्ज़ा दिखाया, तो फिर आप मौज्ज़ा दिखा कर क्यों हमें मुत्मईन नहीं करते? उनके सरदार अपने अवाम को मुतास्सिर करने के लिये बड़ी-बड़ी क़समें खा कर कहते थे कि आप (ﷺ) दिखाइये तो सही एक दफ़ा मौज्ज़ा, उसे देखते ही हम लाज़िमन लाज़िमन ईमान ले आयेंगे।

قُلْ اِنَّمَا الْاٰيٰتُ عِنْدَ اللّٰهِ

"कह दीजिये कि निशानियाँ तो सब अल्लाह के इख़्तियार में हैं"

आप ﷺ इन्हें साफ़ तौर पर बतायें कि यह मेरे इख़्तियार में नहीं है। यह अल्लाह का फ़ैसला है कि वह इस तरह का कोई मौज्ज़ा नहीं दिखाना चाहता। उनकी इस तरह की बातों का चूँकि मुसलमानों पर भी असर पड़ने का इम्कान था इसलिये आगे फ़रमाया:

وَمَا يُشْعِرُكُمْ اَنَّهَآ اِذَا جَآءَتْ لَا يُؤْمِنُوْنَ ۝

"(और ऐ मुसलमानों!) तुम्हें क्या मालूम कि जब वह निशानी आ जायेगी तब भी यह ईमान नहीं लायेंगे।"

यह लोग ईमान तो मौज्ज़ा देख कर भी नहीं लायेंगे, लेकिन मौज्ज़ा देख लेने के बाद इनकी मोहलत ख़त्म हो जायेगी और वह फ़ौरी तौर पर अज़ाब की गिरफ़्त में आ जायेंगे। इसलिये इनकी भलाई इसी में है कि इन्हें मौज्ज़ा ना दिखाया जाये। चुनाँचे उनकी बातें सुन-सुन कर जो तंगी और घुटन तुम लोग अपने दिलों में महसूस कर रहे हो उसको बर्दाश्त करो और उनके इस मुतालबे को नज़र अंदाज़ कर दो। अब जो आयत आ रही है वह बहुत ही अहम है।

आयत 110

وَنُقَلِّبُ اَفْـِٕدَتَهُمْ وَاَبْصَارَهُمْ كَمَا لَمْ يُؤْمِنُوْا بِهٖٓ اَوَّلَ مَرَّةٍ

"और हम उनके दिलों और उनकी निगाहों को उलट देंगे जिस तरह वह ईमान नहीं लाये थे पहली मर्तबा"

इस क़ायदे और क़ानून को अच्छी तरह समझ लें। इस फ़लसफ़े का ख़ुलासा यह है कि अल्लाह तआला ने इन्सान को जो सलाहियतें दी हैं अगर वह उनको इस्तेमाल करता है तो उनमें मज़ीद इज़ाफ़ा होता है। अगर आप लोगों को इल्म सिखाएँगे तो आपके इल्म में इज़ाफ़ा होगा। आप आँख का इस्तेमाल करेंगे तो आँख सेहतमन्द रहेगी, उसकी बसारत बरक़रार रहेगी। अगर आँख पर पट्टी बाँध देंगे तो दो-चार महीने के बाद बसारत ज़ाइल हो जायेगी। इंसानी जोड़ों को हरकत करने के लिये बनाया गया है, अगर आप किसी जोड़ पर प्लास्तर चढ़ा देंगे तो कुछ महीनों के बाद उसकी हरकत ख़त्म हो जायेगी। चुनाँचे जो सलाहियत अल्लाह ने इन्सान को दी है अगर वह उसका इस्तेमाल नहीं करेगा तो वह सलाहियत तदरीजन ज़ाइल हो जायेगी। इसी तरह हक़ को पहचानने के लिये भी अल्लाह तआला ने इन्सान को बातिनी तौर पर सलाहियत वदीयत की है। अब अगर एक शख्स पर हक़ मुन्कशिफ़ हुआ है, उसके अन्दर उसे पहचानने की सलाहियत मौजूद है, उसके दिल ने गवाही भी दी है कि यह हक़ है, लेकिन अगर किसी तास्सुब की वजह से, किसी ज़िद और हठधर्मी के सबब उसने उस हक़ को देखने, समझने और मानने से इन्कार कर दिया, तो उसकी वह सलाहियत क़द्रे कम हो जायेगी। अब इसके बाद फिर दोबारा कभी हक़ की कोई चिंगारी उसके दिल में रोशन हुई तो उसका असर उस पर पहले से कम होगा और फिर तदरीजन वह नौबत आ जायेगी कि हक़ को पहचानने की वह बातिनी सलाहियत ख़त्म हो जायेगी। यह फ़लसफ़ा सूरह बक़रह आयत 7 में इस तरह बयान हुआ है: {خَتَمَ اللّٰهُ عَلٰي قُلُوْبِهِمْ وَعَلٰي سَمْعِهِمْ ۭ وَعَلٰٓي اَبْصَارِهِمْ غِشَاوَةٌ ۠ وَّلَهُمْ عَذَابٌ عَظِيْمٌ} "अल्लाह ने मोहर लगा दी है उनके दिलों पर और उनकी समाअत पर, और उनकी आँखों के आगे परदे डाल दिये हैं, और उनके लिये बहुत बड़ा अज़ाब है।" इसलिये कि जब ज़िद और तास्सुब की बिना पर वह लोग समझते-बूझते हक़ का मुसलसल इन्कार करते रहे तो उनकी हक़ को पहचानने की सलाहियतें सल्ब हो गईं। अब वह उस इन्तहा को पहुँच चुके हैं जहाँ से वापसी का कोई इम्कान नहीं। इसको "point of no return" कहते हैं। हर मामले में वापसी का एक वक़्त होता है, लेकिन वह वक़्त गुज़र जाने के बाद ऐसा करना मुमकिन नहीं रहता।

यही फ़लसफ़ा यहाँ दूसरे अंदाज़ में पेश किया जा रहा है कि जब पहली मर्तबा उन लोगों पर हक़ मुन्कशिफ़ हुआ, अल्लाह ने हुज्जत क़ायम कर दी, उन्होंने हक़ को पहचान लिया, उनके दिलों, उनकी रूहों और बातिनी बसीरत ने गवाही दे दी कि यह हक़ है, इसके बाद अगर वह उस हक़ को फ़ौरन मान लेते तो उनके लिये बेहतर होता। लेकिन चूँकि उन्होंने नहीं माना तो अल्लाह ने फ़रमाया कि इसकी सज़ा की तौर पर हम उनके दिलों

को और उनकी निगाहों को उलट देंगे, अब वह सौ मौज्ज़े देख कर भी ईमान नहीं लाएँगे।

وَّنَذَرُهُمْ فِيْ طُغْيَانِهِمْ يَعْمَهُوْنَ ﴿۱۱۰﴾

"और हम उनको छोड़ देंगे कि अपनी सरकशी के अन्दर भटकते रहें।"

यही लफ्ज़ "يَعْمَهُوْنَ" हम सूरतुल बक़रह की आयत 15 में पढ़ चुके हैं, जबकि वहाँ आयत 18 में "عُمْيٌ" भी आया है। يَعْمَهُ عَمِهَ बसीरत से महरूमी यानि बातिनी अंधेपन के लिये आता है और يَعْمٰى عَمِىَ बसारत से महरूमी यानि आँखों से अँधा होने के लिये इस्तेमाल होता है। यहाँ फ़रमाया कि हम छोड़ देंगे उनको उनकी बातिनी, ज़हनी, नफ्सियाती और अख्लाक़ी गुमराहियों के अँधेरों में भटकने के लिये।

आयत 111 से 121 तक

وَلَوْ اَنَّنَا نَزَّلْنَآ اِلَيْهِمُ الْمَلٰٓئِكَةَ وَكَلَّمَهُمُ الْمَوْتٰى وَحَشَرْنَا عَلَيْهِمْ كُلَّ شَيْءٍ قُبُلًا مَّا كَانُوْا لِيُؤْمِنُوْٓا اِلَّآ اَنْ يَّشَآءَ اللّٰهُ وَلٰكِنَّ اَكْثَرَهُمْ يَجْهَلُوْنَ ﴿۱۱۱﴾ وَكَذٰلِكَ جَعَلْنَا لِكُلِّ نَبِيٍّ عَدُوًّا شَيٰطِيْنَ الْاِنْسِ وَالْجِنِّ يُوْحِيْ بَعْضُهُمْ اِلٰى بَعْضٍ زُخْرُفَ الْقَوْلِ غُرُوْرًا ؕ وَلَوْ شَآءَ رَبُّكَ مَا فَعَلُوْهُ فَذَرْهُمْ وَمَا يَفْتَرُوْنَ ﴿۱۱۲﴾ وَلِتَصْغٰٓى اِلَيْهِ اَفْـِٕدَةُ الَّذِيْنَ لَا يُؤْمِنُوْنَ بِالْاٰخِرَةِ وَلِيَرْضَوْهُ وَلِيَقْتَرِفُوْا مَا هُمْ مُّقْتَرِفُوْنَ ﴿۱۱۳﴾ اَفَغَيْرَ اللّٰهِ اَبْتَغِيْ حَكَمًا وَّهُوَ الَّذِيْٓ اَنْزَلَ اِلَيْكُمُ الْكِتٰبَ مُفَصَّلًا ؕ وَالَّذِيْنَ اٰتَيْنٰهُمُ الْكِتٰبَ يَعْلَمُوْنَ اَنَّهٗ مُنَزَّلٌ مِّنْ رَّبِّكَ بِالْحَقِّ فَلَا تَكُوْنَنَّ مِنَ الْمُمْتَرِيْنَ ﴿۱۱۴﴾ وَتَمَّتْ كَلِمَتُ رَبِّكَ صِدْقًا وَّعَدْلًا ؕ لَا مُبَدِّلَ لِكَلِمٰتِهٖ ۚ وَهُوَ السَّمِيْعُ الْعَلِيْمُ ﴿۱۱۵﴾ وَاِنْ تُطِعْ اَكْثَرَ مَنْ فِي الْاَرْضِ يُضِلُّوْكَ عَنْ سَبِيْلِ اللّٰهِ ؕ اِنْ يَّتَّبِعُوْنَ اِلَّا الظَّنَّ وَاِنْ هُمْ اِلَّا يَخْرُصُوْنَ ﴿۱۱۶﴾ اِنَّ رَبَّكَ هُوَ اَعْلَمُ مَنْ يَّضِلُّ عَنْ سَبِيْلِهٖ ۚ وَهُوَ اَعْلَمُ بِالْمُهْتَدِيْنَ ﴿۱۱۷﴾ فَكُلُوْا مِمَّا ذُكِرَ اسْمُ اللّٰهِ عَلَيْهِ اِنْ كُنْتُمْ بِاٰيٰتِهٖ مُؤْمِنِيْنَ ﴿۱۱۸﴾ وَمَا لَكُمْ اَلَّا تَاْكُلُوْا مِمَّا ذُكِرَ اسْمُ اللّٰهِ عَلَيْهِ وَقَدْ فَصَّلَ لَكُمْ مَّا حَرَّمَ عَلَيْكُمْ اِلَّا مَا اضْطُرِرْتُمْ اِلَيْهِ ؕ وَاِنَّ كَثِيْرًا لَّيُضِلُّوْنَ بِاَهْوَآئِهِمْ بِغَيْرِ عِلْمٍ ؕ اِنَّ رَبَّكَ هُوَ اَعْلَمُ بِالْمُعْتَدِيْنَ ﴿۱۱۹﴾ وَذَرُوْا ظَاهِرَ الْاِثْمِ وَبَاطِنَهٗ ؕ اِنَّ الَّذِيْنَ يَكْسِبُوْنَ الْاِثْمَ سَيُجْزَوْنَ بِمَا كَانُوْا يَقْتَرِفُوْنَ ﴿۱۲۰﴾ وَلَا تَاْكُلُوْا مِمَّا لَمْ يُذْكَرِ اسْمُ اللّٰهِ عَلَيْهِ وَاِنَّهٗ لَفِسْقٌ ؕ وَاِنَّ الشَّيٰطِيْنَ لَيُوْحُوْنَ اِلٰٓى اَوْلِيٰٓـئِهِمْ لِيُجَادِلُوْكُمْ ۚ وَاِنْ اَطَعْتُمُوْهُمْ اِنَّكُمْ لَمُشْرِكُوْنَ ﴿۱۲۱﴾

आयत 111

وَلَوْ اَنَّنَا نَزَّلْنَآ اِلَيْهِمُ الْمَلٰٓئِكَةَ

"और अगर हम इन पर फ़रिश्ते उतार देते"

यानि हम इनके मुतालबे के मुताबिक़ एक फ़रिश्ता तो क्या फ़रिश्तों की फ़ौजें उतार सकते हैं, उन फ़रिश्तों को आसमान से उतरते हुए दिखा सकते हैं, लेकिन अगर हम वाक़िअतन फ़रिश्ते उतार भी देते और इनको दिखा भी देते....

وَكَلَّمَهُمُ الْمَوْتٰى وَحَشَرْنَا عَلَيْهِمْ كُلَّ شَيْءٍ قُبُلًا

"और मुर्दे भी इनसे गुफ्तुगू करते और हम तमाम चीज़ें लाकर इनके रू-ब-रू जमा कर देते"

مَّا كَانُوْا لِيُؤْمِنُوْٓا اِلَّآ اَنْ يَّشَآءَ اللّٰهُ

"तब भी यह ईमान लाने वाले ना थे मगर यह कि अल्लाह चाहे"

अगर अल्लाह चाहे और अगर किसी के अन्दर हक़ की तलब हो तो अल्लाह तआला मौज्ज़ों के बगैर भी ऐसे लोगों की आँखें खोल देता है। जो लोग भी

मुहम्मद रसूल अल्लाह ﷺ पर ईमान लाये थे वह मौज्ज़े देख कर तो नहीं लाये थे। वह तालिबाने हक़ थे लिहाज़ा उन्हें हक़ मिल गया।

وَلٰكِنَّ اَكْثَرَهُمْ يَجْهَلُوْنَ

"लेकिन इनकी अक्सरियत जाहिलों पर मुश्तमिल है।"

यहाँ जाहिल से मुराद जज़्बाती लोग हैं, जो अक़्ल से काम नहीं लेते बल्कि अपने जज़्बात के आलाकार बन जाते हैं। अगली आयत फ़लसफ़ा-ए-दावत व तहरीक के ऐतबार से बहुत अहम है।

आयत 112

وَكَذٰلِكَ جَعَلْنَا لِكُلِّ نَبِيٍّ عَدُوًّا شَيٰطِيْنَ الْاِنْسِ وَالْجِنِّ

"और इसी तरह हमने हर नबी के दुश्मन बना दिये इंसानों और जिन्नों में से श्यातीन"

सोचने और गौर करने का मक़ाम है, अम्बिया को तो मदद की ज़रूरत थी, अल्लाह ने श्यातीन को उनके ख़िलाफ़ क्यों खड़ा कर दिया? बहरहाल यह अल्लाह का क़ानून है जो राहे हक़ के हर मुसाफ़िर को मालूम होना चाहिये। इसमें हिकमत यह है कि हक़ व बातिल में इस नौइयत की कशाकश नहीं होगी तो फिर खरे और खोटे की पहचान भी नहीं हो सकेगी। कैसे मालूम होगा कि कौन वाक़ई हक़परस्त है और कौन झूठा दावेदार। कौन अल्लाह से सच्ची मोहब्बत करता है और कौन दूध पीने वाला मजनून है। यह दुनिया तो आज़माइश के लिये बनायी गयी है। यहाँ अगर शर का वजूद ही ना हो, हर जगह खैर ही खैर हो तो खैर के तलबगारों की आज़माइश कैसे होगी? लिहाज़ा फ़रमाया कि यह कशमकश की फ़ज़ा हम ख़ुद पैदा करते हैं। हम ख़ुद हक़ पर चलने वालों को तलातुम ख़ेज़ मौजों के सुपुर्द करके उनकी इस्तक़ामत को परखते हैं और फिर साबित क़दम रहने वालों को नवाज़ते हैं। इस मैदान में जो जितना आज़माया जाता है, जो जितनी इस्तक़ामत दिखाता है, जो जितना ईसार करता है, उतना ही उसका मरतबा बुलन्द होता चला जाता है। चुनाँचे राहे हक़ के मुसाफ़िरों को मुत्मईन रहना चाहिये:

तुन्दी-ए-बाद-ए-मुखालिफ़ से ना घबरा ऐ उक़ाब
यह तो चलती है तुझे ऊँचा उड़ाने के लिये!

يُوْحِيْ بَعْضُهُمْ اِلٰى بَعْضٍ زُخْرُفَ الْقَوْلِ غُرُوْرًا

"वह एक-दूसरे को इशारों-किनायों में पुर फ़रेब बातें पहुँचाते रहते हैं गुमराह करने के लिये।"

मसलन एक जिन शैतान आकर अपने साथी इन्सान शैतान के दिल में ख्याल डालता है कि शाबाश अपन मौक़फ़ पर डटे रहो, इसी का नाम इस्तक़ामत है। देखो कहीं फिसल ना जाना और अपने मुखालिफ़ के मौक़फ़ को क़ुबूल ना कर लेना। उनका आपस में इस तरह का गठजोड़ चलता रहता है। इसलिये कि अल्लाह तआला ने ख़ुद उनको यह छूट दे रखी है।

وَلَوْ شَآءَ رَبُّكَ مَا فَعَلُوْهُ

"और अगर आपका रब चाहता तो वह यह ना कर सकते"

ज़ाहिर बात है कि इस कायनात में कोई पत्ता भी अल्लाह के इज़्न के बगैर नहीं हिल सकता। अबु जहल की क्या मजाल थी कि हज़रत सुमैय्या रज़ि. को शहीद करता। वह बरछा उठाता तो उसका हाथ शल हो जाता। लेकिन यह तो अल्लाह की तरफ़ से छूट थी कि ठीक है, तुम हमारी इस बंदी को जितना आज़माना चाहते हो आज़मा लो। इन आज़माइशों से हमारे यहाँ इसके मरातिब बुलन्द से बुलन्दतर होते चले जा रहे हैं। जैसा कि सूरह यासीन (आयत 26 व 27) में अल्लाह तआला के एक बन्दे पर ईनामात का ज़िक्र हुआ है: {قَالَ يٰلَيْتَ قَوْمِيْ يَعْلَمُوْنَ } {بِمَا غَفَرَ لِيْ رَبِّيْ وَجَعَلَنِيْ مِنَ الْمُكْرَمِيْنَ} "उसने कहा काश कि मेरी क़ौम को मालूम हो जाये कि किस तरह मेरे रब ने मुझे बख्श दिया और मुझे मौज़्ज़ीन में से बना दिया।" इधर तो मेरी शहादत के बाद सफ़े मातम बिछी होगी, बीवी शौहर की जुदाई में निढ़ाल

होगी, बच्चे रो-रो कर हल्कान हो रहे होंगे, लेकिन काश वह जान सकते कि मुझे मेरे रब ने किस-किस तरह से नवाज़ा है, कैसे-कैसे ईनामात यहाँ मुझ पर किये गये हैं और मैं यहाँ किस ऐश व आराम में हूँ! अगर उन्हें मेरे इस ऐज़ाज़ व इकराम की कुछ भी ख़बर हो जाती तो रोने-धोने की बजाये वह खुशियाँ मना रहे होते।

فَذَرْهُمْ وَمَا يَفْتَرُوْنَ

"तो छोड़िये आप ﷺ इनको और इनकी इफ़तरा परदाज़ियों को।"

यह हमारी सुन्नत है, हमारा तरीक़ा है, हमने ख़ुद इनको यह सब कुछ करने की ढील दे रखी है, लिहाज़ा आप ﷺ इनसे ऐराज़ फ़रमाइये और इनको इनकी इफ़तरा परदाज़ियों में पड़े रहने दीजिये।

.

आयत 113

وَلِتَصْغٰٓى اِلَيْهِ اَفْـِٕدَةُ الَّذِيْنَ لَا يُؤْمِنُوْنَ بِالْاٰخِرَةِ

"और (ऐसा इसलिये है) ताकि माइल हो जायें इसकी तरफ़ उन लोगों के दिल जो आख़िरत पर ईमान नहीं रखते"

وَلِيَرْضَوْهُ وَلِيَقْتَرِفُوْا مَا هُمْ مُّقْتَرِفُوْنَ

"और ताकि वह इसको पसंद भी करें और फिर वह अपने बुरे आमाल का जो भी अम्बार जमा करना चाहते हैं जमा कर लें।"

इस फ़लसफ़े को एक मिसाल से समझिये। पानी का electrolysis करें तो negative और positive चार्ज वाले आइन्ज़ (ions) अलग-अलग हो जाते हैं। इसी तरह अल्लाह तआला ने दुनिया में हक़ व बातिल की जो कशाकश रखी है, उसका लाज़मी नतीजा यह निकलता है कि खरे और खोटे की ionization हो जाती है। अहले हक़ निखर कर एक तरफ़ हो जाते हैं और अहले बातिल दूसरी तरफ़। इस तरह इंसानी मआशरे में अच्छे और बुरे की तमीज़ हो जाती है। जैसे कि हम सूरह आले इमरान (आयत 179) में पढ़ चुके हैं: { حَتّٰى يَمِيْزَ الْخَبِيْثَ مِنَ الطَّيِّبِ } "ताकि वह नापाक को पाक से अलग कर दे।" मआशरे के अन्दर आम तौर पर पाक और नापाक अनासिर गडमड हुए होते हैं, लेकिन जब आज़माइशें और तकलीफ़ें आती हैं, इम्तिहानात आते हैं तो यह ख़बीस और तय्यब अनासिर वाज़ेह तौर पर अलग-अलग हो जाते हैं, मुनाफ़िक़ अलैहदा और अहले ईमान अलैहदा हो जाते हैं। आयत ज़ेरे नज़र में यही फ़लसफ़ा बयान हुआ है कि श्यातीने इन्स व जिन्न को खल-खेलने की मोहलत इसी हिकमत के तहत फ़राहम की जाती है और मुन्किरीने आख़िरत को भी पूरा मौक़ा दिया जाता है कि वह उन श्यातीन की तरफ़ से फैलाये हुए बे सर व पाँव नज़रियात की तरफ़ माइल होना चाहें तो बेशक हो जायें।

आयत 114

اَفَغَيْرَ اللّٰهِ اَبْتَغِيْ حَكَمًا

"क्या मैं अल्लाह के सिवा कोई और हाकम ढूँढू?"

अब फिर यह मुतजस्साना सवाल (searching question) इसी पसमंज़र में किया गया है कि मुशरिकीने मक्का अल्लाह को मानते थे। चुनाँचे उनसे पूछा जा रहा है कि वह अल्लाह जिसको तुम मानते हो, मैंने भी उसी को अपना रब माना है। तो क्या अब तुम चाहते हो कि मैं उस मअबूदे हक़ीक़ी को छोड़ कर किसी और को अपना हाकम तस्लीम कर लूँ, और वह भी उनमें से जिनको तुम लोगों ने अपनी तरफ़ से गढ़ लिया है, जिनके बारे में अल्लाह ने कोई सनद या दलील नाज़िल नहीं की है। सूरतुल ज़ुख़रफ़ में इसी नुक्ते को इस अंदाज़ में पेश किया गया है: { قُلْ اِنْ كَانَ لِلرَّحْمٰنِ وَلَدٌ ڰ فَاَنَا اَوَّلُ الْعٰبِدِيْنَ} (आयत:81) "आप ﷺ कहिये कि अगर अल्लाह का कोई बेटा होता तो सबसे पहले उसको मैं पूजता।" यानि जब मैं अल्लाह की परस्तिश करता हूँ तो अगर अल्लाह का कोई बेटा होता तो क्या मैं उसकी परस्तिश

ना करता? चुनाँचे मैं जो अल्लाह को अपना मअबूद समझता हूँ और किसी को उसका बेटा नहीं मानता तो जान लें कि उसका कोई बेटा है ही नहीं। समझाने का यह अंदाज़ जो क़ुरान में इख़्तियार किया गया है बड़ा फ़ितरी है। इसमें मन्तिक़ के बजाये जज़्बात से बराहेरास्त अपील है। दरूबीनी (introspection) की तरफ़ दावत है कि अपने दिल में झाँको, गिरेबान में मुँह डालो और सोचो, हक़ीक़त तुम्हें ख़ुद ही नज़र आ जायेगी।

وَّهُوَ الَّذِیۡۤ اَنۡزَلَ اِلَیۡکُمُ الۡکِتٰبَ مُفَصَّلًا ؕ

"और वही तो है जिसने तुम्हारी तरफ़ एक बड़ी मुफ़स्सल किताब नाज़िल की है।"

وَالَّذِیۡنَ اٰتَیۡنٰهُمُ الۡکِتٰبَ یَعۡلَمُوۡنَ اَنَّهٗ مُنَزَّلٌ مِّنۡ رَّبِّکَ بِالۡحَقِّ فَلَا تَکُوۡنَنَّ مِنَ الۡمُمۡتَرِیۡنَ ۙ﴿۱۱۴﴾

"और (ऐ नबी ﷺ) जिन्हें हमने (पहले) किताब दी थी वह जानते हैं कि यह नाज़िल की गयी है आप के रब की तरफ़ से हक़ के साथ, तो हरगिज़ ना हो जाना शक करने वालों में से।"

अहले किताब ज़बान से इक़रार करें ना करें, अपने दिलों में ज़रूर यक़ीन रखते हैं कि यह क़ुरान अल्लाह तआला की तरफ़ से नाज़िल करदा है।

आयत 115

وَتَمَّتۡ کَلِمَتُ رَبِّکَ صِدۡقًا وَّعَدۡلًا ؕ

"और आप ﷺ के रब की बात तो सच्चाई और अद्ल पर मब्नी होने के ऐतबार से दर्जा-ए-कमाल तक पहुँच चुकी है।"

आपके रब की बात उसकी मशीयत के मुताबिक़ मुकम्मल हो चुकी है, जैसे सूरह मायदा में फ़रमाया: { اَلۡیَوۡمَ اَکۡمَلۡتُ لَکُمۡ دِیۡنَکُمۡ وَاَتۡمَمۡتُ عَلَیۡکُمۡ نِعۡمَتِیۡ وَرَضِیۡتُ لَکُمُ الۡاِسۡلَامَ دِیۡنًا ۔ } (आयत 3)।

لَا مُبَدِّلَ لِکَلِمٰتِهٖ ۚ وَهُوَ السَّمِیۡعُ الۡعَلِیۡمُ ﴿۱۱۵﴾

"उसकी बातों को कोई बदलने वाला नहीं, और वह सब कुछ सुनने वाला, जानने वाला है।"

आयत 116

وَاِنۡ تُطِعۡ اَکۡثَرَ مَنۡ فِی الۡاَرۡضِ یُضِلُّوۡکَ عَنۡ سَبِیۡلِ اللّٰهِ ؕ

"और अगर तुम पैरवी करोगे ज़मीन में बसने वालों की अक्सरियत की तो वह तुम्हें अल्लाह के रास्ते से लाज़िमन गुमराह कर देंगे।"

जदीद जम्हूरी निज़ाम के फ़लसफ़े की नफ़ी के लिये यह बड़ी अहम आयत है। जम्हूरियत में असाबते राय के बजाये तादाद को देखा जाता है। बक़ौल इक़बाल:

जम्हूरियत एक तर्ज़े हुकूमत है कि जिसमें
बन्दों को गिना करते हैं, तौला नहीं करते!

इस हवाले से क़ुरान का यह हुक्म बहुत वाज़ेह है कि अगर ज़मीन में बसने वालों की अक्सरियत की बात मानोगे तो वह तुम्हें गुमराह कर देंगे। दुनिया में अक्सरियत तो हमेशा बातिल परस्तों की रही है। दौरे सहाबा रज़ि. में सहाबा किराम रज़ि. की तादाद दुनिया की पूरी आबादी के तनाज़ुर में देखें तो लाख के मुक़ाबले में एक की निस्बत भी नहीं बनती। इसलिये अक्सरियत को कुल्ली इख़्तियार देकर किसी खैर की तवक्क़ो नहीं की जा सकती। हाँ एक सूरत में अक्सरियत की राय को अहमियत दी जा सकती है। वह यह कि अगर अल्लाह और उसके रसूल ﷺ के अहकाम को क़तई उसूलों और land marks के तौर पर मान लिया जाये तो फिर उनकी वाज़ेह करदा हुदूद के अन्दर रहते हुए मुबाहात के बारे में अक्सरियत की बिना पर फ़ैसले हो सकते हैं। मसलन किसी दावत के ज़िमन में अगर यह

फ़ैसला करना मक़सूद हो कि मेहमानों को कौनसा मशरूब पेश किया जाये तो ज़ाहिर है कि शराब के बारे में तो राय शुमार नहीं हो सकती, वह तो अल्लाह और रसूल ﷺ के हुक्म के मुताबिक़ हराम है। हाँ रूह अफ़्ज़ा, कोका कोला, स्प्राइट वगैरह के बारे में आप अक्सरियत की राय का अहतराम करते हुए फ़ैसला कर सकते हैं। लेकिन इख़्तियारे मुतलक़ (absolute authority) और इक़तदार-ए-आला (sover-eignty) अक्सरियत के पास हो तो इस सूरते हाल पर "اِنَّا لِلّٰهِ وَاِنَّآ اِلَيْهِ رٰجِعُوْنَ" ही पढ़ा जा सकता है। चुनाँचे कुल्ली इख़्तियार और इक़तदार-ए-आला तो बहरहाल अल्लाह के पास रहेगा, जो इस कायनात और इसमें मौजूद हर चीज़ का खालिक़ और मालिक है। अक्सरियत की राय पर फ़ैसले सिर्फ़ उसके अहकाम की हुदूद के अन्दर रहते हुए ही किये जा सकते हैं।

اِنْ يَّتَّبِعُوْنَ اِلَّا الظَّنَّ وَاِنْ هُمْ اِلَّا يَخْرُصُوْنَ ﴿۱۱۶﴾

"यह नहीं पैरवी कर रहे मगर ज़न व तख़मीन की और यह नहीं कुछ कर रहे सिवाय इसके कि इन्होंने कुछ अन्दाज़े मुक़र्रर कर रखे हैं।"

यानि यह महज़ गुमान की पैरवी करते हैं और अटकल के तीर तुक्के चलाते हैं, क़यास आराइयाँ करते हैं।

आयत 117

اِنَّ رَبَّكَ هُوَ اَعْلَمُ مَنْ يَّضِلُّ عَنْ سَبِيْلِهٖ وَهُوَ اَعْلَمُ بِالْمُهْتَدِيْنَ ﴿۱۱۷﴾

"यक़ीनन आप ﷺ का रब खूब जानता है उनको जो उसके रास्ते से भटके हुए हैं, और वह खूब वाक़िफ़ है उनसे भी जो हिदायत की राह पर हैं।"

आयत 118

فَكُلُوْا مِمَّا ذُكِرَ اسْمُ اللّٰهِ عَلَيْهِ اِنْ كُنْتُمْ بِاٰيٰتِهٖ مُؤْمِنِيْنَ ﴿۱۱۸﴾

"पस खाओ उन चीज़ों में से जिन पर अल्लाह का नाम लिया गया है अगर तुम उसकी आयात पर ईमान रखते हो।"

यहाँ खाने-पीने की चीज़ों की हिल्लत व हुरमत के बारे में मुशरिकीने अरब के जाहिलाना नज़रियात और तोहमात का रद्द किया गया है।

आयत 119

وَمَا لَكُمْ اَلَّا تَاْكُلُوْا مِمَّا ذُكِرَ اسْمُ اللّٰهِ عَلَيْهِ

"और तुम्हें क्या है कि तुम नहीं खाते वह चीज़ें जिन पर अल्लाह का नाम लिया गया हो"

यह बहीरा, सायबा, वसीला और हाम वगैरह (बहवाला अल् मायदा:103) के बारे में तुम्हारे तमाम अक़ीदे मनघडत हैं। अल्लाह ने ऐसी कोई पाबन्दियाँ अपने बन्दों पर नहीं लगायीं। लिहाज़ा हलाल जानवरों को अल्लाह का नाम लेकर ज़िबह किया करो और बिला कराहत उनका गोश्त खाया करो।

وَقَدْ فَصَّلَ لَكُمْ مَّا حَرَّمَ عَلَيْكُمْ

"जबकि अल्लाह तफ़सील बयान कर चुका है तुम्हारे लिये उन चीज़ों की जो हराम की गयी हैं तुम पर"

यह तफ़सील सूरतुन्नहल के अन्दर आयी है। सूरतुन्नहल चूँकि सूरतुल अनआम से पहले नाज़िल हुई है इसलिये यहाँ फ़रमाया गया कि हलाल चीज़ों की तफ़सील तुम्हारे लिये पहले ही बयान की जा चुकी है।

إِلَّا مَا اضْطُرِرْتُمْ إِلَيْهِ

"सिवाय उस चीज़ के कि तुम मजबूर हो जाओ उस (के खाने) के लिये।"

इसमें भी तुम्हारे लिये गुंजाइश है कि अगर इज़तरार है, जान पर बनी हुई है, भूख से जान निकल रही है तो इन हराम चीज़ों में से भी कुछ खाकर जान बचायी जा सकती है।

وَإِنَّ كَثِيرًا لَّيُضِلُّونَ بِأَهْوَائِهِم بِغَيْرِ عِلْمٍ ۗ إِنَّ رَبَّكَ هُوَ أَعْلَمُ بِالْمُعْتَدِينَ ﴿١١٩﴾

"और यक़ीनन बहुत से लोग़ ऐसे हैं जो बगैर इल्म के अपनी ख्वाहिशात की बिना पर लोगों को गुमराह करते फिरते हैं। यक़ीनन आप ﷺ का रब खूब जानता है उन हद से तजावुज़ करने वालों को।"

आयत 120

وَذَرُوا ظَاهِرَ الْإِثْمِ وَبَاطِنَهُ ۚ

"और छोड़ दो (हर तरह के) गुनाह को, वह खुला हो या छुपा हुआ।"

إِنَّ الَّذِينَ يَكْسِبُونَ الْإِثْمَ سَيُجْزَوْنَ بِمَا كَانُوا يَقْتَرِفُونَ ﴿١٢٠﴾

"यक़ीनन जो लोग गुनाह कमाते हैं उन्हें जल्द ही बदला मिलेगा उसका जो वह जमा कर रहे हैं।"

आयत 121

وَلَا تَأْكُلُوا مِمَّا لَمْ يُذْكَرِ اسْمُ اللَّهِ عَلَيْهِ وَإِنَّهُ لَفِسْقٌ ۗ

"और मत खाओ उसमें से जिस पर अल्लाह का नाम ना लिया गया हो, और यक़ीनन यह (इसका खाना) गुनाह है।"

इस आयत का ताल्लुक़ भी मुशरिकीने अरब के ख़ुद साख्ता एतक़ादात और तोहमात से है। वह कहते थे कि बाज़ जानवरों को ज़िबह करते हुए अल्लाह का नाम सिरे से लेना ही नहीं चाहिये। यह हुक्म एक ख़ास मसले के हवाले से है, जिसकी वज़ाहत आगे आयत 138 में आयगी।

وَإِنَّ الشَّيَاطِينَ لَيُوحُونَ إِلَىٰ أَوْلِيَائِهِمْ لِيُجَادِلُوكُمْ ۖ وَإِنْ أَطَعْتُمُوهُمْ إِنَّكُمْ لَمُشْرِكُونَ ﴿١٢١﴾

"और यक़ीनन यह श्यातीन अपने साथियों को वही करते रहते हैं ताकि वह तुमसे झगड़ा करें, और अगर तुम इनका कहना मानोगे तो तुम भी मुशरिक हो जाओगे।"

मुशरिकीने मक्का अपने ग़लत एतक़ादात की हिमायत में तरह-तरह की हुज्जत बाज़ी करते रहते थे, मसलन यह क्या बात हुई कि जो जानवर अल्लाह ने मारा है यानि अज़ ख़ुद मर गया है वह तो हराम क़रार दे दिया जाये और जिसको तुम ख़ुद मारते हो यानि ज़िबह करते हो उसको हलाल माना जाये? इसी तरह व सूद के बारे में भी दलील देते थे कि { إِنَّمَا الْبَيْعُ مِثْلُ الرِّبٰوا ۘ} (अल् बक़रह:275) "कि यह बय (व्यापार) भी तो रिबा (सूद/ब्याज) ही की तरह है।" जैसे तिजारत में नफ़ा होता है ऐसे ही सूदी लेन-देन में भी नफ़ा होता है। यह क्या बात हुई कि दस लाख किसी को क़र्ज़ दिये, उससे चार हज़ार रूपये महीना मुनाफ़ा ले लिया तो वह नाजायज़ और दस लाख का मकान किसी को किराये पर देकर चार हज़ार रूपये महीना उससे किराया लिया जाये तो वह जायज़! इस तरह के अश्कालात बज़ाहिर बड़े दिलनशी होते हैं, जिनके बारे में यहाँ बताया जा रहा है कि इस तरह की बातें इनके श्यातीन इन्हें सिखाते रहते हैं ताकि वह तुमसे मुजादला करें,

ताकि तुम्हें भी अपने साथ गुमराही के रास्ते पर ले चलें। लिहाज़ा तुम इनकी इस तरह की बातों को नज़रअंदाज़ करते रहा करो।

आयत 122 से 140 तक

اَوَمَنۡ كَانَ مَيۡتًا فَاَحۡيَيۡنٰهُ وَجَعَلۡنَا لَهٗ نُوۡرًا يَّمۡشِىۡ بِهٖ فِى النَّاسِ كَمَنۡ مَّثَلُهٗ فِى
الظُّلُمٰتِ لَيۡسَ بِخَارِجٍ مِّنۡهَا ؕ كَذٰلِكَ زُيِّنَ لِلۡكٰفِرِيۡنَ مَا كَانُوۡا يَعۡمَلُوۡنَ ۝۱۲۲
وَكَذٰلِكَ جَعَلۡنَا فِىۡ كُلِّ قَرۡيَةٍ اَكٰبِرَ مُجۡرِمِيۡهَا لِيَمۡكُرُوۡا فِيۡهَا ؕ وَمَا يَمۡكُرُوۡنَ اِلَّا
بِاَنۡفُسِهِمۡ وَمَا يَشۡعُرُوۡنَ ۝۱۲۳ وَاِذَا جَآءَتۡهُمۡ اٰيَةٌ قَالُوۡا لَنۡ نُّؤۡمِنَ حَتّٰى نُؤۡتٰى مِثۡلَ
مَاۤ اُوۡتِىَ رُسُلُ اللّٰهِ ؔۘ اَللّٰهُ اَعۡلَمُ حَيۡثُ يَجۡعَلُ رِسَالَتَهٗ ؕ سَيُصِيۡبُ الَّذِيۡنَ اَجۡرَمُوۡا
صَغَارٌ عِنۡدَ اللّٰهِ وَعَذَابٌ شَدِيۡدٌ ۢ بِمَا كَانُوۡا يَمۡكُرُوۡنَ ۝۱۲۴ فَمَنۡ يُّرِدِ اللّٰهُ اَنۡ يَّهۡدِيَهٗ
يَشۡرَحۡ صَدۡرَهٗ لِلۡاِسۡلَامِ ۚ وَمَنۡ يُّرِدۡ اَنۡ يُّضِلَّهٗ يَجۡعَلۡ صَدۡرَهٗ ضَيِّقًا حَرَجًا كَاَنَّمَا
يَصَّعَّدُ فِى السَّمَآءِ ؕ كَذٰلِكَ يَجۡعَلُ اللّٰهُ الرِّجۡسَ عَلَى الَّذِيۡنَ لَا يُؤۡمِنُوۡنَ ۝۱۲۵ وَهٰذَا
صِرَاطُ رَبِّكَ مُسۡتَقِيۡمًا ؕ قَدۡ فَصَّلۡنَا الۡاٰيٰتِ لِقَوۡمٍ يَّذَّكَّرُوۡنَ ۝۱۲۶ لَهُمۡ دَارُ السَّلٰمِ
عِنۡدَ رَبِّهِمۡ وَهُوَ وَلِيُّهُمۡ بِمَا كَانُوۡا يَعۡمَلُوۡنَ ۝۱۲۷ وَيَوۡمَ يَحۡشُرُهُمۡ جَمِيۡعًا ۚ
يٰمَعۡشَرَ الۡجِنِّ قَدِ اسۡتَكۡثَرۡتُمۡ مِّنَ الۡاِنۡسِ ۚ وَقَالَ اَوۡلِيٰٓـُٔوۡهُمۡ مِّنَ الۡاِنۡسِ رَبَّنَا
اسۡتَمۡتَعَ بَعۡضُنَا بِبَعۡضٍ وَّبَلَغۡنَاۤ اَجَلَنَا الَّذِىۡۤ اَجَّلۡتَ لَنَا ؕ قَالَ النَّارُ مَثۡوٰىكُمۡ
خٰلِدِيۡنَ فِيۡهَاۤ اِلَّا مَا شَآءَ اللّٰهُ ؕ اِنَّ رَبَّكَ حَكِيۡمٌ عَلِيۡمٌ ۝۱۲۸ وَكَذٰلِكَ نُوَلِّىۡ بَعۡضَ
الظّٰلِمِيۡنَ بَعۡضًا ۢ بِمَا كَانُوۡا يَكۡسِبُوۡنَ ۝۱۲۹ يٰمَعۡشَرَ الۡجِنِّ وَالۡاِنۡسِ اَلَمۡ يَاۡتِكُمۡ رُسُلٌ
مِّنۡكُمۡ يَقُصُّوۡنَ عَلَيۡكُمۡ اٰيٰتِىۡ وَيُنۡذِرُوۡنَكُمۡ لِقَآءَ يَوۡمِكُمۡ هٰذَا ؕ قَالُوۡا شَهِدۡنَا عَلٰٓى
اَنۡفُسِنَا وَغَرَّتۡهُمُ الۡحَيٰوةُ الدُّنۡيَا وَشَهِدُوۡا عَلٰٓى اَنۡفُسِهِمۡ اَنَّهُمۡ كَانُوۡا كٰفِرِيۡنَ ۝۱۳۰
ذٰلِكَ اَنۡ لَّمۡ يَكُنۡ رَّبُّكَ مُهۡلِكَ الۡقُرٰى بِظُلۡمٍ وَّاَهۡلُهَا غٰفِلُوۡنَ ۝۱۳۱ وَلِكُلٍّ دَرَجٰتٌ

مِّمَّا عَمِلُوۡا ؕ وَمَا رَبُّكَ بِغَافِلٍ عَمَّا يَعۡمَلُوۡنَ ۝۱۳۲ وَرَبُّكَ الۡغَنِىُّ ذُو الرَّحۡمَةِ ؕ اِنۡ يَّشَاۡ
يُذۡهِبۡكُمۡ وَيَسۡتَخۡلِفۡ مِنۡۢ بَعۡدِكُمۡ مَّا يَشَآءُ كَمَاۤ اَنۡشَاَكُمۡ مِّنۡ ذُرِّيَّةِ قَوۡمٍ
اٰخَرِيۡنَ ۝۱۳۳ اِنَّ مَا تُوۡعَدُوۡنَ لَاٰتٍ ۙ وَّمَاۤ اَنۡتُمۡ بِمُعۡجِزِيۡنَ ۝۱۳۴ قُلۡ يٰقَوۡمِ اعۡمَلُوۡا عَلٰى
مَكَانَتِكُمۡ اِنِّىۡ عَامِلٌ ۚ فَسَوۡفَ تَعۡلَمُوۡنَ ۙ مَنۡ تَكُوۡنُ لَهٗ عَاقِبَةُ الدَّارِ ؕ اِنَّهٗ لَا يُفۡلِحُ
الظّٰلِمُوۡنَ ۝۱۳۵ وَجَعَلُوۡا لِلّٰهِ مِمَّا ذَرَاَ مِنَ الۡحَرۡثِ وَالۡاَنۡعَامِ نَصِيۡبًا فَقَالُوۡا هٰذَا لِلّٰهِ
بِزَعۡمِهِمۡ وَهٰذَا لِشُرَكَآئِنَا ۚ فَمَا كَانَ لِشُرَكَآئِهِمۡ فَلَا يَصِلُ اِلَى اللّٰهِ ۚ وَمَا كَانَ لِلّٰهِ
فَهُوَ يَصِلُ اِلٰى شُرَكَآئِهِمۡ ؕ سَآءَ مَا يَحۡكُمُوۡنَ ۝۱۳۶ وَكَذٰلِكَ زَيَّنَ لِكَثِيۡرٍ مِّنَ
الۡمُشۡرِكِيۡنَ قَتۡلَ اَوۡلَادِهِمۡ شُرَكَآؤُهُمۡ لِيُرۡدُوۡهُمۡ وَلِيَلۡبِسُوۡا عَلَيۡهِمۡ دِيۡنَهُمۡ ؕ وَلَوۡ
شَآءَ اللّٰهُ مَا فَعَلُوۡهُ فَذَرۡهُمۡ وَمَا يَفۡتَرُوۡنَ ۝۱۳۷ وَقَالُوۡا هٰذِهٖۤ اَنۡعَامٌ وَّحَرۡثٌ حِجۡرٌ ۖ لَّا
يَطۡعَمُهَاۤ اِلَّا مَنۡ نَّشَآءُ بِزَعۡمِهِمۡ وَاَنۡعَامٌ حُرِّمَتۡ ظُهُوۡرُهَا وَاَنۡعَامٌ لَّا يَذۡكُرُوۡنَ
اسۡمَ اللّٰهِ عَلَيۡهَا افۡتِرَآءً عَلَيۡهِ ؕ سَيَجۡزِيۡهِمۡ بِمَا كَانُوۡا يَفۡتَرُوۡنَ ۝۱۳۸ وَقَالُوۡا مَا فِىۡ
بُطُوۡنِ هٰذِهِ الۡاَنۡعَامِ خَالِصَةٌ لِّذُكُوۡرِنَا وَمُحَرَّمٌ عَلٰٓى اَزۡوَاجِنَا ۚ وَاِنۡ يَّكُنۡ مَّيۡتَةً
فَهُمۡ فِيۡهِ شُرَكَآءُ ؕ سَيَجۡزِيۡهِمۡ وَصۡفَهُمۡ ؕ اِنَّهٗ حَكِيۡمٌ عَلِيۡمٌ ۝۱۳۹ قَدۡ خَسِرَ الَّذِيۡنَ قَتَلُوۡۤا
اَوۡلَادَهُمۡ سَفَهًا ۢ بِغَيۡرِ عِلۡمٍ وَّحَرَّمُوۡا مَا رَزَقَهُمُ اللّٰهُ افۡتِرَآءً عَلَى اللّٰهِ ؕ قَدۡ ضَلُّوۡا
وَمَا كَانُوۡا مُهۡتَدِيۡنَ ۝۱۴۰ ۧ

आयत 122

اَوَمَنۡ كَانَ مَيۡتًا فَاَحۡيَيۡنٰهُ

"भला जो कोई था मुर्दा, फिर हमने उसे ज़िन्दा कर दिया"

इससे मायनवी हयात व ममात मुराद है, यानि एक शख्स जो अल्लाह से वाक़िफ़ नहीं था, सिर्फ़ दुनिया का बंदा बना हुवा था, उसकी इंसानियत दरहक़ीक़त मुर्दा थी, वह हैवान की हैसियत से तो ज़िन्दा था लेकिन बहैसियत इंसान वह मुर्दा था, फिर अल्लाह ताआला ने उसे ईमान की हिदायत दी तो अब गोया वह ज़िन्दा हो गया।

وَجَعَلْنَا لَهٗ نُوْرًا يَّمْشِيْ بِهٖ فِي النَّاسِ كَمَنْ مَّثَلُهٗ فِي الظُّلُمٰتِ لَيْسَ بِخَارِجٍ مِّنْهَا ؕ

"और हमने उसके लिये रोशनी कर दी, अब इसके साथ वह चल रहा है लोगों के माबैन, क्या वह उस शख्स की तरह हो जायेगा जो अँधेरों में (भटक रहा) हो और उससे वह निकलने वाला भी ना हो।"

كَذٰلِكَ زُيِّنَ لِلْكٰفِرِيْنَ مَا كَانُوْا يَعْمَلُوْنَ ﴿۱۲۲﴾

"इसी तरह मुज़य्यन कर दिया गया है इन काफ़िरों के लिये जो कुछ यह कर रहे है।"

मिसाल के तौर पर एक वह शख्स था जिसे पहले होश नहीं था, कभी उसने नज़रियाती मामलात की पेचीदगियों की तरफ़ तवज्जोह ही नहीं की थी, लेकिन फिर उसको अल्लाह ने हिदायत दे दी, नूर-ए-क़ुरान से उसके सीने को मुनव्वर कर दिया, अब वह उस नूर में आगे बढ़ा और बढ़ता चला गया। जैसे हज़रत उमर रज़ि. को हक़ की तरफ मुतवज्जह होने में छ: साल लग गये। हज़रत हमज़ा रज़ि. भी छ: साल बाद ईमान लाये। लेकिन अब उन्होंने क़ुरान को मशाले राह बनाया और अल्लाह के रास्ते में सरफ़रोशी की मिसालें पेश कीं। दूसरी तरफ़ वह लोग भी थे जो सारी उम्र उन्हीं अँधेरों में ही भटकते रहे और इसी हालत में उन्हें मौत आयी। तो क्या यह दोनों तरह के लोग बराबर हो सकते है?

आयत 123

وَكَذٰلِكَ جَعَلْنَا فِيْ كُلِّ قَرْيَةٍ اَكٰبِرَ مُجْرِمِيْهَا لِيَمْكُرُوْا فِيْهَا ؕ

"और इसी तरह हमने हर बस्ती में बड़े-बड़े मुजरिम खड़े किये ताकि वह उसमें खूब साज़िशें करे।"

यह वही फ़लसफ़ा है जो क़ब्ल अज़ आयत 112 में बयान हुआ है। वहाँ फ़रमाया गया था कि शयातीने इंस व जिन्न को हम खुद ही अम्बिया की दुश्मनी के लिये मुक़र्रर करते हैं। यहाँ पर इससे मिलती-जुलती बात कही गयी कि हम हर बस्ती के अन्दर वहाँ के सरदारों और बड़े-बड़े चौधरियों को ढील देते हैं कि वह हक़ के मुक़ाबले में खड़े हों, लोगों को सीधे रास्ते से रोकें, अपनी चालबाज़ियों और मक्कारियों से हक़परस्तों को आज़माइश में डालें ताकि इस अमल से साहिबे सलाहियत लोगों की सलाहियतें मज़ीद उजागर हों, उनके जौहर खुलें और उनकी ग़ैरते ईमानी को जिला मिले।

وَمَا يَمْكُرُوْنَ اِلَّا بِاَنْفُسِهِمْ وَمَا يَشْعُرُوْنَ ﴿۱۲۳﴾

"हालांकि वह मकर नहीं करते मगर अपनी जानों के साथ, लेकिन उन्हें इसका शऊर नहीं है।"

उन्हें यह शऊर ही नहीं कि उनकी चालबाज़ियों का सारा वबाल तो बिल आख़िर खुद उन्हीं पर पड़ेगा। जैसे हज़रत यासिर और हज़रत सुमैय्या रज़ि. के साथ अबु जहल ने जो कुछ किया था इसका वबाल जब उसके सामने आयेगा तब उसकी आँख खुलेगी और उस वक़्त तो यह आलम होगा कि *"जब आँख खुली गुल की तो मौसम था ख़िज़ां का!"*

आयत 124

وَاِذَا جَآءَتْهُمْ اٰيَةٌ قَالُوْا لَنْ نُّؤْمِنَ حَتّٰى نُؤْتٰى مِثْلَ مَآ اُوْتِيَ رُسُلُ اللّٰهِ ؔۘ

"और जब इनके पास (क़ुरान की) कोई आयत आती है तो कहते हैं कि हम हरगिज़ ईमान नहीं लाएंगे जब तक कि हमें भी

वही चीज़ ना दे दी जाये जो अल्लाह के (दूसरे) रसूलों को दी गयी थी।"

आयाते क़ुरानिया मुख्तलिफ़ अंदाज़ से इनके सामने हक़ाइक़ व रमूज़ पेश करती हैं मगर इन दलाइल और बराहीन का तजज़िया करने और इन्हें मान लेने के बजाय यह लोग फिर वही बात दोहराते हैं कि जैसे पहले अम्बिया की क़ौमों को मौजज़े दिखाये गए थे हमें भी वैसे ही मौजज़ात दिखाये जायें तो तब हम ईमान लाएँगे। इस सिलसिले में हक़ीकत यह है कि अल्लाह तआला ने अपनी हिकमत के मुताबिक़ जैसे मुनासिब समझा हर क़ौम और उम्मत के साथ मामला फ़रमाया। पुरानी उम्मतों को हिस्सी मौजज़े दिखाये गये थे, इसलिये कि वह नौए इंसानियत का दौरे तफ़ूलियत (बचपना) था। जब तक इंसानियत का मज्मुई फ़हम व शऊर हद्दे बलूगत को नहीं पहुँचा था तब तक हिस्सी मौजज़ात का ज़हूर ही मुनासिब था। जैसे बच्चे को बहलाने के लिये खिलौने दिये जाते हैं, लेकिन शऊर की उमर को पहुँच कर उसके लिये अक़ल और हिकमत की तालीम ज़रूरी होती है। लिहाज़ा अब जबकि बनी नौए इंसान बहैसियत मज्मुई संजीदगी और शऊर की उमर को पहुँच चुकी है, इसको हिस्सी और वक़्ती मौजज़ों के बजाय एक ऐसा मौजज़ा दिया जा रहा है जो दायमी भी है और इल्म व हिकमत का मिम्बा व शाहकार भी।

اَللّٰهُ اَعْلَمُ حَيْثُ يَجْعَلُ رِسَالَتَهٗ

"अल्लाह बेहतर जानता है कि वह अपनी रिसालत का काम किस से ले और किस तरह ले!"

سَيُصِيْبُ الَّذِيْنَ اَجْرَمُوْا صَغَارٌ عِنْدَ اللّٰهِ وَعَذَابٌ شَدِيْدٌۢ بِمَا كَانُوْا يَمْكُرُوْنَ ﴿۱۲۴﴾

"अनक़रीब पहुँचेगी उन मुजरिमों (गुनाह-गारों) को बहुत ही ज़िल्लत अल्लाह के यहाँ से और सख्त अज़ाब उनकी चालबाज़ियों के सबब जो वह कर रहे है।"

आयत 125

فَمَنْ يُّرِدِ اللّٰهُ اَنْ يَّهْدِيَهٗ يَشْرَحْ صَدْرَهٗ لِلْاِسْلَامِ ۚ

"तो अल्लाह जिस किसी को हिदायत से नवाज़ना चाहता है, उसके सीने को इस्लाम के लिये खोल देता है।"

यह एक गौरतलब मअनवी हक़ीकत है। "शरह सद्र" अल्लाह की वह नेअमत और ख़ास इनायत है जिसका ज़िक्र अल्लाह तआला ने सूरतुल नशरह की पहली आयत में हुज़ूर ﷺ के लिये एक बहुत बड़े अहसान के तौर पर किया है। {اَلَمْ نَشْرَحْ لَكَ صَدْرَكَ }। लिहाज़ा हर मुस्लमान को इस शरह सद्र के लिये दुआ करनी चाहिये: اَللّٰهُمَّ نَوِّرْ قُلُوْبَنَا بِالْاِيْمَانِ وَاشْرَحْ صُدُوْرَنَا لِلْاِسْلَامِ "ऐ अल्लाह, ऐ हमारे रब! तू हमारे दिलों को नूरे ईमान से मुनव्वर फ़रमा दे और हमारे सीनों को इस्लाम के लिये खोल दे।" यानि अल्लाह तआला से ऐसी बातिनी बसीरत माँगनी चाहिये जिसकी वजह से इस्लाम की हर चीज़ हमें ठीक नज़र आये। और जब एक बंदा-ए-मोमिन में ऐसी बसीरत पैदा हो जाती है तो हर क़दम और हर मोड़ पर उसको अपने अन्दर से एक आवाज़ सुनाई देती है जो उसके हर अमल पर उसकी ताईद करती है। यह इंसान की ऐसी अन्दरूनी कैफ़ियत है जिसमें उसकी फ़ितरते सलीमा और नेकी के जज़्बे की आपस में ख़ुशगवार मुताबक़त पैदा हो जाती है और फिर उसे दीन के किसी हुक्म से किसी क़िस्म की कोई अजनबियत महसूस नहीं होती। बक़ौल ग़ालिब:

देखना तक़रीर की लज़्ज़त कि जो उसने कहा

मैंने यह जाना कि गोया यह भी मेरे दिल में है!

وَمَنْ يُّرِدْ اَنْ يُّضِلَّهٗ يَجْعَلْ صَدْرَهٗ ضَيِّقًا حَرَجًا كَاَنَّمَا يَصَّعَّدُ فِي السَّمَآءِ ؕ

"और जिसको गुमराह करना चाहता है उसके सीने को बिल्कुल तंग कर देता है, घुटा हुआ (वह ऐसे महसूस करता है) गोया उसे आसमान में चढ़ना पड़ रहा है।"

जैसे ऊँचाई पर चढ़ते हुए इंसान की साँस फूल जाती है और उसे महसूस होता है कि उसका दिल शायद धड़क-धड़क कर बाहर ही निकल आयेगा, ऐसे ही अगर अल्लाह की तरफ़ से इंसान को हिदायत की तौफ़ीक़ अता ना हुई हो तो उसके लिये राहे हक़ पर चलना दुनिया का मुश्किल तरीन काम बन जाता है। ज़रा सी कहीं आज़माइश आ जाये तो गोया उसके लिये क़यामत टूट पड़ती है और एक-एक कदम उठाना उसके लिये दूभर हो जाता है। दूसरी तरफ़ वह शख्स जिसको अल्लाह ने शरह सद्र की नेअमत से नवाज़ा है उसके लिये ना सिर्फ़ हक़ को क़ुबूल करना आसान होता है बल्कि इस राह की हर तकलीफ़ और हर मुश्किल को वह शौक और खंदहपेशानी से बर्दाश्त करता है।

كَذٰلِكَ يَجْعَلُ اللّٰهُ الرِّجْسَ عَلَى الَّذِيْنَ لَا يُؤْمِنُوْنَ ﴿۱۲۵﴾

"इस तरह अल्लाह नापाकी मुस्सल्लत कर देता है उन लोगों पर जो ईमान नहीं लाते।"

आयत 126

وَهٰذَا صِرَاطُ رَبِّكَ مُسْتَقِيْمًا ؕ قَدْ فَصَّلْنَا الْاٰيٰتِ لِقَوْمٍ يَّذَّكَّرُوْنَ ﴿۱۲۶﴾

"और यह है तेरे रब का सीधा रास्ता। हमने अपनी आयात ख़ूब तफ़सील से बयान कर दी हैं उन लोगों के लिये जो नसीहत हासिल करना चाहें।"

आयत 127

لَهُمْ دَارُ السَّلٰمِ عِنْدَ رَبِّهِمْ وَهُوَ وَلِيُّهُمْ بِمَا كَانُوْا يَعْمَلُوْنَ ﴿۱۲۷﴾

"उनके लिये सलामती वाला घर है उनके रब के पास और वही उनका मददगार (दोस्त) है, बसबब उनके (नेक) अमाल के।"

"दारुस्सलाम" जन्नत का दूसरा नाम है। उन्होंने अपनी मेहनतों, क़ुर्बानियों, मशक्क़तों और अपने ईसार (त्याग) के सबब अल्लाह की दोस्ती कमाई है और हमेशा के लिये दारुस्सलाम के मुस्तहिक़ ठहरे हैं।

आयत 128

وَيَوْمَ يَحْشُرُهُمْ جَمِيْعًا ۚ يٰمَعْشَرَ الْجِنِّ قَدِ اسْتَكْثَرْتُمْ مِّنَ الْاِنْسِ ۚ

"और जिस दिन वह जमा करेगा उन सबको (और फ़रमाएगा) ऐ जिन्नों की जमाअत! वाक़िअतन तुमने तो इन्सानों में से बहुतों को हथिया लिया।"

वह जो तुम्हारे बड़े जिन्न अज़ाज़ील ने कहा था: {وَلَا تَجِدُ اَكْثَرَهُمْ شٰكِرِيْنَ} (सूरह आराफ़:17) "और तू इनकी अक्सरियत को शुक्र करने वाला नहीं पायेगा।" तो वाक़ई बहुत से इन्सानों को तुमने हथिया लिया है। यह गोया एक तरह की शाबाशी होगी जो अल्लाह की तरफ़ से उनको दी जायेगी।

وَقَالَ اَوْلِيٰٓؤُهُمْ مِّنَ الْاِنْسِ

"और इन्सानों में से जो उनके साथी होंगे वह कहेंगे"

इस पर जिन्नों के साथी इन्सानों की ग़ैरत ज़रा जागेगी कि अल्लाह तआला ने यह क्या कह दिया है कि जिन्नात ने हमें हथिया लिया है, शिकार कर लिया है। इस पर वह बोल उठेंगे:

رَبَّنَا اسْتَمْتَعَ بَعْضُنَا بِبَعْضٍ

"ऐ हमारे परवरदिगार! हम आपस में एक-दूसरे से फ़ायदा उठाते रहे"

हम इनसे अपने काम निकलवाते रहे और यह हमसे मफ़ादात (फ़ायदे) हासिल करते रहे। हमने जिन्नात को अपना मुवक्किल बनाया, इनके ज़रिये से ग़ैब की ख़बरें हासिल कीं और कहानत की दुकानें चमकाईं।

وَّبَلَغْنَآ اَجَلَنَا الَّذِیْٓ اَجَّلْتَ لَنَا ؕ

"और अब हम अपनी इस मुद्दत को पहुँच चुके जो तूने हमारे लिये मुक़र्रर कर दी थी।"

قَالَ النَّارُ مَثْوٰىكُمْ خٰلِدِیْنَ فِیْهَآ اِلَّا مَا شَآءَ اللّٰهُ ؕ

"अल्लाह फ़रमाएगा अब आग है तुम्हारा ठिकाना, तुम इसमें हमेशा-हमेश रहोगे, सिवाय इसके जो अल्लाह चाहे।"

اِنَّ رَبَّكَ حَكِیْمٌ عَلِیْمٌ ﴿۱۲۸﴾

"यक़ीनन आपका रब हकीम और अलीम है।"

आयत 129

وَ كَذٰلِكَ نُوَلِّیْ بَعْضَ الظّٰلِمِیْنَ بَعْضًۢا بِمَا كَانُوْا یَكْسِبُوْنَ ﴿۱۲۹﴾

"और इसी तरह हम ज़ालिमों को एक-दूसरे का साथी बना देते हैं उनकी करतूतों की वजह से।"

आयत 130

یٰمَعْشَرَ الْجِنِّ وَالْاِنْسِ اَلَمْ یَاْتِكُمْ رُسُلٌ مِّنْكُمْ یَقُصُّوْنَ عَلَیْكُمْ اٰیٰتِیْ

"ऐ जिन्नों और इन्सानों की जमाअत! क्या तुम्हारे पास नहीं आ गये थे रसूल तुम्ही में से, जो सुनाते थे तुम्हें मेरी आयात"

अब चूँकि यह बात जिन्न व इंस दोनों को जमा करके कही जा रही है तो इस से यह साबित हुआ कि जो इन्सानों में से रसूल हैं वही जिन्नात के लिये भी रसूल हैं।

وَیُنْذِرُوْنَكُمْ لِقَآءَ یَوْمِكُمْ هٰذَا ؕ قَالُوْا شَهِدْنَا عَلٰۤی اَنْفُسِنَا

"और तुम्हे ख़बरदार करते थे तुम्हारे इस दिन की मुलाक़ात से। वह कहेंगे कि हम गवाह हैं अपनी जानों पर"

यहाँ पर علٰی के मायने मुख़ालिफ़ गवाही के हैं। यानि हम अपनी जानों के खिलाफ़ खुद गवाह हैं।

وَغَرَّتْهُمُ الْحَیٰوةُ الدُّنْیَا وَشَهِدُوْا عَلٰۤی اَنْفُسِهِمْ اَنَّهُمْ كَانُوْا كٰفِرِیْنَ ﴿۱۳۰﴾

"और उन्हें धोखे में डाले रखा दुनियावी ज़िन्दगी ने, और वह खुद गवाही देंगे अपने खिलाफ़ कि वह यक़ीनन कुफ़्र की रविश पर चलते रहे।"

कुरान मजीद में मैदाने हश्र के जो मकालमात आए हैं वह मुख्तलिफ़ आयात में मुख्तलिफ़ क़िस्म के हैं। मसलन यहाँ तो बताया गया है कि वह अपने खिलाफ़ खुद गवाही देंगे कि बेशक हम कुफ़्र करते रहे हैं। मगर इसी सूरत में पीछे हमने पढ़ा है: { ثُمَّ لَمْ تَكُنْ فِتْنَتُهُمْ اِلَّاۤ اَنْ قَالُوْا وَاللّٰهِ رَبِّنَا مَا كُنَّا مُشْرِكِیْنَ } "उस वक़्त उनकी कोई चाल नहीं चल सकेगी सिवाय इसके कि वह अल्लाह की क़समें खा-खा कर कहेंगे कि ऐ हमारे रब हम तो मुशरिक नहीं थे।" चुनाँचे मालूम होता है कि मैदाने हश्र में बहुत से मराहिल होंगे और बेशुमार गिरोह मुवाखज़े के लिये पेश होंगे। यह मुख्तलिफ़ मराहिल में, मुख्तलिफ़ मौक़ों

पर, मुख्तलिफ़ जमाअतों और गिरोहों के साथ होने वाले मुख्तलिफ़ मकालमात नक़ल हुए हैं।

आयत 131

ذٰلِكَ اَنۡ لَّمۡ يَكُنۡ رَّبُّكَ مُهۡلِكَ الۡقُرٰى بِظُلۡمٍ وَّاَهۡلُهَا غٰفِلُوۡنَ ﴿۱۳۱﴾

"यह इसलिये कि आपके रब की यह सुन्नत नहीं है कि वह बस्तियों को बर्बाद कर दे ज़ुल्म के साथ जबकि उसके रहने वाले बेख़बर हों।"

इससे मुराद यह है कि मुख्तलिफ़ क़ौमों की तरफ़ रसूलों को भेजा गया और उन्होंने अपनी क़ौमों में रह कर इन्ज़ार, तज़कीर और तबशीर का फर्ज़ अदा कर दिया। फिर भी अगर उस क़ौम ने क़ुबूले हक़ से इन्कार किया तो तब उन पर अल्लाह का अज़ाब आया। ऐसा नहीं होता कि अचानक किसी बस्ती या क़ौम पर अज़ाब टूट पड़ा हो, बल्कि अल्लाह ने सूरह बनी इसराइल में यह क़ायदा कुल्लिया इस तरह बयान फ़रमाया है: {وَمَا كُنَّا مُعَذِّبِيْنَ حَتّٰى نَبْعَثَ رَسُوْلًا} (आयत 15) यानि वह अज़ाबे इस्तेसाल जिससे किसी क़ौम की जड़ काट दी जाती है और उसे तबाह कर के नस्यम मंसिया कर दिया जता है, वह किसी रसूल की बेअसत के बगैर नहीं भेजा जाता, बल्कि रसूल आकर अल्लाह तआला की तरफ़ से हक़ का हक़ होना और बातिल का बातिल होना बिल्कुल मुबरहन कर देता है। इसके बावजूद भी जो लोग कुफ़्र पर अड़े रहते हैं उनको फिर तबाह व बर्बाद कर दिया जता है।

आयत 132

وَلِكُلٍّ دَرَجٰتٌ مِّمَّا عَمِلُوۡا ؕ

"और हर एक के लिये दरजात हैं उनके अमल के ऐतबार से।"

ज़ाहिर बात है कि सब नेकोकार भी एक जैसे नहीं हो सकते और ना ही सब बदकार एक जैसे हो सकते हैं, बल्कि आमाल के लिहाज़ से मुख्तलिफ़ अफ़राद के मुख्तलिफ़ मक़ामात और मरातिब होते हैं।

وَمَا رَبُّكَ بِغَافِلٍ عَمَّا يَعۡمَلُوۡنَ ﴿۱۳۲﴾

"और आपका रब बेख़बर नहीं है उससे जो यह लोग कर रहे हैं।"

आयत 133

وَرَبُّكَ الۡغَنِىُّ ذُو الرَّحۡمَةِ ؕ

"और आपका रब तो ग़नी है, रहमत वाला है।"

उसे किसी को अज़ाब देकर कोई फ़ायदा नहीं होता और किसी की बंदगी और इताअत से उसका कोई रुका हुआ काम चल नहीं पड़ता। वह इन सब चीज़ों से बेनियाज़ है।

اِنۡ يَّشَاۡ يُذۡهِبۡكُمۡ وَيَسۡتَخۡلِفۡ مِنۡۢ بَعۡدِكُمۡ مَّا يَشَآءُ

"अगर वह चाहे तो तुम सबको ले जाये (ख़त्म कर दे) और तुम्हारे बाद जिन लोगों को चाहे ले आये।"

वह इस पर क़ादिर है कि एक नई मख्लूक़ को तुम्हारा जानशीन बना दे, कोई नई species ले आये। अल्लाह का इख्तियार मुतलक़ है, वह चाहे तो एक नयी नस्ले आदम पैदा कर दे।

كَمَاۤ اَنۡشَاَكُمۡ مِّنۡ ذُرِّيَّةِ قَوۡمٍ اٰخَرِيۡنَ ﴿۱۳۳﴾ؕ

"जिस तरह उसने तुम्हें उठाया है किसी और क़ौम की नस्ल में से।"

जैसे क़ौमे आद अरब की बड़ी ज़बरदस्त और ताक़तवर क़ौम थी, लेकिन जब उसको तबाह बर्बाद कर दिया गया तो उन्ही में से कुछ अहले ईमान लोग जो हज़रत हूद अलै. के साथी थे वहाँ से हिजरत करके चले गये और उनके ज़रिये से बाद में क़ौमे समूद वजूद में आई। फिर क़ौमे समूद को भी

हलाक कर दिया गया और उनमें से बच रहने वाले अहले ईमान से आगे नस्ल चली और मुख्तलिफ़ इलाक़ों में मुख्तलिफ़ क़ौमें आबाद हुईं। चुनाँचे जैसे तुम्हें हमने उठाया है किसी दूसरी क़ौम की नस्ल से, इसी तरीक़े से हम तुम्हें हटा कर किसी और क़ौम को ले आयेंगे।

आयत 134

إِنَّ مَا تُوعَدُونَ لَآتٍ ۙ وَمَا أَنتُم بِمُعْجِزِينَ ﴿١٣٤﴾

"यक़ीनन जिस चीज़ का तुमसे वादा किया जा रहा है (या धमकी दी जा रही है) वह आकर रहेगी, और तुम आजिज़ कर देने वाले नहीं हो।"

तुम अपनी शाज़िशों से अल्लाह को आजिज़ नहीं कर सकते, उसके क़ाबू से बाहर नहीं जा सकते। अल्लाह के तमाम वादे पूरे होकर रहेंगे।

आयत 135

قُلْ يَا قَوْمِ اعْمَلُوا عَلَىٰ مَكَانَتِكُمْ إِنِّي عَامِلٌ ۖ

"कह दीजिये ऐ मेरी क़ौम के लोगों! कर लो जो कुछ कर सकते हो अपनी जगह पर, मैं भी कर रहा हूँ (जो मुझे करना है)।"

यह गोया चैलेंज करने का सा अंदाज़ है कि मुझे तुम लोगों को दावत देते हुए बारह बरस हो गए हैं। तुमने इस दावत के ख़िलाफ़ ऐडी-चोटी का ज़ोर लगाया है, हर-हर तरह से मुझे सताया है, तीन साल तक शअबे बनी हाशिम में महसूर रखा है, मेरे साथियों पर तुम लोगों ने तशद्दुद का हर मुमकिन हरबा आज़माया है। गर्ज़ तुम मेरे ख़िलाफ़ जो कुछ कर सकते थे करते रहे हो, अभी मज़ीद भी जो कुछ तुम कर सकते हो कर लो, जो मेरा फ़र्ज़े मंसबी है वह मैं अदा कर रहा हूँ।

فَسَوْفَ تَعْلَمُونَ مَن تَكُونُ لَهُ عَاقِبَةُ الدَّارِ ۗ إِنَّهُ لَا يُفْلِحُ الظَّالِمُونَ ﴿١٣٥﴾

"तो अनक़रीब तुम्हें मालूम हो जायेगा कि किसके लिये है आक़बत का घर। यक़ीनन ज़ालिम कभी फ़ला नहीं पायेंगे।"

आक़बत की दाइमी कामयाबी किसके लिये है? किसके लिये वहाँ जन्नत है, रूह व रय्हान है और किसके लिये दोज़ख़ का अज़ाब है? यह अनक़रीब तुम लोगों को मालूम हो जायेगा।

आयत 136

وَجَعَلُوا لِلَّهِ مِمَّا ذَرَأَ مِنَ الْحَرْثِ وَالْأَنْعَامِ نَصِيبًا

"और इन्होंने अल्लाह के लिये रखा है ख़ुद उसी की पैदा की हुई खेती और मवेशियों में से एक हिस्सा"

एक बड़े ख़ुदा को मान कर छोटे ख़ुदाओं को उसकी अलुहियत में शरीक कर देना ही दरअसल शिर्क है। इसमें बड़े ख़ुदा का इन्कार नहीं होता। जैसे हिन्दुओं में "महादेव" तो एक ही है जबकि छोटी सतह पर देवी-देवता बेशुमार हैं। इसी तरह अंग्रेज़ी में भी बड़े G से लिखे जाने वाला God हमेशा एक ही रहा है। वह Omnipotent है, Omniscient है, Omnipresent है, وہ عَلٰی کُلِّ شَیْءٍ قَدِیْرٌ है, वह بِکُلِّ شَیْءٍ عَلِیْمٌ है, वह हर जगह मौजूद है। यह उसकी सिफ़ात हैं, यह उसके attributes हैं। लिहाज़ा उसके लिये तो G बड़ा (capital) ही आयेगा, लेकिन छोटे g से लिखे जाने वाले gods और goddesses बेशुमार हैं। इसी तरह अहले अरब का अक़ीदा था कि अल्लाह तो एक ही है, कायनात का ख़ालिक़ भी वही है, लेकिन ये जो देवियाँ और देवता हैं, इनका भी उसकी ख़ुदाई में कुछ दख़ल और इख्तियार है, ये अल्लाह के यहाँ सिफ़ारिश करते हैं, अल्लाह तआला ने अपने इख्तियारात में से कुछ हिस्सा इनको भी सौंप रखा है, लिहाज़ा अगर

इनकी कोई दंडवत की जाये, नज़राने दिये जाएँ, इन्हें खुश किया जाये, तो इससे दुनिया के काम चलते रहते हैं।

अहले अरब के मारूफ़ ज़राए मआश दो ही थे। वह बकरियां पालते थे या खेतीबाड़ी करते थे। अपने अक़ीदे के मुताबिक़ उनका तरीक़ा यह था कि मवेशियों और फ़सल में से वह अल्लाह के नाम का एक हिस्सा निकाल कर सदक़ा करते थे जबकि एक हिस्सा अलग निकाल कर बुतों के नाम पर देते थे। यहाँ तक तो वह अपने तय इन्साफ़ से काम लेते थे कि खेतियों की पैदावार और मवेशियों में से अल्लाह के लिये भी हिस्सा निकाल लिया और अपने छोटे ख़ुदाओं के लिये भी। अब इसके बाद क्या तमाशा होता था वह आगे देखिये:

فَقَالُوْا هٰذَا لِلّٰهِ بِزَعْمِهِمْ وَهٰذَا لِشُرَكَآئِنَا ۚ فَمَا كَانَ لِشُرَكَآئِهِمْ فَلَا يَصِلُ اِلَى اللّٰهِ ۚ وَمَا كَانَ لِلّٰهِ فَهُوَ يَصِلُ اِلٰى شُرَكَآئِهِمْ ؕ

"फिर कहते हैं अपने ख्याल से कि यह तो है अल्लाह के लिये और यह है हमारे शरीकों के लिये। तो जो हिस्सा इनके शरीकों का होता है वह तो अल्लाह को नहीं पहुँच सकता और जो हिस्सा अल्लाह का होता है वह इनके शरीकों तक पहुँच जाता है।"

अब अगर कहीं किसी वक़्त कोई दिक्क़त आ गयी, कोई ज़रुरत पड़ गयी तो अल्लाह के हिस्से में से कुछ निकाल कर काम चला लेते थे मगर अपने बुतों के हिस्से को हाथ नहीं लगाते थे। गोया बुत तो हर वक़्त उनके सरों पर खड़े होते थे। वह समझते थे कि अगर यह बुत नाराज़ हो गए तो फ़ौरन उनकी शामत आ जायेगी, लेकिन अल्लाह तो (मआज़ अल्लाह) ज़रा दूर था, इसलिये उसके हिस्से को अपने इस्तेमाल में लाया जा सकता था। उनकी इस सोच को इस मिसाल से समझा जा सकता है कि हमारे यहाँ देहात में एक आम देहाती पटवारी को डी. सी. के मुक़ाबले में ज़्यादा अहम समझता है। इसलिये कि पटवारी से उसे बराहेरास्त साबक़ा पड़ता है, जबकि डी. सी. की हैसियत का उसे कुछ अंदाज़ा नहीं होता। बहरहाल यह थी वह सूरतेहाल जिसमें उनके शरीकों के लिये मुख्तस किया गया हिस्सा अल्लाह को नहीं पहुँच सकता था, जबकि अल्लाह का हिस्सा उनके शरीकों तक पहुँच जाता था।

سَآءَ مَا يَحْكُمُوْنَ ﴿١٣٦﴾

"क्या ही बुरा फ़ैसला है जो यह करते है।"

आयत 137

وَكَذٰلِكَ زَيَّنَ لِكَثِيْرٍ مِّنَ الْمُشْرِكِيْنَ قَتْلَ اَوْلَادِهِمْ شُرَكَآؤُهُمْ

"और इसी तरह मुज़य्यन कर दिया है बहुत से मुशरिकीन के लिये उनके शुरकाअ ने अपनी औलाद को क़त्ल करना"

इसमें इशारा है मुशरिकीन के उन ऐतक़ादात (आस्थाओं) की तरफ़ जिनके तहत वह अपने बच्चों को जिन्नों या मुख्तलिफ़ बुतों के नाम पर क़ुर्बान कर देते थे। आज भी हिन्दुस्तान में इस तरह के वाक़िआत सुनने में आते हैं कि किसी ने अपने बच्चे को देवी को भेंट चढ़ा दिया।

لِيُرْدُوْهُمْ وَلِيَلْبِسُوْا عَلَيْهِمْ دِيْنَهُمْ ؕ

"ताकि वह उन्हें बरबाद करें और उनके दीन को इन पर मुश्तबा (doubtful) कर दें।"

وَلَوْ شَآءَ اللّٰهُ مَا فَعَلُوْهُ فَذَرْهُمْ وَمَا يَفْتَرُوْنَ ﴿١٣٧﴾

"और अगर अल्लाह चाहता तो वह यह सब कुछ ना कर सकते, तो छोड़ दीजिये इनको भी और उसको भी जो यह इफ़तरापरदाज़ी (बदनामी) कर रहे है।"

दीन को मुश्तबा करने का एक तरीक़ा यह भी है कि ऐसे अक़ाइद और ऐसी चीज़ें भी दीन में शामिल कर दी जाएँ जिनका दीन से दूर का भी वास्ता

नहीं है। यह क़त्ले औलाद भी इसकी मिसाल है। ज़ाहिर है यह सब कुछ वह दीन और मज़हब के नाम पर ही करते थे। फ़रमाया कि उन्हें छोड़ दें कि अपनी इफ़तरापरदाज़ियों (slanders) में लगे रहें।

आयत 138

وَقَالُوْا هٰذِهٖٓ اَنْعَامٌ وَّحَرْثٌ حِجْرٌ ڰ لَّا يَطْعَمُهَآ اِلَّا مَنْ نَّشَاۗءُ بِزَعْمِهِمْ

"और कहते हैं कि यह जानवर और यह खेती ममनूअ (probihited) हैं, इनको नहीं खा सकते मगर वही जिनके बारे में हम चाहें, अपने गुमान के मुताबिक"

यानि यह सारी खुद साख्ता पाबन्दियाँ वह बज़अमे ख्वेश दुरुस्त समझते थे।

وَاَنْعَامٌ حُرِّمَتْ ظُهُوْرُهَا وَاَنْعَامٌ لَّا يَذْكُرُوْنَ اسْمَ اللّٰهِ عَلَيْهَا افْتِرَاۗءً عَلَيْهِ

"और कुछ चौपाये हैं जिनकी पीठें हराम ठहराई गयी हैं, और कुछ चौपाये हैं जिन पर वह अल्लाह का नाम नहीं लेते, यह सब कुछ झूट गढ़ते हैं उस पर।"

यानि अपने मुशरिकाना तोहमात के तहत बाज़ जानवरों को सवारी और बार बरदारी के लिये ममनूअ क़रार देते थे और कुछ हैवानात के बारे में तय कर लेते थे कि इनको जब ज़िबह करना है तो अल्लाह का नाम हरगिज़ नहीं लेना। लिहाज़ा इससे पहले आयत 121 में जो हुक्म आया था कि मत खाओ उस चीज़ को जिस पर अल्लाह तआला का नाम ना लिया जाये वह दरअसल उनके इस अक़ीदे और रस्म के बारे में था, वह आम हुक्म नहीं था।

سَيَجْزِيْهِمْ بِمَا كَانُوْا يَفْتَرُوْنَ ١٣٨

"अल्लाह अनक़रीब उन्हें सज़ा देगा उनके इस इफ़्तरा की।"

यह झूठी चीज़ें जो इन्होंने अल्लाह के बारे में गढ़ ली हैं, अल्लाह ज़रूर इन्हें इस झूठ की सजा देगा।

आयत 139

وَقَالُوْا مَا فِيْ بُطُوْنِ هٰذِهِ الْاَنْعَامِ خَالِصَةٌ لِّذُكُوْرِنَا وَمُحَرَّمٌ عَلٰٓي اَزْوَاجِنَا ۚ

"और वह कहते हैं जो कुछ इन चौपायों के पेटों में है वह ख़ास हमारे मर्दों के लिये है और हमारी औरतों पर वह हराम है।"

यानि किसी हामला मादा जानवर (ऊँटनी या बकरी वगैरह) के पेट में जो बच्चा है उसका गोश्त सिर्फ़ मर्दों के लिये होगा, औरतों के लिये उसका खाना जायज़ नहीं है।

وَاِنْ يَّكُنْ مَّيْتَةً فَهُمْ فِيْهِ شُرَكَاۗءُ ۭ سَيَجْزِيْهِمْ وَصْفَهُمْ ۭ اِنَّهٗ حَكِيْمٌ عَلِيْمٌ ١٣٩

"और अगर वह मुर्दा हो तो फिर वह सब उसमें हिस्सेदार होंगे। अल्लाह अनक़रीब उन्हें सज़ा देगा उनकी इन बातों की जो उन्होंने गढ़ली हैं, वह यक़ीनन हकीम और अलीम है।"

इन सारी रस्मों और खुद साख्ता अक़ाइद के बारे में वह दावा करते थे कि यह हमारी शरीअत है जो हज़रत इब्राहीम अलै. से चली आ रही है और हमारे आबा व अजदाद भी इसी पर अमल करते थे।

आयत 140

قَدْ خَسِرَ الَّذِيْنَ قَتَلُوْٓا اَوْلَادَهُمْ سَفَهًۢا بِغَيْرِ عِلْمٍ وَّحَرَّمُوْا مَا رَزَقَهُمُ اللّٰهُ افْتِرَاۗءً عَلَى اللّٰهِ ۭ

"यक़ीनन ना मुराद हुए वह लोग जिन्होंने अपनी औलाद को क़त्ल किया बेवक़ूफ़ी से, बग़ैर इल्म के, और उन्होंने हराम कर लिया (अपने ऊपर) वह रिज़्क़ जो अल्लाह ने उन्हें दिया था अल्लाह पर इफ़तरा करते हुए।"

यानि इन सारी गलत रसूमात का इंतसाब (दावा) वह लोग अल्लाह के नाम करते थे। दूसरी तरफ़ वह बुतों के नाम पर क़ुर्बानियाँ देते और स्थानों पर नज़राने भी चढ़ाते थे। इसी तरह के नज़राने वह अल्लाह के नाम पर भी देते थे। यह सारे मामलात उनके यहाँ अल्लाह तआला और बुतों के लिये मुश्तरका (संयुक्त) तौर पर चल रहे थे। इस तरह उन्होंने सारा दीन मुश्तबा और गडमड कर दिया था।

قَدْ ضَلُّوْا وَمَا كَانُوْا مُهْتَدِيْنَ ﴿١٤٠﴾ۧ

"वह गुमराह हो चुके हैं और अब हिदायत पर आने वाले नहीं हैं।"

आयत 141 से 144 तक

وَهُوَ الَّذِيْٓ اَنْشَاَ جَنّٰتٍ مَّعْرُوْشٰتٍ وَّغَيْرَ مَعْرُوْشٰتٍ وَّالنَّخْلَ وَالزَّرْعَ مُخْتَلِفًا
اُكُلُهٗ وَالزَّيْتُوْنَ وَالرُّمَّانَ مُتَشَابِهًا وَّغَيْرَ مُتَشَابِهٍ ۭ كُلُوْا مِنْ ثَمَرِهٖٓ اِذَآ اَثْمَرَ وَاٰتُوْا
حَقَّهٗ يَوْمَ حَصَادِهٖ ڮ وَلَا تُسْرِفُوْا ۭ اِنَّهٗ لَا يُحِبُّ الْمُسْرِفِيْنَ ﴿١٤١﴾ۙ وَمِنَ الْاَنْعَامِ
حَمُوْلَةً وَّفَرْشًا ۭ كُلُوْا مِمَّا رَزَقَكُمُ اللّٰهُ وَلَا تَتَّبِعُوْا خُطُوٰتِ الشَّيْطٰنِ ۭ اِنَّهٗ لَكُمْ عَدُوٌّ
مُّبِيْنٌ ﴿١٤٢﴾ۙ ثَمٰنِيَةَ اَزْوَاجٍ ۚ مِنَ الضَّاْنِ اثْنَيْنِ وَمِنَ الْمَعْزِ اثْنَيْنِ ۭ قُلْ ءٰۗالذَّكَرَيْنِ
حَرَّمَ اَمِ الْاُنْثَيَيْنِ اَمَّا اشْتَمَلَتْ عَلَيْهِ اَرْحَامُ الْاُنْثَيَيْنِ ۭ نَبِّــــُٔـوْنِيْ بِعِلْمٍ اِنْ
كُنْتُمْ صٰدِقِيْنَ ﴿١٤٣﴾ۙ وَمِنَ الْاِبِلِ اثْنَيْنِ وَمِنَ الْبَقَرِ اثْنَيْنِ ۭ قُلْ ءٰۗالذَّكَرَيْنِ حَرَّمَ
اَمِ الْاُنْثَيَيْنِ اَمَّا اشْتَمَلَتْ عَلَيْهِ اَرْحَامُ الْاُنْثَيَيْنِ ۭ اَمْ كُنْتُمْ شُهَدَاۗءَ اِذْ
وَصّٰىكُمُ اللّٰهُ بِهٰذَا ۚ فَمَنْ اَظْلَمُ مِمَّنِ افْتَرٰى عَلَي اللّٰهِ كَذِبًا لِّيُضِلَّ النَّاسَ بِغَيْرِ
عِلْمٍ ۭ اِنَّ اللّٰهَ لَا يَهْدِي الْقَوْمَ الظّٰلِمِيْنَ ﴿١٤٤﴾ۧ

आयत 141

وَهُوَ الَّذِيْٓ اَنْشَاَ جَنّٰتٍ مَّعْرُوْشٰتٍ وَّغَيْرَ مَعْرُوْشٰتٍ

"और वही है (अल्लाह) जिसने पैदा किये बाग़ात वह भी जो टहनियों पर चढ़ाये जाते हैं और वह भी जो नहीं चढ़ाये जाते"

"معروشات" के ज़ुमरे में बेल नुमा पौधे आते हैं, जिनका अपना तना नहीं होता जिस पर खुद वह खड़े हो सकें। इसलिये ऐसे पौधों को सहारा देकर खड़ा करना पड़ता है, जैसे अंगूर की बेल वगैरह। दूसरी तरफ "غیر معروشات" में आम दरख्त शामिल हैं जो खुद अपने मज़बूत तने पर खड़े होते हैं, जैसे अनार या आम का दरख्त है।

وَّالنَّخْلَ وَالزَّرْعَ مُخْتَلِفًا اُكُلُهٗ وَالزَّيْتُوْنَ وَالرُّمَّانَ مُتَشَابِهًا وَّغَيْرَ مُتَشَابِهٍ ۭ

"और खजूर और खेती, जिसके ज़ायक़े मुख्तलिफ़ हैं, और ज़ैतून और अनार, एक-दूसरे से मिलते-जुलते भी और मुख्तलिफ़ भी।"

यह अल्लाह तआला की सनाई की मिसालें हैं कि उसने मुख्तलिफ़ अल नौ दरख्त, खेतियाँ और फ़ल पैदा किये, जो आपस में मिलते-जुलते भी हैं और मुख्तलिफ़ भी। जैसे Citrus Family के फलों में कैनोए, फ्रूटर और माल्टा वगैरह शामिल हैं। बुनियादी तौर पर यह सब एक ही क़िस्म या खानदान से ताल्लुक़ रखते हैं और शक्ल, जायक़ा वगैरह में एक-दूसरे के मुशाबेह होने के बावजूद सबकी अपनी-अपनी अलग पहचान है।

كُلُوا مِن ثَمَرِهِ إِذَا أَثْمَرَ وَآتُوا حَقَّهُ يَوْمَ حَصَادِهِ ۖ

"खाया करो उनके फलों में से जबकि वह फ़ल दें और अल्लाह का हक़ अदा करो उनके काटने (और तोड़ने) के दिन"

यानि जैसे ज़मीन की पैदावार में से उश्र का अदा करना फ़र्ज़ है, ऐसे ही इन फ़लों पर भी ज़कात देने का हुक्म है। लिहाज़ा खेती और फ़लों की पैदावार में से अल्लाह तआला का हक़ निकाल दिया करो।

وَلَا تُسْرِفُوا ۚ إِنَّهُ لَا يُحِبُّ الْمُسْرِفِينَ ﴿١٤١﴾

"और बेजा (फ़ुज़ूल) खर्च ना करो, यक़ीनन अल्लाह को बेजा खर्च करने वाले पसंद नहीं हैं।"

आयत 142

وَمِنَ الْأَنْعَامِ حَمُولَةً وَفَرْشًا ۚ

"और चौपायों में से (उसने पैदा किये हैं) कुछ बोझ उठाने वाले और कुछ ज़मीन से लगे हुए।"

حَمُوْلَة वह जानवर हैं जो क़द-काठ और डील-डौल में बड़े-बड़े हैं और जिनसे बार-बरदारी का काम लिया जा सकता है, मसलन घोड़ा, खच्चर, ऊँट वगैरह। इनके बरअक्स कुछ ऐसे जानवर हैं जो इस तरह की ख़िदमत के अहल नहीं हैं और छोटी जसामत की वजह से इसतआरतन उन्हें (फर्श) ज़मीन से मंसूब किया गया है, गोया ज़मीन से लगे हुए हैं, मसलन भेड़-बकरी वगैरह। यह हर तरह के जानवर अल्लाह तआला ने इन्सानों के लिये पैदा किये हैं।

كُلُوا مِمَّا رَزَقَكُمُ اللَّهُ وَلَا تَتَّبِعُوا خُطُوَاتِ الشَّيْطَانِ ۚ إِنَّهُ لَكُمْ عَدُوٌّ مُّبِينٌ ﴿١٤٢﴾

"खाओ उसमें से जो अल्लाह ने तुम्हें रिज़्क़ दिया है और शैतान के नक्शेकदम क़दम की पैरवी ना करो, यक़ीनन वह तुम्हारा खुला दुश्मन है।"

आयत 143

ثَمَانِيَةَ أَزْوَاجٍ ۖ

"यह आठ क़िस्म के चौपाये हैं (जो तुम्हारे यहाँ आम तौर पर पाए जाते हैं)।"

यह उस बात का जवाब है जो उन्होंने हामला मादाओं के बारे में कही थी कि उनके पेटों में जो बच्चे हैं उनका गोश्त सिर्फ़ मर्द ही खा सकते हैं, जबकि औरतों पर यह हराम है। हाँ अगर मरा हुआ बच्चा पैदा हो तो उसका गोश्त मर्दों के साथ औरतें भी खा सकती हैं।

مِنَ الضَّأْنِ اثْنَيْنِ وَمِنَ الْمَعْزِ اثْنَيْنِ ۗ

"भेड़ में से दो (नर व मादा) और बकरी में से दो (नर व मादा)।"

قُلْ آلذَّكَرَيْنِ حَرَّمَ أَمِ الْأُنْثَيَيْنِ أَمَّا اشْتَمَلَتْ عَلَيْهِ أَرْحَامُ الْأُنْثَيَيْنِ ۖ

"(ऐ नबी ﷺ) इनसे पूछिये कि अल्लाह ने इन दोनों मुज़क्करों को हराम किया है या दोनों मौअन्सों को? या जो कुछ इन दोनों मौअन्सों के रहमों में है (उसे हराम किया है)?"

गौरतलब नुक्ता है कि इसमें हुरमत आखिर कहाँ से आई है। अल्लाह ने इनमें से किसको हराम किया है? नर को, मादा को, या बच्चे को? फिर यह कि अगर कोई शय हराम है तो सबके लिये है और अगर हराम नहीं है तो किसी

के लिये भी नहीं है। यह जो तुमने नये-नये क़वानीन बना लिये हैं वह कहाँ से ले आये हो?

نَبِّـُٔوْنِيْ بِعِلْمٍ اِنْ كُنْتُمْ صٰدِقِيْنَ ﴿١٤٣﴾

"मुझे बताओ किसी भी सनद के साथ अगर तुम सच्चे हो।"

आयत 144

وَمِنَ الْاِبِلِ اثْنَيْنِ وَمِنَ الْبَقَرِ اثْنَيْنِ ۭ قُلْ ءٰۗالذَّكَرَيْنِ حَرَّمَ اَمِ الْاُنْثَيَيْنِ اَمَّا اشْتَمَلَتْ عَلَيْهِ اَرْحَامُ الْاُنْثَيَيْنِ ۭ

"और (इसी तरह) ऊँट में से दो (नर और मादा), और गाय में से दो (नर और मादा)। इनसे पूछिये क्या उसने इन दोनों नरों को हराम किया है या दोनों मादाओं को? या जो कुछ इन मादाओं के रहमों में है (उसे हराम किया है)?"

اَمْ كُنْتُمْ شُهَدَاۗءَ اِذْ وَصّٰىكُمُ اللّٰهُ بِهٰذَا ۚ

"क्या तुम मौजूद थे जब अल्लाह ने तुम्हें यह नसीहतें कीं?"

فَمَنْ اَظْلَمُ مِمَّنِ افْتَرٰى عَلَي اللّٰهِ كَذِبًا لِّيُضِلَّ النَّاسَ بِغَيْرِ عِلْمٍ ۭ

"तो उससे बढ़ कर ज़ालिम कौन होगा जो झूठ गढ़ कर अल्लाह की तरफ़ मंसूब कर दे ताकि लोगों को गुमराह करे बगैर किसी इल्म के।"

اِنَّ اللّٰهَ لَا يَهْدِي الْقَوْمَ الظّٰلِمِيْنَ ﴿١٤٤﴾

"यक़ीनन अल्लाह ऐसे जालिमों को राहयाब नहीं करेगा।"

आयत 145 से 150 तक

قُلْ لَّآ اَجِدُ فِيْ مَآ اُوْحِيَ اِلَيَّ مُحَرَّمًا عَلٰي طَاعِمٍ يَّطْعَمُهٗٓ اِلَّآ اَنْ يَّكُوْنَ مَيْتَةً اَوْ دَمًا مَّسْفُوْحًا اَوْ لَحْمَ خِنْزِيْرٍ فَاِنَّهٗ رِجْسٌ اَوْ فِسْقًا اُهِلَّ لِغَيْرِ اللّٰهِ بِهٖ ۚ فَمَنِ اضْطُرَّ غَيْرَ بَاغٍ وَّلَا عَادٍ فَاِنَّ رَبَّكَ غَفُوْرٌ رَّحِيْمٌ ﴿١٤٥﴾ وَعَلَي الَّذِيْنَ هَادُوْا حَرَّمْنَا كُلَّ ذِيْ ظُفُرٍ ۚ وَمِنَ الْبَقَرِ وَالْغَنَمِ حَرَّمْنَا عَلَيْهِمْ شُحُوْمَهُمَآ اِلَّا مَا حَمَلَتْ ظُهُوْرُهُمَآ اَوِ الْحَوَايَآ اَوْ مَا اخْتَلَطَ بِعَظْمٍ ۭ ذٰلِكَ جَزَيْنٰهُمْ بِبَغْيِهِمْ ۠ وَاِنَّا لَصٰدِقُوْنَ ﴿١٤٦﴾ فَاِنْ كَذَّبُوْكَ فَقُلْ رَّبُّكُمْ ذُوْ رَحْمَةٍ وَّاسِعَةٍ ۚ وَلَا يُرَدُّ بَاْسُهٗ عَنِ الْقَوْمِ الْمُجْرِمِيْنَ ﴿١٤٧﴾ سَيَقُوْلُ الَّذِيْنَ اَشْرَكُوْا لَوْ شَاۗءَ اللّٰهُ مَآ اَشْرَكْنَا وَلَآ اٰبَاۗؤُنَا وَلَا حَرَّمْنَا مِنْ شَيْءٍ ۭ كَذٰلِكَ كَذَّبَ الَّذِيْنَ مِنْ قَبْلِهِمْ حَتّٰى ذَاقُوْا بَاْسَنَا ۭ قُلْ هَلْ عِنْدَكُمْ مِّنْ عِلْمٍ فَتُخْرِجُوْهُ لَنَا ۭ اِنْ تَتَّبِعُوْنَ اِلَّا الظَّنَّ وَاِنْ اَنْتُمْ اِلَّا تَخْرُصُوْنَ ﴿١٤٨﴾ قُلْ فَلِلّٰهِ الْحُجَّةُ الْبَالِغَةُ ۚ فَلَوْ شَاۗءَ لَهَدٰىكُمْ اَجْمَعِيْنَ ﴿١٤٩﴾ قُلْ هَلُمَّ شُهَدَاۗءَكُمُ الَّذِيْنَ يَشْهَدُوْنَ اَنَّ اللّٰهَ حَرَّمَ هٰذَا ۚ فَاِنْ شَهِدُوْا فَلَا تَشْهَدْ مَعَهُمْ ۚ وَلَا تَتَّبِعْ اَهْوَاۗءَ الَّذِيْنَ كَذَّبُوْا بِاٰيٰتِنَا وَالَّذِيْنَ لَا يُؤْمِنُوْنَ بِالْاٰخِرَةِ وَهُمْ بِرَبِّهِمْ يَعْدِلُوْنَ ﴿١٥٠﴾ ۧ

आयत 145

قُلْ لَّآ اَجِدُ فِيْ مَآ اُوْحِيَ اِلَيَّ مُحَرَّمًا عَلٰي طَاعِمٍ يَّطْعَمُهٗٓ

"कह दीजिये मैं तो नहीं पाता इस (क़ुरान) में जो मेरी तरफ़ वही किया गया है, कोई चीज़ हराम किसी खाने वाले पर कि वह उसे खाता हो"

यहाँ फिर वह क़ानून दोहराया जा रहा है कि शरीअत में किन चीज़ों को हराम किया गया है।

"सिवाय इसके कि वह मुर्दार हो" — اِلَّاۤ اَنۡ يَّكُوۡنَ مَيۡتَةً

इस मुर्दार की क़िस्में { الۡمُنۡخَنِقَةُ وَالۡمَوۡقُوۡذَةُ وَالۡمُتَرَدِّيَةُ} और तफ़सील सूरतुल मायदा की आयत 3 में हम पढ़ चुके हैं। यानि जानवर किसी भी तरह से मर गया हो वह मुर्दार के ज़ुमरे में शुमार होगा। लेकिन अगर मरने से पहले उसे ज़िबह कर लिया जाये और ज़िबह करने से उसके जिस्म से खून निकल जाये तो उसका खाना जायज़ होगा।

"या खून हो बहता हुआ" — اَوۡ دَمًا مَّسۡفُوۡحًا

यानि एक खून तो वह है जो मज़बूह जानवर के जिस्म के सुकेड और खिंचाव (rigormortis) की इन्तहाई कैफ़ियत के बावजूद भी किसी ना किसी मिक़दार में गोश्त में रह जाता है। इसी तरह तिली के खून का मामला है। लिहाज़ा यह चीज़ें हराम नहीं हैं, लकिन जो खून बहाया जा सकता हो और जो ज़िबह करने के बाद जानवर के जिस्म से निकल कर बह गया हो वह खून हराम है।

"या खंज़ीर का गोश्त कि वह तो है ही नापाक, या कोई नाजायज़ (गुनाह की) शय, जिस पर अल्लाह के सिवा किसी और का नाम पुकारा गया हो।" — اَوۡ لَحۡمَ خِنۡزِيۡرٍ فَاِنَّهٗ رِجۡسٌ اَوۡ فِسۡقًا اُهِلَّ لِغَيۡرِ اللّٰهِ بِهٖ ۚ

यानि सुअर के गोश्त की वजह-ए-हुरमत तो यह है कि वह असलन नापाक है। इसके अलावा कुछ चीज़ों की हुरमत हुक्मी है, जो फ़िस्क़ (अल्लाह की नाफ़रमानी) के सबब लाज़िम आती है। चुनाँचे {اُهِلَّ لِغَيۡرِ اللّٰهِ بِهٖ} इसी वजह से हराम क़रार पाया, यानि जिस पर गैरुल्लाह का नाम लिया गया हो। इस हुक्म में वह क़ुर्बानी भी शामिल है जो अल्लाह के अलावा किसी और के तक़र्रुब की नीयत पर दी गयी हो। मसलन ऐसा जानवर जो किसी क़ब्र या किसी ख़ास स्थान पर जाकर ज़िबह किया जाये, अगरचे उसे ज़िबह करते वक़्त अल्लाह ही का नाम लिया जाता है मगर दिल के अन्दर किसी गैरुल्लाह के तक़र्रुब की ख्वाहिश का चोर मौजूद होता है।

"लेकिन (इन सूरतों में भी अगर) कोई मजबूर हो जाये, ना तो उसके अन्दर इनकी तलब हो और ना हद से बढ़े, तो यक़ीनन आपका रब बख्शने वाला और रहम फ़रमाने वाला है।" — فَمَنِ اضۡطُرَّ غَيۡرَ بَاغٍ وَّلَا عَادٍ فَاِنَّ رَبَّكَ غَفُوۡرٌ رَّحِيۡمٌ ﴿۱۴۵﴾

किसी गैर मामूली सूरते हाल में इन हराम चीज़ों में से कुछ खा कर अगर जान बचाई जा सके तो मशरूत तौर पर इसकी इजाज़त दी गयी है।

आयत 146

"और हमने उन पर जो यहूदी हुए थे हराम कर दिये थे एक नाख़ून (खुर) वाले तमाम जानवर।" — وَعَلَى الَّذِيۡنَ هَادُوۡا حَرَّمۡنَا كُلَّ ذِىۡ ظُفُرٍ ۚ

कुछ जानवरों के पाँव फटे हुए होते हैं, जैसे गाय, बकरी वगैरह, जबकि कुछ जानवरों का एक ही पाँव (खुर) होता है। ऐसे एक खुर वाले जानवर मसलन घोड़ा, गधा वगैरह यहूदियों पर हराम कर दिये गये थे। जैसा कि हम पढ़ आये हैं, यहूदियों पर जो चीज़ें हराम की गयीं थीं, उनमें से बाज़ तो असलन हराम थीं मगर कुछ चीज़ें उनकी शरारतों और नाफ़रमानियों की वजह से बतौर सज़ा उनके लिये हराम कर दी गयी थीं।

"और गाय और बकरी (वगैरह) में से हमने हराम कर दी थी उन पर उनकी चर्बी सिवाय उसके कि जो उनकी पीठ या अंतड़ियों या हड्डियों के साथ लगी हुई हो।"

وَمِنَ الْبَقَرِ وَالْغَنَمِ حَرَّمْنَا عَلَيْهِمْ شُحُوْمَهُمَآ اِلَّا مَا حَمَلَتْ ظُهُوْرُهُمَآ اَوِ الْحَوَايَآ اَوْ مَا اخْتَلَطَ بِعَظْمٍ ؕ

"यह हमने उन्हें सजा दी थी उनकी सरकशी की वजह से"

ذٰلِكَ جَزَيْنٰهُمْ بِبَغْيِهِمْ ۖ

यानि इस क़िस्म के जानवरों की आम खुली चर्बी उनके लिये हराम थी। लेकिन यह हुक्म आसमानी शरीअत का मुस्तक़िल हिस्सा नहीं था, बल्कि उनकी शरारतों और नाफ़रमानियों की वजह से यह तंगी उन पर बतौर सज़ा की गयी थी।

"और यक़ीनन हम सच कहने वाले हैं।"

وَاِنَّا لَصٰدِقُوْنَ ﴿۱۴۶﴾

आयत 147

"तो अगर यह लोग आप ﷺ को झुठला दें तो कह दीजिये कि तुम्हारा रब बड़ी वसीअ रहमत वाला है।"

فَاِنْ كَذَّبُوْكَ فَقُلْ رَّبُّكُمْ ذُوْ رَحْمَةٍ وَّاسِعَةٍ ۚ

यानि इस जुर्म की पादाश में वह तुम्हें फ़ौरन नहीं पकड रहा और ना फ़ौरन मौज़्ज़ा दिखा कर तुम्हारी मुद्दत या मोहलते अमल ख़त्म करने जा रहा है, बल्कि उसकी रहमत का तक़ाज़ा यह है कि अभी तुम्हें मज़ीद मोहलत दी जाये।

"और उसका अज़ाब टाला नहीं जा सकेगा मुजरिमों की क़ौम से।"

وَلَا يُرَدُّ بَاْسُهٗ عَنِ الْقَوْمِ الْمُجْرِمِيْنَ ﴿۱۴۷﴾

जब उसकी तरफ से गिरफ्त होगी तो {اِنَّ بَطْشَ رَبِّكَ لَشَدِيْدٌ} (अल् बुरूज:12) के मिस्दाक़ यक़ीनन बड़ी सख्त होगी और फिर किसी की मजाल ना होगी कि उस गिरफ़्त की सख्ती को टाल सके।

आयत 148

"अनक़रीब कहेंगे यह मुशरिक लोग कि अगर अल्लाह चाहता तो ना हम शिर्क करते ना हमारे आबा व अजदाद और ना ही हम किसी चीज़ को हराम ठहराते।"

سَيَقُوْلُ الَّذِيْنَ اَشْرَكُوْا لَوْ شَآءَ اللّٰهُ مَآ اَشْرَكْنَا وَلَآ اٰبَآؤُنَا وَلَا حَرَّمْنَا مِنْ شَيْءٍ ؕ

यानि मुशरिकीने मक्का इस तरह के दलाइल देते थे कि जिन चीज़ों के बारे में हमें बताया जा रहा है कि वह हराम नहीं हैं और हमने ख्वाह मा ख्वाह उनको हराम ठहरा दिया है, ऐसा करना हमारे लिये मुमकिन नहीं था। आखिर अल्लाह तो عَلٰى كُلِّ شَيْءٍ قَدِيْرٌ, उसका तो हमारे इरादे और अमल पर कुल्ली इख़्तियार था। लिहाज़ा यह सब काम अगर गलत थे तो वह हमें यह काम ना करने देता और गलत रास्ता इख़्तियार करने से हमें रोक देता। इस तरह की कट हुज्जतियाँ करना इंसान की फ़ितरत है।

"इसी तरह झुठलाया था उन लोगों ने जो इनसे पहले थे यहाँ तक कि उन्होंने हमारे अज़ाब का मज़ा चख लिया।"

كَذٰلِكَ كَذَّبَ الَّذِيْنَ مِنْ قَبْلِهِمْ حَتّٰى ذَاقُوْا بَاْسَنَا ؕ

قُلْ هَلْ عِنْدَكُمْ مِّنْ عِلْمٍ فَتُخْرِجُوْهُ لَنَا ۭ اِنْ تَتَّبِعُوْنَ اِلَّا الظَّنَّ وَاِنْ اَنْتُمْ اِلَّا تَخْرُصُوْنَ ۝۱۴۸

"(आप ﷺ इनसे) कहिये कि क्या तुम्हारे पास कोई सनद है जिसे तुम हमारे सामने पेश कर सको? तुम तो महज़ गुमान की पैरवी कर रहे हो और सिर्फ़ अंदाज़ों और अटकल की बातें करते हो।"

आयत 149

قُلْ فَلِلّٰهِ الْحُجَّةُ الْبَالِغَةُ ۚ

"कह दीजिये कि बस अल्लाह के हक़ में साबित हो चुकी है पूरी-पूरी पहुँच जाने वाली हुज्जत।"

तुम्हारी इस कट हुज्जती के मुक़ाबले में हक़ीक़त तक पहुँची हुई हुज्जत सिर्फ़ अल्लाह की है। उसने हर तरह से तुम पर इत्मामे हुज्जत कर दिया है, तुम्हारी हर नामाक़ूल बात को माक़ूल तरीक़े से रद्द कर दिया है, मुख्तलिफ़ अंदाज़ से तुम्हें हर बात समझा दी है। इमामुल हिन्द शाह वलीउल्लाह देहलवी रहि. ने अपनी शहरा-ए-आफ़ाक़ किताब "हुज्जतुलाह अल् बालगा" का नाम इसी आयत से अखज़ किया है।

فَلَوْ شَاۗءَ لَهَدٰىكُمْ اَجْمَعِيْنَ ۝۱۴۹

"पस अगर वह चाहता तो तुम सबको हिदायत पर ले आता।"

अगर अल्लाह के पेशे नज़र सबको नेक बनाना ही मक़सूद होता तो आने वाहिद में तुम सबको अबु बक्र सिद्दीक़ रज़ि. जैसा नेक बना देता, लेकिन उसने दुनिया का यह मामला अमल और इख़्तियार के तहत रखा है, और इसका मक़सद सूरतुल मुल्क (आयत 2) में इस तरह बयान किया गया है: {خَلَقَ الْمَوْتَ وَالْحَيٰوةَ لِيَبْلُوَكُمْ اَيُّكُمْ اَحْسَنُ عَمَلًا} "उसने मौत व हयात को पैदा ही इसलिये किया है कि तुम्हें आज़माये और जाँचे कि तुम में से कौन है जो नेक अमल इख़्तियार करता है।"

आयत 150

قُلْ هَلُمَّ شُهَدَاۗءَكُمُ الَّذِيْنَ يَشْهَدُوْنَ اَنَّ اللّٰهَ حَرَّمَ هٰذَا ۚ

"कहिये ज़रा लाओ तो सही अपने वह गवाह जो यह गवाही दे सकें कि अल्लाह ने इन चीज़ों को हराम किया है।"

क्या तुम्हारे पास कोई किताब या इल्मी सनद मौजूद है जिसे तुम अपने मौक़फ़ के हक़ में बतौर गवाही पेश कर सको? अगर इस तरह की कोई ठोस शहादत है तो उसे हमारे सामने पेश करो।

فَاِنْ شَهِدُوْا فَلَا تَشْهَدْ مَعَهُمْ ۚ

"पस अगर यह लोग (कट हुज्जती में) गवाही दे भी दें तो आप ﷺ इनके साथ गवाही मत दीजिये।"

وَلَا تَتَّبِعْ اَهْوَاۗءَ الَّذِيْنَ كَذَّبُوْا بِاٰيٰتِنَا وَالَّذِيْنَ لَا يُؤْمِنُوْنَ بِالْاٰخِرَةِ وَهُمْ بِرَبِّهِمْ يَعْدِلُوْنَ ۝۱۵۰

"और मत पैरवी कीजिये उन लोगों की ख्वाहिशात की जिन्होंने हमारी आयात को झुठला दिया है और जो आख़िरत पर ईमान नहीं रखते, और वही हैं जो दूसरों को अपने रब के बराबर ठहराते हैं।"

इस सूरह मुबारका की पहली आयत भी { ثُمَّ الَّذِيْنَ كَفَرُوْا بِرَبِّهِمْ يَعْدِلُوْنَ} के अल्फ़ाज़ पर ख़त्म हुई थी और अब यह आयत भी { وَهُمْ بِرَبِّهِمْ يَعْدِلُوْنَ} के अल्फ़ाज़ पर ख़त्म हो रही है। यानि आख़िरत के यह मुन्किर इतना कुछ सुनने के बावजूद भी किस क़द्र दीदा दिलेरी के साथ शिर्क पर डटे हुए हैं। इन्हें अल्लाह के हुज़ूर हाज़री का कुछ भी खौफ़ महसूस नहीं हो रहा और जिसको चाहते हैं अल्लाह के बराबर कर देते हैं।

आयत 151 से 154 तक

قُلْ تَعَالَوْا اَتْلُ مَا حَرَّمَ رَبُّكُمْ عَلَيْكُمْ اَلَّا تُشْرِكُوْا بِهٖ شَيْـًٔا وَّبِالْوَالِدَيْنِ
اِحْسَانًا ۚ وَلَا تَقْتُلُوْٓا اَوْلَادَكُمْ مِّنْ اِمْلَاقٍ ۭ نَحْنُ نَرْزُقُكُمْ وَاِيَّاهُمْ ۚ وَلَا تَقْرَبُوا
الْفَوَاحِشَ مَا ظَهَرَ مِنْهَا وَمَا بَطَنَ ۚ وَلَا تَقْتُلُوا النَّفْسَ الَّتِيْ حَرَّمَ اللّٰهُ اِلَّا بِالْحَقِّ ۭ
ذٰلِكُمْ وَصّٰىكُمْ بِهٖ لَعَلَّكُمْ تَعْقِلُوْنَ ۝ وَلَا تَقْرَبُوْا مَالَ الْيَتِيْمِ اِلَّا بِالَّتِيْ هِىَ
اَحْسَنُ حَتّٰى يَبْلُغَ اَشُدَّهٗ ۚ وَاَوْفُوا الْكَيْلَ وَالْمِيْزَانَ بِالْقِسْطِ ۚ لَا نُكَلِّفُ نَفْسًا اِلَّا
وُسْعَهَا ۚ وَاِذَا قُلْتُمْ فَاعْدِلُوْا وَلَوْ كَانَ ذَا قُرْبٰى ۚ وَبِعَهْدِ اللّٰهِ اَوْفُوْا ۭ ذٰلِكُمْ وَصّٰىكُمْ
بِهٖ لَعَلَّكُمْ تَذَكَّرُوْنَ ۝ وَاَنَّ هٰذَا صِرَاطِيْ مُسْتَقِيْمًا فَاتَّبِعُوْهُ ۚ وَلَا تَتَّبِعُوا
السُّبُلَ فَتَفَرَّقَ بِكُمْ عَنْ سَبِيْلِهٖ ۭ ذٰلِكُمْ وَصّٰىكُمْ بِهٖ لَعَلَّكُمْ تَتَّقُوْنَ ۝ ثُمَّ
اٰتَيْنَا مُوْسَى الْكِتٰبَ تَمَامًا عَلَى الَّذِيْٓ اَحْسَنَ وَتَفْصِيْلًا لِّكُلِّ شَيْءٍ وَّهُدًى
وَّرَحْمَةً لَّعَلَّهُمْ بِلِقَاۗءِ رَبِّهِمْ يُؤْمِنُوْنَ ۝

आयत 151

قُلْ تَعَالَوْا اَتْلُ مَا حَرَّمَ رَبُّكُمْ عَلَيْكُمْ

"कहिये आओ मैं तुम्हें सुनाऊँ कि तुम्हारे रब ने तुम पर क्या चीज़ें हराम की हैं"

तुम लोग जब चाहते हो किसी बकरी को हराम क़रार दे देते हो, कभी ख़ुद ही किसी ऊँट को मोहतरम ठहरा लेते हो, और इस पर मुस्तज़ाद (रिझाना) यह कि फिर अपनी इन ख़ुराफ़ात को अल्लाह की तरफ मंसूब कर देते हो। आओ मैं तुम्हें वाज़ेह तौर पर बताऊँ कि अल्लाह ने असल में किन चीज़ों को मोहतरम ठहराया है, ममनूअ और हराम चीज़ों के बारे में अल्लाह के क्या अहकाम हैं और इस सिलसिले में उसने क्या-क्या हुदूद व क़ैद मुक़र्रर की हैं। यह मज़मून तफ़सील के साथ सूरह बनी इसराइल में आया है। वहाँ इन अहकाम की तफ़सील में पूरे दो रुकूअ (तीसरा और चौथा) नाज़िल हुए हैं। एक तरह से उन्ही अहकाम का खुलासा यहाँ इन आयात में बयान हुआ है। शरीअत के बुनियादी अहकाम दरअसल ज़रूरत और हिकमते इलाही के मुताबिक़ क़ुरान हकीम में मुख्तलिफ़ जगहों पर मुख्तलिफ़ अन्दाज़ में वारिद हुए हैं। सूरतुल बक़रह (दसवें रुकूअ) में जहाँ बनी इसराइल से मीसाक़ (क़सम) लेने का ज़िक्र आया है वहाँ दीन के असासी निकात भी बयान हुए हैं। फिर इसके बाद शरई अहकाम की कुछ तफ़सील हमें सूरतुन्निसा में मिलती है। उसके बाद यहाँ इस सूरत में और फिर इन्ही अहकाम की तफ़सील सूरह बनी इसराइल में है।

اَلَّا تُشْرِكُوْا بِهٖ شَيْـًٔا وَّبِالْوَالِدَيْنِ اِحْسَانًا ۚ

"यह कि किसी शय को उसका शरीक ना ठहराओ और वालिदैन के साथ हुस्ने सुलूक करो।"

यानि सबसे पहले तो अल्लाह तआला ने अपने साथ शिर्क को हराम ठहराया है और दूसरे नंबर पर वालिदैन के हुक़ूक़ में कोताही हराम क़रार दी है। क़ुरान हकीम में यह तीसरा मक़ाम है जहाँ हुक़ूक़ अल्लाह के फ़ौरन बाद हुक़ूक़ुल वालिदैन का तज़किरा आया है। इससे पहले सुरतूल बक़रह आयत 83 और सूरतुन्निसा आयत 36 में वालिदेन के हुक़ूक़ का ज़िक्र अल्लाह के हुक़ूक़ के फ़ौरन बाद किया गया है।

وَلَا تَقْتُلُوْٓا اَوْلَادَكُمْ مِّنْ اِمْلَاقٍ ۭ نَحْنُ نَرْزُقُكُمْ وَاِيَّاهُمْ ۚ

"और अपनी औलाद को क़त्ल ना करो तंगदस्ती के खौफ़ से, हम तुम्हें भी रिज़्क़ देते हैं और उन्हें भी (देंगे)।"

وَلَا تَقْرَبُوا الْفَوَاحِشَ مَا ظَهَرَ مِنْهَا وَمَا بَطَنَ

"और बेहयाई के कामों के क़रीब भी मत जाओ, ख्वाह वह ज़ाहिर हों या ख़ुफ़िया।"

وَلَا تَقْتُلُوا النَّفْسَ الَّتِيْ حَرَّمَ اللّٰهُ اِلَّا بِالْحَقِّ

"और मत क़त्ल करो उस जान को जिसे अल्लाह ने मोहतरम ठहराया है मगर हक़ के साथ।"

बुनियादी तौर पर अल्लाह तआला ने हर इंसानी जान को मोहतरम ठहराया है। लिहाज़ा किसी उसूल, हक़ और क़ानून के तहत ही इंसानी जान का क़त्ल हो सकता है। क़त्ले अम्द के बदले में क़त्ल, क़त्ले मुर्तद, मुस्लमान ज़ानी या ज़ानिया (अगर शादीशुदा हों) का क़त्ल, हर्बी (जंगी) काफ़िर वगैरह का क़त्ल। यह इंसानी क़त्ल की चंद जायज़ और क़ानूनी सूरतें हैं।

ذٰلِكُمْ وَصّٰىكُمْ بِهٖ لَعَلَّكُمْ تَعْقِلُوْنَ ﴿۱۵۱﴾

"यह बातें हैं जिनकी अल्लाह तुम्हें वसीयत कर रहा है ताकि तुम अक़्ल से काम लो।"

आयत 152

وَلَا تَقْرَبُوْا مَالَ الْيَتِيْمِ اِلَّا بِالَّتِيْ هِيَ اَحْسَنُ حَتّٰى يَبْلُغَ اَشُدَّهٗ

"और यतीम के माल के करीब मत फटको, मगर बेहतरीन तरीक़े से (उसके माल की हिफ़ाज़त करो) यहाँ तक कि वह अपनी जवानी को पहुँच जाए।"

यतीम के माल को हड़प करना या अपना रद्दी माल उसके माल में मिला कर उसके अच्छे माल पर क़ब्ज़ा करने का हीला (छल-कपट) करना भी हराम है। बुनियादी तौर पर तो यह मक्की दौर के अहकाम हैं, लेकिन यतीमों के हुक़ूक़ की अहमियत के पेशेनज़र मदनी सूरतों में भी इस बारे में अहकाम आये हैं, मसलन सूरतुल बक़रह आयात 220 और सूरतुन्निसा आयात 2 में भी यतीमों के अमवाल का ख्याल रखने की ताकीद की गयी है, जो इससे क़ब्ल हम पढ़ चुके हैं।

وَاَوْفُوا الْكَيْلَ وَالْمِيْزَانَ بِالْقِسْطِ ۚ لَا نُكَلِّفُ نَفْسًا اِلَّا وُسْعَهَا ۚ

"और पूरा करो नाप और तोल को अद्ल के साथ। हम नहीं ज़िम्मेदार ठहराएँगे किसी भी जान को मगर उसकी वुसअत (हिम्मत) के मुताबिक़।"

यानि बगैर किसी इरादे के अगर कोई कमी-पेशी हो जाये तो इस पर गिरफ़्त नहीं। जैसे दुआ के लिये हमें यह कलिमात (सूरतुल बक़रह, 286) सिखाये गये हैं: {رَبَّنَا لَا تُؤَاخِذْنَآ اِنْ نَّسِيْنَآ اَوْ اَخْطَاْنَا} "ऐ हमारे रब! अगर हम भूल जाएँ या हमसे खता हो जाये तो हमसे मुवाख़्ज़ा ना करना।" लेकिन अगर जान-बूझ कर ज़रा सी भी डंडी मारी तो वह क़ाबिले गिरफ़्त है। इसलिये कि अमलन मअसियत का इरतकाब करना दरहक़ीक़त इस बात का सबूत है कि या तो तुम्हें आख़िरत का यक़ीन नहीं है या फिर यह यक़ीन नहीं है कि अल्लाह तुम्हें देख रहा है। गोया अम्दन ज़रा सी मनफ़ी जम्बिश में भी ईमान की नफ़ी का अह्तमाल है।

وَاِذَا قُلْتُمْ فَاعْدِلُوْا وَلَوْ كَانَ ذَا قُرْبٰى ۚ وَبِعَهْدِ اللّٰهِ اَوْفُوْا ۭ

"और जब भी बात करो तो अद्ल (की बात) करो, ख्वाह क़राबतदार ही (का मामला) हो, और अल्लाह के अहद को पूरा करो।"

तुम्हारी बात-चीत खरी और इन्साफ़ पर मब्नी हो। इसमें जानबदारी नहीं होनी चाहिये, चाहे क़राबतदारी ही का मामला क्यों ना हो। इसी तरह अल्लाह के नाम पर, अल्लाह के हवाले से, अल्लाह की क़सम खाकर जो भी अहद किया जाये उसको भी पूरा करो। जैसे اِيَّاكَ نَعْبُدُ وَاِيَّاكَ نَسْتَعِيْنُ भी एक अहद है जो हम अल्लाह से करते हैं। हर इन्सान ने दुनिया में आने से पहले भी अल्लाह से एक अहद किया था, जिसका ज़िक्र सूरतुल आराफ़ (आयात

127) में मिलता है। इस तरह रोज़मर्रा की ज़िन्दगी में भी बहुत से अहद होते हैं जिनको पूरा करना ज़रूरी है।

ذٰلِكُمْ وَصّٰىكُمْ بِهٖ لَعَلَّكُمْ تَذَكَّرُوْنَ ﴿١٥٢﴾

"यह हैं (वह चीज़ें) जिनका अल्लाह तुम्हें हुक्म कर रहा है ताकि तुम नसीहत अख़ज़ (हासिल) करो।"

यह वह चीज़ें हैं जो दीन में अहमियत की हामिल और इंसानी किरदार की अज़मत की अलामत हैं। यह इंसानी तमद्दुन और अख्लाक़ियात की बुनियादें हैं।

आयत 153

وَاَنَّ هٰذَا صِرَاطِيْ مُسْتَقِيْمًا فَاتَّبِعُوْهُ ۚ

"और यह कि यही मेरा सीधा रास्ता है, पस तुम इसकी पैरवी करो।"

दीन के असल उसूल तो वह हैं जो हम बयान कर रहे हैं। तुम्हारे खुद साख्ता तौर-तरीक़े तो गोया ऐसी पगडंडियाँ हैं जिनका सिराते मुस्तक़ीम से कोई ताल्लुक़ नहीं। सिराते मुस्तक़ीम तो सिर्फ़ वह है जिस पर हमारा रसूल ﷺ हमारे बताये हुए तरीक़े के मुताबिक़ चल रहा है।

وَلَا تَتَّبِعُوا السُّبُلَ فَتَفَرَّقَ بِكُمْ عَنْ سَبِيْلِهٖ ۚ

"और (इस सिराते मुस्तक़ीम को छोड़ कर) दूसरे रास्तों पर ना पड़ जाओ कि वह तुम्हें अल्लाह की राह से भटका कर मुन्तशिर कर देंगे।"

यानि अगर तुम खुद साख्ता मुख्तलिफ़ पगडंडियों पर चलने की कोशिश करोगे तो सीधे रास्ते से भटक जाओगे। लिहाज़ा तुम सब रास्तों को छोड़ कर स्वाअस्सबील पर क़ायम रहो।

ذٰلِكُمْ وَصّٰىكُمْ بِهٖ لَعَلَّكُمْ تَتَّقُوْنَ ﴿١٥٣﴾

"यह हैं वह बातें जिनकी अल्लाह तुम्हें वसीयत कर रहा है ताकि तुम तक़वा इख्तियार करो।"

आयत 154

ثُمَّ اٰتَيْنَا مُوْسَى الْكِتٰبَ تَمَامًا عَلَى الَّذِيْٓ اَحْسَنَ وَتَفْصِيْلًا لِّكُلِّ شَيْءٍ وَّهُدًى وَّرَحْمَةً

"फिर हमने मूसा को किताब दी थी अपनी नेअमत पूरी करने के लिये अहसान की रविश इख्तियार करने वाले पर और (उसमें थी) हर शय की तफ़सील और हिदायत और रहमत"

हज़रत अब्दुल्लाह बिन अब्बास रज़ि. के नज़दीक सूरह बनी इसराइल के तीसरे और चौथे रुकूअ में जो अहकाम हैं वह तौरात के "अहकामे अशरा" (Ten Commandments) का ही खुलासा है।

لَّعَلَّهُمْ بِلِقَآءِ رَبِّهِمْ يُؤْمِنُوْنَ ﴿١٥٤﴾

"ताकि वह अपने रब के हुज़ूर हाज़िरी पर पूरा यक़ीन रखें।"

आयत 155 से 165 तक

وَهٰذَا كِتٰبٌ اَنْزَلْنٰهُ مُبٰرَكٌ فَاتَّبِعُوْهُ وَاتَّقُوْا لَعَلَّكُمْ تُرْحَمُوْنَ ﴿١٥٥﴾ اَنْ تَقُوْلُوْٓا اِنَّمَآ اُنْزِلَ الْكِتٰبُ عَلٰى طَآئِفَتَيْنِ مِنْ قَبْلِنَا ۪ وَاِنْ كُنَّا عَنْ دِرَاسَتِهِمْ لَغٰفِلِيْنَ ﴿١٥٦﴾ اَوْ تَقُوْلُوْا لَوْ اَنَّآ اُنْزِلَ عَلَيْنَا الْكِتٰبُ لَكُنَّآ اَهْدٰى مِنْهُمْ ۚ فَقَدْ جَآءَكُمْ بَيِّنَةٌ مِّنْ رَّبِّكُمْ وَهُدًى وَّرَحْمَةٌ ۚ فَمَنْ اَظْلَمُ مِمَّنْ كَذَّبَ بِاٰيٰتِ اللّٰهِ وَصَدَفَ عَنْهَا ۭ سَنَجْزِي

اَنۡ تَقُوۡلُوۡۤا اِنَّمَاۤ اُنۡزِلَ الۡكِتٰبُ عَلٰى طَآئِفَتَيۡنِ مِنۡ قَبۡلِنَا ۪

"मबादा तुम यह कहो कि किताब तो बस उतारी गयी थी हमसे पहले के दो गिरोहों पर"

यह बिल्कुल सूरतुल मायदा की आयत 19 वाला अंदाज़ है। वहाँ फ़रमाया गया था: { اَنۡ تَقُوۡلُوۡا مَا جَآءَنَا مِنۡۢ بَشِيۡرٍ وَّلَا نَذِيۡرٍ } "मबादा तुम यह कहो कि हमारे पास तो कोई बशीर और नज़ीर आया ही नहीं था।" और इस अह्तमाल को रद्द करने के लिये फ़रमाया गया: { فَقَدۡ جَآءَكُمۡ بَشِيۡرٌ وَّنَذِيۡرٌ ؕ } "पस आ गया है तुम्हारे पास बशीर और नज़ीर।" कि हमने अपने आखरी रसूल ﷺ को भेज दिया है आखरी किताबे हिदायत देकर ताकि तुम्हारे ऊपर हुज्जत तमाम हो जाये। लेकिन वहाँ इस हुक्म के मुख़ातिब अहले किताब थे और अब वही बात यहाँ मुशरिकीन को इस अंदाज़ में कही जा रही है कि हमने यह किताब उतार दी है जो सरापा खैर व बरकत है, ताकि तुम रोज़े क़यामत यह ना कह सको कि अल्लाह की तरफ़ से किताबें तो यहूदियों और ईसाइयों पर नाजिल हुई थीं, हमें तो कोई किताब दी ही नहीं गयी, हमसे मुआख़ज़ा काहे का?

وَاِنۡ كُنَّا عَنۡ دِرَاسَتِهِمۡ لَغٰفِلِيۡنَ ۙ

"और हम तो इसके पढ़ने-पढ़ाने से गाफ़िल ही रहे।"

और वहाँ यह ना कह सको कि तौरात तो इब्रानी ज़बान में थी, जबकि हमारी ज़बान अरबी थी। आखिर हम कैसे जानते कि इस किताब में क्या लिखा हुआ था। लिहाज़ा ना तो हम पर कोई हुज्जत है और ना ही हमारे मुहासबे का कोई जवाज़ है।

आयत 157

الَّذِيۡنَ يَصۡدِفُوۡنَ عَنۡ اٰيٰتِنَا سُوۡٓءَ الۡعَذَابِ بِمَا كَانُوۡا يَصۡدِفُوۡنَ ۝۱۵۷ هَلۡ يَنۡظُرُوۡنَ اِلَّاۤ اَنۡ تَاۡتِيَهُمُ الۡمَلٰٓئِكَةُ اَوۡ يَاۡتِىَ رَبُّكَ اَوۡ يَاۡتِىَ بَعۡضُ اٰيٰتِ رَبِّكَ ؕ يَوۡمَ يَاۡتِىۡ بَعۡضُ اٰيٰتِ رَبِّكَ لَا يَنۡفَعُ نَفۡسًا اِيۡمَانُهَا لَمۡ تَكُنۡ اٰمَنَتۡ مِنۡ قَبۡلُ اَوۡ كَسَبَتۡ فِىۡۤ اِيۡمَانِهَا خَيۡرًا ؕ قُلِ انۡتَظِرُوۡۤا اِنَّا مُنۡتَظِرُوۡنَ ۝۱۵۸ اِنَّ الَّذِيۡنَ فَرَّقُوۡا دِيۡنَهُمۡ وَكَانُوۡا شِيَعًا لَّسۡتَ مِنۡهُمۡ فِىۡ شَىۡءٍ ؕ اِنَّمَاۤ اَمۡرُهُمۡ اِلَى اللّٰهِ ثُمَّ يُنَبِّئُهُمۡ بِمَا كَانُوۡا يَفۡعَلُوۡنَ ۝۱۵۹ مَنۡ جَآءَ بِالۡحَسَنَةِ فَلَهٗ عَشۡرُ اَمۡثَالِهَا ۚ وَمَنۡ جَآءَ بِالسَّيِّئَةِ فَلَا يُجۡزٰۤى اِلَّا مِثۡلَهَا وَهُمۡ لَا يُظۡلَمُوۡنَ ۝۱۶۰ قُلۡ اِنَّنِىۡ هَدٰٮنِىۡ رَبِّىۡۤ اِلٰى صِرَاطٍ مُّسۡتَقِيۡمٍ ۚ دِيۡنًا قِيَمًا مِّلَّةَ اِبۡرٰهِيۡمَ حَنِيۡفًا ۚ وَمَا كَانَ مِنَ الۡمُشۡرِكِيۡنَ ۝۱۶۱ قُلۡ اِنَّ صَلَاتِىۡ وَنُسُكِىۡ وَمَحۡيَاىَ وَمَمَاتِىۡ لِلّٰهِ رَبِّ الۡعٰلَمِيۡنَ ۝۱۶۲ لَا شَرِيۡكَ لَهٗ ۚ وَبِذٰلِكَ اُمِرۡتُ وَاَنَا اَوَّلُ الۡمُسۡلِمِيۡنَ ۝۱۶۳ قُلۡ اَغَيۡرَ اللّٰهِ اَبۡغِىۡ رَبًّا وَّهُوَ رَبُّ كُلِّ شَىۡءٍ ؕ وَلَا تَكۡسِبُ كُلُّ نَفۡسٍ اِلَّا عَلَيۡهَا ۚ وَلَا تَزِرُ وَازِرَةٌ وِّزۡرَ اُخۡرٰى ۚ ثُمَّ اِلٰى رَبِّكُمۡ مَّرۡجِعُكُمۡ فَيُنَبِّئُكُمۡ بِمَا كُنۡتُمۡ فِيۡهِ تَخۡتَلِفُوۡنَ ۝۱۶۴ وَهُوَ الَّذِىۡ جَعَلَكُمۡ خَلٰٓئِفَ الۡاَرۡضِ وَرَفَعَ بَعۡضَكُمۡ فَوۡقَ بَعۡضٍ دَرَجٰتٍ لِّيَبۡلُوَكُمۡ فِىۡ مَاۤ اٰتٰٮكُمۡ ؕ اِنَّ رَبَّكَ سَرِيۡعُ الۡعِقَابِ ۖ وَاِنَّهٗ لَغَفُوۡرٌ رَّحِيۡمٌ ۝۱۶۵

आयत 155

وَهٰذَا كِتٰبٌ اَنۡزَلۡنٰهُ مُبٰرَكٌ فَاتَّبِعُوۡهُ وَاتَّقُوۡا لَعَلَّكُمۡ تُرۡحَمُوۡنَ ۝۱۵۵

"और (अब) यह किताब हमने नाज़िल की है बड़ी बा-बरकत, तो तुम इसकी पैरवी करो और तक़वा इख़्तियार करो ताकि तुम पर रहम किया जाये।"

आयत 156

اَوۡ تَقُوۡلُوۡا لَوۡ اَنَّاۤ اُنۡزِلَ عَلَيۡنَا الۡكِتٰبُ لَكُنَّاۤ اَهۡدٰى مِنۡهُمۡ‌ۚ

"या तुम यह कहो कि अगर हम पर किताब नाज़िल की गयी होती तो हम इनसे कहीं बढ़ कर हिदायत याफ़ता होते।"

यानि तुम रोज़े क़यामत यह दावा लेकर ना बैठ जाओ कि इन बेवक़ूफों ने तो अल्लाह की किताबों (तौरात और इंजील) की क़दर ही नहीं की। हमें अल्लाह ने किताब दी होती तो फिर हम बताते कि किताबुल्लाह की क़दर कैसे की जाती है।

فَقَدۡ جَآءَكُمۡ بَيِّنَةٌ مِّنۡ رَّبِّكُمۡ وَهُدًى وَّرَحۡمَةٌ‌ۚ

"तो (ऐ बनी इस्माईल) तुम्हारे पास आ गयी है बय्यिना तुम्हारे रब की तरफ से, और हिदायत और रहमत।"

यानि तुम्हारे पास अल्लाह का रसूल उसकी किताब लेकर आ चुका है जिसमें वाज़ेह और मुस्तहकम अहकाम मौजूद हैं। इस बय्यिना की वज़ाहत सूरतुल बय्यिना की आयात 2 व 3 में इस तरह की गई है: { رَسُوۡلٌ مِّنَ اللّٰهِ } {يَّتۡلُوۡا صُحُفًا مُّطَهَّرَةً } { فِيۡهَا كُتُبٌ قَيِّمَةٌ } "अल्लाह की तरफ़ से एक रसूल जो मुक़द्दस सहीफ़े पढ़ कर सुनाता है, जिनमें बिल्कुल दुरुस्त अहकाम है।"

فَمَنۡ اَظۡلَمُ مِمَّنۡ كَذَّبَ بِاٰيٰتِ اللّٰهِ وَصَدَفَ عَنۡهَا‌ؕ

"तो उससे बढ़ कर ज़ालिम कौन होगा जो अल्लाह की आयात को झुठलाये और उनसे पहलु तहि करे।"

سَنَجۡزِى الَّذِيۡنَ يَصۡدِفُوۡنَ عَنۡ اٰيٰتِنَا سُوۡٓءَ الۡعَذَابِ بِمَا كَانُوۡا يَصۡدِفُوۡنَ

"हम अनक़रीब सज़ा देंगे उन लोगों को जो हमारी आयात से पहलु तहि करते हैं बहुत ही बुरे अज़ाब की, बसबब उनके इस पहलु तहि करने के।"

आयत 158

هَلۡ يَنۡظُرُوۡنَ اِلَّاۤ اَنۡ تَاۡتِيَهُمُ الۡمَلٰٓئِكَةُ اَوۡ يَاۡتِىَ رَبُّكَ اَوۡ يَاۡتِىَ بَعۡضُ اٰيٰتِ رَبِّكَ‌ؕ

"यह लोग किस चीज़ का इन्तेज़ार कर रहे हैं सिवाय इसके कि इनके पास फ़रिश्ते आ जाएँ, या आप ﷺ का रब खुद आ जाये या फिर आप ﷺ के रब की कोई निशानी आ जाए!"

दरअसल यह उन वाक़िआत या अलामात का ज़िक्र है जिनका ज़हूर क़यामत के दिन होना है। जैसे सूरतुल फज्र में फ़रमाया: { وَّجَآءَ رَبُّكَ وَالۡمَلَكُ صَفًّا صَفًّا } (आयत 22) व { وَجِايۡٓءَ يَوۡمَئِذٍۢ بِجَهَنَّمَ ۙ يَوۡمَئِذٍ يَّتَذَكَّرُ الۡاِنۡسَانُ وَاَنّٰى لَهُ الذِّكۡرٰى } (आयत 23) "क़िस्सा-ए-ज़मीन बरसरे ज़मीन" के मिस्दाक़ रोज़े महशर फ़ैसला यहीं इसी ज़मीन पर होगा। यहीं पर अल्लाह का नुज़ूल होगा, यहीं पर फ़रिश्ते परे बाँधे खड़े होंगे और यहीं पर सारा हिसाब-किताब होगा। चुनाँचे इस हवाले से फ़रमाया गया कि क्या यह लोग उस वक़्त का इन्तेज़ार कर रहे हैं जब यह सब अलामात ज़हूर पज़ीर हो जाएँ? लेकिन इन्हें मालूम होना चाहिये:

يَوۡمَ يَاۡتِىۡ بَعۡضُ اٰيٰتِ رَبِّكَ لَا يَنۡفَعُ نَفۡسًا اِيۡمَانُهَا

"जिस दिन आप ﷺ के रब की बाज़ (मखसूस) निशानियाँ ज़ाहिर हो गईं तो फिर किसी ऐसे शख्स को उसका ईमान लाना कुछ फायदा ना देगा"

لَمۡ تَكُنۡ اٰمَنَتۡ مِنۡ قَبۡلُ اَوۡ كَسَبَتۡ فِىۡۤ اِيۡمَانِهَا خَيۡرًا‌ؕ

"जो पहले से ईमान नही ला चुका था या उसने अपने ईमान में कुछ खैर नहीं कमा लिया था।"

दरअसल जब तक गैब का परदा पड़ा हुआ है तब तक ही इस इम्तिहान का जवाज़ है। जब गैब का परदा हट जायेगा तो यह इम्तिहान भी ख़त्म हो जायेगा। उस वक़्त जो सूरतेहाल सामने आयेगी उसमें तो बड़े से बड़ा काफ़िर भी आबिद व ज़ाहिद बनने की कोशिश करेगा। लेकिन जो शख्स यह निशानियाँ ज़ाहिर होने से पहले ईमान नहीं लाया था और ईमान की हालत में आमाले सालेह का कुछ तोशा उसने अपने लिये जमा नहीं कर लिया था, उसके लिये बाद में ईमान लाना और नेक आमाल करना कुछ भी सौदमंद नहीं होगा।

قُلِ انْتَظِرُوْٓا اِنَّا مُنْتَظِرُوْنَ ﴿۱۵۸﴾

"(तो ऐ नबी ﷺ!) कह दीजिये तुम भी इंतेज़ार करो, हम भी इंतेज़ार करते है।"

अब इंतेज़ार करो कि अल्लाह तआला की तरफ़ से तुम्हारे बारे में क्या फ़ैसला होता है।

आयत 159

اِنَّ الَّذِيْنَ فَرَّقُوْا دِيْنَهُمْ وَكَانُوْا شِيَعًا لَّسْتَ مِنْهُمْ فِيْ شَيْءٍ ۭ

"(ऐ नबी ﷺ!) जिन लोगों ने अपने दीन के टुकड़े कर दिये और वह गिरोहों में तक़सीम हो गये आपका उनसे कोई ताल्लुक़ नहीं।"

यह वही "वहदते अदयान" का तस्सवुर है जो सूरतुल बक़रह की आयात 213 में दिया गया है: { كَانَ النَّاسُ اُمَّةً وَّاحِدَةً } कि पहले तमाम लोग एक ही दीन पर थे। फिर लोग सिराते मुस्तक़ीम से मुनहरिफ़ होते गये और मुख्तलिफ़ गिरोहों ने अपने-अपने रास्ते अलग कर लिये। चुनाँचे हुज़ूर ﷺ से फ़रमाया जा रहा है कि जो लोग सिराते मुस्तक़ीम को छोड़ कर अपनी-अपनी खुद साख्ता पगडंडियों पर चल रहे हैं वह सब ज़लालत और गुमराही में पड़े हैं और आप ﷺ का उन गुमराह लोगों से कोई ताल्लुक़ नहीं।

اِنَّمَآ اَمْرُهُمْ اِلَى اللّٰهِ ثُمَّ يُنَبِّئُهُمْ بِمَا كَانُوْا يَفْعَلُوْنَ ﴿۱۵۹﴾

"उनका मामला अल्लाह के हवाले है, फिर वह उन्हें जितला देगा जो कुछ कि वह करते रहे थे।"

आयत 160

مَنْ جَاۗءَ بِالْحَسَنَةِ فَلَهٗ عَشْرُ اَمْثَالِهَا ۚ

"जो शख्स कोई नेकी लेकर आयेगा तो उसे उसका दस गुना अजर मिलेगा।"

وَمَنْ جَاۗءَ بِالسَّيِّئَةِ فَلَا يُجْزٰٓى اِلَّا مِثْلَهَا

"और जो कोई बदी कमा कर लायेगा तो उसे सज़ा नहीं मिलेगी मगर उसी के बराबर"

यह अल्लाह का ख़ास फ़ज़ल है कि बदी की सज़ा बदी के बराबर ही मिलेगी, लेकिन नेकी का अजर बढ़ा-चढ़ा कर दिया जाएगा, दो-दो गुना, चार गुना, दस गुना, सात सौ गुना या अल्लाह तआला इससे भी जितना चाहे बढ़ा दे: { وَاللّٰهُ يُضٰعِفُ لِمَنْ يَّشَاۗءُ ۭ} (आयत 261)

وَهُمْ لَا يُظْلَمُوْنَ ﴿۱۶۰﴾

"और उन पर ज़ुल्म नहीं किया जायेगा।"

उस दिन किसी के साथ ज़्यादती नहीं होगी और किसी की हक़तल्फ़ी नहीं की जायेगी।

अगली दो आयात जो "क़ुल" से शुरू हो रही हैं बहुत अहम हैं। यह हम में से हर एक को याद रहनी चाहिये।

आयत 161

قُلْ اِنَّنِیْ هَدٰىنِیْ رَبِّیْۤ اِلٰی صِرَاطٍ مُّسْتَقِیْمٍ ۚ

"(ऐ नबी ﷺ!) कहिये कि मेरे रब ने तो मुझे हिदायत दे दी है सीधे रास्ते की तरफ़।"

دِیْنًا قِیَمًا مِّلَّةَ اِبْرٰهِیْمَ حَنِیْفًا ۚ وَمَا كَانَ مِنَ الْمُشْرِكِیْنَ ﴿۱۶۱﴾

"वह दीन है सीधा जिसमें कोई टेढ़ नहीं और मिल्लत है इब्राहीम की, जो यक्सु था (अल्लाह की तरफ़) और वह मुशरिकों में से ना था।"

यह खिताब वाहिद के सीगे में बराहेरास्त हुज़ूर ﷺ से है और आप ﷺ की वसातत (माध्यम) से पूरी उम्मत से। ज़रा गौर करें 20 रुकुओं पर मुश्तमिल इस सूरत में एक दफ़ा भी یٰۤاَیُّهَا الَّذِیْنَ اٰمَنُوْۤا के अल्फ़ाज़ के साथ अहले ईमान से खिताब नहीं किया गया। काश कि हम में से हर शख्स इस आयात का मुखातिब बनने की सआदत हासिल कर सके और यह ऐलान कर सके कि मुझे तो मेरे रब ने सीधी राह की तरफ़ हिदायत दे दी है। लेकिन यह तो तभी मुमकिन होगा जब कोई अल्लाह की राहे हिदायत को सिद्क़े दिल से इख़्तियार करेगा। اللهم ربنا اجعلنا منهم- आमीन!

आयत 162

قُلْ اِنَّ صَلَاتِیْ وَنُسُكِیْ وَمَحْیَایَ وَمَمَاتِیْ لِلّٰهِ رَبِّ الْعٰلَمِیْنَ ﴿۱۶۲﴾

"आप ﷺ कहिये मेरी नमाज़, मेरी क़ुर्बानी, मेरी ज़िंदगी और मेरी मौत अल्लाह ही के लिये है जो तमाम जहानों का परवरदिगार है।"

यहाँ दो बार क़ुल कह कर हुज़ूर ﷺ को मुखातिब फ़रमाया गया है और आप ﷺ ही को यह ऐलान करने के लिये कहा जा रहा है, लेकिन आप ﷺ की वसातत से हम में से हर एक को यह हुक्म पहुँच रहा है। काश हम में से हर एक यह ऐलान करने के क़ाबिल हो सके कि मेरी नमाज़, मेरी क़ुर्बानी, मेरा जीना और मेरा मरना अल्लाह के लिये है जो रब्बुल आलामीन है। लेकिन यह तब मुमकिन है जब हम अपनी ज़िन्दगी वाक़िअतन अल्लाह के लिये वक़्फ़ कर दें। दुनियवी ज़िन्दगी की कम से कम ज़रूरियात को पूरा करने के लिये नागुज़ेर हद तक अपना वक़्त और अपनी सलाहियतें ज़रूर सर्फ़ करें, लेकिन इस सारी तगो-दौ (मेहनत) को असल मक़सूदे ज़िन्दगी ना समझें, बल्कि असल मक़सूदे ज़िन्दगी अल्लाह की इताअत और अक़ामते दीन की जद्दो-जहद ही को समझें।

आयत 163

لَا شَرِیْكَ لَهٗ ۚ وَبِذٰلِكَ اُمِرْتُ وَاَنَا اَوَّلُ الْمُسْلِمِیْنَ ﴿۱۶۳﴾

"उसका कोई शरीक नहीं, और मुझे तो इसी का हुक्म हुआ है और सबसे पहला फ़रमा बरदार मैं ख़ुद हूँ।"

आयत 164

قُلْ اَغَیْرَ اللّٰهِ اَبْغِیْ رَبًّا وَّهُوَ رَبُّ كُلِّ شَیْءٍ ؕ

"कहिये क्या मैं अल्लाह के सिवा कोई और रब तलाश करूँ जबकि वही हर शय का रब है।"

وَلَا تَكْسِبُ كُلُّ نَفْسٍ اِلَّا عَلَیْهَا ۚ وَلَا تَزِرُ وَازِرَةٌ وِّزْرَ اُخْرٰی ۚ

"और नहीं कमाती कोई जान (कुछ भी) मगर उसी के ऊपर होगा उसका वबाल, और नहीं उठाएगी कोई बोझ उठाने वाली किसी दूसरे के बोझ को।"

उस दिन हर एक को अपनी-अपनी गठरी खुद ही उठानी होगी, कोई दूसरा वहाँ मदद को नहीं पहुँचेगा। यहाँ पर लफ़्ज़ नफ्स "जान" के मायने में आया

है, यानि कोई जान किसी दूसरी जान के बोझ को नहीं उठाएगी, बल्कि हर एक को अपनी ज़िम्मेदारी और अपने हिसाब-किताब का सामना ब-नफ्से नफ़ीस खुद करना होगा।

"फिर अपने रब ही की तरफ़ तुम सबका लौटना है, फिर वह तुम्हे जतला देगा जिन चीज़ों में तुम इख्तिलाफ़ करते रहे थे।"

ثُمَّ إِلَىٰ رَبِّكُم مَّرْجِعُكُمْ فَيُنَبِّئُكُم بِمَا كُنتُمْ فِيهِ تَخْتَلِفُونَ ﴿١٦٤﴾

आयत 165

"और वही है जिसने तुम्हें ज़मीन का खलीफ़ा बनाया"

وَهُوَ الَّذِي جَعَلَكُمْ خَلَائِفَ الْأَرْضِ

खलीफ़ा बनाना एक तो इस मफ़हूम में है कि जो खिलाफ़त हज़रत आदम अलै. को दी गयी थी उसका हिस्सा बिल्क़ुव्वत (potentially) तमाम इन्सानों को मिला है, और जो भी शख्स अल्लाह का मुतीअ और फ़रमाबरदार होकर अल्लाह को अपना हाकिम और बादशाह मान ले तो वह गोया उसकी खिलाफ़त का हक़दार हो गया। خَلَائِفَ الْأَرْضِ का दूसरा मफ़हूम यह है कि तुम्हें ज़मीन में एक-दूसरे का जानशीन बनाया। एक नस्ल के बाद दूसरी नस्ल और एक क़ौम के बाद दूसरी क़ौम आती है और इंसानी विरासत नस्ल दर नस्ल और क़ौम दर क़ौम मुन्तक़िल होती जाती है। यही फ़लसफ़ा इस सूरत की आयात 133 में भी बयान हुआ है।

"और उसने तुम में से बाज़ के दरजों को बाज़ पर बुलंद कर दिया"

وَرَفَعَ بَعْضَكُمْ فَوْقَ بَعْضٍ دَرَجَاتٍ

इस दुनियवी ज़िन्दगी में अल्लाह ने अपनी मशीयत के मुताबिक़ किसी को इल्म दिया है, किसी को हिकमत दी है, किसी को ज़हानत में फ़ज़ीलत दी है, किसी को जिस्मानी ताक़त में बरतरी दी है, किसी को सेहत-ए-जिस्मानी बेहतर दी है और किसी को हुस्ने जिस्मानी में दूसरों पर फौक़ियत दी है। यानि मुख्तलिफ़ अंदाज़ में उसने हर एक को अपने फ़ज़ल से नवाज़ा है और मुख्तलिफ़ इन्सानों के दरजात व मरातिब में अपनी हिकमत के तहत फ़र्क़ व तफ़ावत भी बरक़रार रखा है।

"ताकि तुम्हें आज़माए उसमें जो कुछ उसने तुम्हें बख्शा है।"

لِّيَبْلُوَكُمْ فِي مَا آتَاكُمْ

यानि दुनिया की तमाम नेअमतें इन्सान को बतौर आज़माइश दी जाती हैं। بَلَا, يَبْلُوْ के मायने हैं आज़माना और जाँचना। ابتلاء (ब-मायने इम्तिहान और आज़माइश) इसी से बाब इफ़्तिआल है।

"यक़ीनन आपका रब सज़ा देने में भी बहुत तेज़ है और यक़ीनन वह गफ़ूर और रहीम भी है।"

إِنَّ رَبَّكَ سَرِيعُ الْعِقَابِ ۖ وَإِنَّهُ لَغَفُورٌ رَّحِيمٌ ﴿١٦٥﴾

بارک الله لی و لکم فی القرآن العظیم و نفعنی و ایا کم بالآیات والذکر الحکیم۔